RASKUSUMAKAR

रसकुसुमाकर।

OR

A BOOK ON RHETORIC

अर्थात्

साहित्य का एक अनूठा ग्रन्थ।

BY

THE HON'BLE MAHARAJA PRATAP NARAYAN SINGH BAHADUR

OF AYODHYA:

MEMBER OF THE IMPERIAL LEGISLATIVE COUNCIL; LIFE PRESIDENT OF THE TALUQDAR'S BRITISH INDIAN ASSOCIATION; MEMBER OF THE ROYAL ASIATIC SOCIETY, CALCUTTA, &C. &C.

भारत साम्राज्यीय व्यवस्थापक सभा, तथा 'रायल एशियाटिक सुसाइटी कलकत्ता' के सभासद और अवध 'ब्रिटिश इण्डियन असोसिएशन' के यावज्जीव सभापति

श्रीमनमहाराजाधिराज द्विजराज

आनरेबिल श्रीप्रतापनारायणसिंह जू देव

अयोध्यानरेश वीरेश विरचित ॥

संगीत साहित्य कलाविहीनः।
साक्षात् पशुः पुच्छविषाणहीनः ॥

Printed at the "INDIAN PRESS," Allahabad: 1894.

सन् १८९४ ई०

E. R. MARSHALL & CO., 23, WELLESLEY ST., CALCUTTA.

आनरेबल श्रीमन्महाराजप्रतापनारायणसिंह

अयोध्या नरेश.

भूमिका।

सघनघनावरणविमुक्तव्योमवीथीविहारिविधुविपुलवैभव दायिनी,फुल्लेन्दीवरपरागलुब्धभ्रमरझांकारकारिणी, विकसित कुमुदकासकह्लारमिषदिगङ्गनाविशदहासविकासिनी, मंजुल मराल,सरससारस,कलितकोककूजितसारसीसुखमासम्वर्द्धिनी, कम्पितवामाञ्चलचन्दनाचलधीरसमीरसञ्चालिनी, प्रभाकर प्रतापप्रमार्जितपंकिलपथप्रदर्शनप्रोत्तेजित पृथ्वीपतिप्रस्थान प्रोत्साहिनी, सरित्संकोचिनी, शस्यशालिनी शरद् परारि वर्ष अयोध्यापुरी के पावन प्रदेश मे प्रादुर्भूत हो अयोध्या नरेश वीरेश को भी विजया दशमी दर्बार समनन्तर निज राज्य निरीक्षण निमित्त यात्रोत्सुक किया। प्रजा के भाग जगे, क्योंकि कहा है,—

"सेवक सदन स्वामि आगमनू।
मङ्गल मूल अमङ्गल दमनू॥"

अब प्रत्येक प्रादेशिक करसंचयकारियों (तहसीलदारों) कोभी अपने प्रवन्धपाटव दिखानेका शुभावसर मिला. चटपट अमराइयों की स्वच्छ संस्थली मे भली भाँति श्रेणीवद्ध विस्तीर्णविशदपटमण्डपवितान को विविधातिथ्यद्रव्यपूरित,

सकलशकदलीस्तम्भमण्डित, तथा अशोकाम्रपल्लवसमासक्त तोरणालंकृत किया; जिसके संमुखही स्वामिस्वागत संप्रदानार्थ ग्रामवधूटियाँ आचारलाजमोक्षण करती गाती थीं—

" देखो, देखो, आज बड़े भागन हमारे,
इत सोभन समाज महराज मेरे आए री!"

एवम् नगराहूत वारयोषितायें आसावरी, टोड़ी और भैरवी की लय अलापती थीं. प्रत्येक प्रदेश की पृथक् २ शोभा थी. निदान ऐसे ही प्रति स्थानो पर प्रमोदभागी होते हुए अखिलराज्यप्रबन्ध मे दत्तचित्त परिकरसहित महाराज दो तीन मास के अनन्तर निज जन्मभूमि पूर्वराजधानी शाहगंज को पधारे; उधर ऋतुराज भी अपना साज समाज सुधारे स्वागत को सन्नद्ध था; यथा,—

" सबै फूल फूले, फबे चारु सोहैं,
भ्रमै भौंर भूले, भले चित्त मोहैं।
बहैं मन्द हीं मन्द हीं वायु रूरे,
सुवासे, सबै भाँति सों सोभ पूरे॥
जयन्ती, जपा जाति के वृच्छ नाना,
धरे हैं चहूँ कोद सों मोद बाना।
सुबेली नवेलीन को रूप राचैं,
लता लोलिनी लोल ह्वै नाच नाचैं॥
कहूँ माधवी, मल्लिका को विताना,
झरैं फूल लाजानि के व्याज मानो।
कहूँ बेनु हूँ बेनु सी लै बजावैं,
मलिन्दो चहूँ मत्त ह्वै राग गावैं॥"

जिस प्रकर्ष प्राकृतिक सुखमा को देख अखिल जीव लोक मे मदन का संचार हुआ. पशुपक्षिप्रभृति भी अपने वार्षिक मदनोत्सव के मनाने मे प्रवृत्त हुए:—

"रमै पच्छिनी सों सबै पच्छ जोरे,
विहंगावली आपने भाय भोरे।
कहूँ कोकिलाली कुहूकैं पुकारैं,
चकोरौ कहूँ सब्द ऊँचे उचारैं॥
कहूँ चातकी सातकी भाव लीन्हे,
जकी सी, चकी सी, चहूँ चित्त दीन्हे।
कहूँ कोक हूँ कोक की कारिका को,
पढ़ावैं भली भाँति सों सारिका को॥"

इधर जो नवीन पत्रावलियों की सुहावनी सारी पहिन लोनी लताएँ निज समीपस्थ वृक्षों से ललक कर लपट रही हैं, जिनके नीचे प्रियतम से सटी आनन्दसम्मोहिता सी मनोहर मृगी केलिकला मे भूली वधिक व्याधा के विष से बुझे विशिख को भी नहीं देख पाती है, तो उधर एक कुसुमकलिका का रस ले दूसरी के मधुपान से प्रमत्त मधुकर दक्षिण नायक से भाँवरैं भर रहे हैं. कहीं प्रेम निबन्ध के तत्ववित् चक्रवाक अनुकूल नायक की भाँति अपनी वल्लभा के विभावरीमात्र-वियोग से कातर हो सरसी के समीप कराह रहे हैं, वहीं कामदूतिका विरहनिवेदन कर मानिनी कामिनी को मनाती सी मदन की दुहाई दे रही है,—

"भूलि हूँ कन्त सों ठानबी मान,
सो जानबी बीर बसन्त को बैरी॥"

सुतराम् ऐसी वासन्ती शोभा को देखते भालते शाहगंज के शंकर गढ़ नामक दुर्ग के अभ्यन्तर आ पहुँचे, जिसकी पनियासोत परिखा और प्राचीन प्राकार सन ५७ का स्मरण दिलाते हैं, जबकि—

"जगमगात जग जाहिर जासु कृपान ।
दरसन सिंह महीपति सुवन सुजान ॥
भूपति मानसिंह* कँह को नहिँ मान ?
मानेसि जो नहिँ वाकँह रखेसि न मान ॥
समर सूर पारथ सम, विद्यहिँ सेस ।
प्रवल प्रताप जगत जनु अपर दिनेस ॥ "

श्रीमहाराज मानसिंह से प्राप्तपरित्राण अनेक अंगरेजों† के छिपे सुनकर लक्षावधि कोपज्वलित विद्रोहियों ने पूर्वोक्त दुर्ग को परितः प्रतिरोध किया था.

---

* जिन्का पूर्ण उपाधियुक्त नाम यह है—सरकोव सरकशान महाराज सर मानसिंह बहादुर कायम जंग, के. सी. एस. आई. और कविता का नाम "द्विजदेव," है ॥

† जिस विषय मे १२ नवम्बर सन. १८६७ ई० को लखनऊ दर्बार में लार्ड लारेन्स, गवर्नर जेनरल महाशय ने उर्दू भाषा मे यों कहा कि " ऐ महाराज मानसिंह ! मल्लिकःमोअ्‌ज़्ज़मः फ़रमाफ़रमाय इंग्लिस्तान व हिन्दोस्तान ने इन्तिज़ामे मुल्के अवध के वाज़ उमूरे उज़्ज़ाम की निस्वत तुम्हारे कुल खिदमात सुनकर मुक़र्रर होना तुम्हारा ऊपर मनसव रईस दिलावर तवक़ आला सितारे हिन्द के मुनासिव समझा. लिहाज़ा हस्व इरशाद जनाबे ममदूहा के अव हमने ये तमग़ात तुम्हे अता किये, और मुमालिक इंग्लिस्तान व हिन्दोस्तान मे वखिताबे नाइट बैचलर मुश्तहर किया. इस वक्त इस दर्बार मे मौक़ा जानकर रूवरू कसाने मोअज़्ज़ीन और अफ़्सरान और शुर्फ़ा और और वाशिन्दगान अपने और तुम्हारे मुल्क के ज़िक्र करता हूँ, कि वसवव इस्के कि तुमने हंगामे आग़ाज़े वलवः १८५७ ई० के ज़ियादः पचास आदमी से कौम अंग्रेज़ के, जिस्मे अक्सर बेकस औरतैं और लड़के थे, अपने क़िलः मे फ़ैज़ाबाद के पनाह दी; कि जिस्के सवव से, वफ़ज़्ले ख़ुदा, तुम उन्के ज़िन्दगी के वायस हुए, मुस्तहक़ एज़ाज़ और तहसीन के हो" । जिस्का अंग्रेज़ी मे आशय यों है.—You have, in my estimation, special claim to honor and gratitude, inasmuch as, at the commencement of the mutiny in 1857, you gave refuge to more than 50 English people in your fort at Fyzabad, most of whom were helpless women and children, and thus by God's mercy, were instrumental in saving all their lives.

देखो! वह दक्षिण फाटक के बाहर की ढही हुई गढ़ी अब तक स्मारकस्तम्भरूप देखपड़रही है, जहाँ से दुर्ग पर अनेक बार गोला गोलियों की निरन्तर वर्षा होते देख कर स्वामिशासन विना भी स्वल्पसैनिकसहित सेनापतिप्रधान शीतलासिंह ने सहसाक्रमण कर वैरिदल विदलित किया था; जिस्के सुनते ही स्पर्धाप्रयुक्त अपर सेनानी वलिकरणसिंह ने उत्तर द्वार से निकल कर करालकालसदृश मुखव्यादान किए हुए उस विशाल शतघ्नी के ज्वलितज्वालाभिमुख धावा कर उसै वलात् विद्रोहियों से छीन लिया,जो अद्यावधि पूर्ववृत्त स्मरणार्थ अयोध्याराजसदन मे सुरक्षित है ॥

यह वही आयुधागार है, जहाँ शूल, शतघ्नी और शस्त्र ढलते, एवम् कवच, कृपाण और झिल्लिम बनते थे; यह वही औषधालय है, जहाँ कि रणक्षेत्र से घायल सैनिक, बिना सिसिकते, जर्राहों से टाँके टँकाते थे; यह वही लक्ष्मीसागर है, जहाँ शूर सामन्त संग्रामशोणितार्द्र धूलिधूसरित केश को धोते और शीतलसमीरसेवन से समरश्रम को दूर करते थे; यह वही रंगभूमि है, जहाँ समस्त सेनासुभट सदैव शस्त्र-कलाकौशल्य दिखाते और अपने हस्तलाघव पर प्रभु को प्रसन्न कर प्रचुर पुरस्कार पाते थे;—अहा! यह वही रम्यो-पवन है जिस्मे वसन्त सब से पहिले आता और सब से

पीछे प्रस्थान करता, जहाँ चातकों की चहँकार और कोकिलों की कुहुकार से कानन कूजित हाेता, और जहाँ माधवी, मल्लिका और सेवती की सुगन्ध से सारा नगर सुवासित हाेता था; यह वही सघनलतामण्डप है, जहाँ बैठकर वैकुण्ठ-वासी महाराज अपने मनोगत भावों के लेखनीदूतीद्वारा वोधित करा कलित कविताकामिनी के रिझाते थे; यह वही स्थान है, जहाँ से "शृंगारलतिका" के सौरभ का संचार* हुआ; फिर यहाँ पहुँचने पर "रसकुसुमाकर" का उद्गार हाेना क्या विस्मयकार था; यथा;—

"सघनकुञ्ज, छाया सुखद, सीतल मन्द समीर ।
मन ह्वै जात अजौं वहै वा यमुना के तीर ॥"

सारांश एक दिन वर्त्तमान महाराज ने प्रसंगवश कहा कि, "शृङ्गारलतिकालास्यलालित्य की लालसा रसिकभ्रमरों के तभी हाे सकती है जब कि 'रसकुसुमाकर' के संचार का विस्तार हाे, अर्थात् विना साहित्य के जाने काव्य का यथार्थ सुखानुभव नहीं हाेसकता. यद्यपि इस विषय पर अनेक कवियों ने लेखनी चलाई, किन्तु उन् की शैली उत्तम और उपयोगी नहीं आई; क्योंकि किसी ने आरम्भ ही मे नायक, नायिका की कथा छेड़ अन्त मे रस का पछेड़ किया, ते किसी ने रसभेद

* अर्थात् इसी स्थान पर महाराज मानसिंह ने "शृङ्गार लतिका" और "शृङ्गार चालीसी," आदि कविता के अनूठे ग्रंथ वनाये थे.

को खेद सहित छोड़ नायिका ही की आख्यायिका कह डाली; किसी ने लक्षणो हीं मे ऐसे लचछेदार पद्यप्रबन्ध के निबन्ध किए कि मूल वस्तु ही को भूल गए; योंहीं किसी ने प्राचीन प्रणाली को छोड़ अपनी निराली ही गीत गायी; और किसी ने इसे वागजाल का व्यर्थ जंजाल जान अपनी जान छुड़ायी" ॥

"अतएव इस विषय पर एक ऐसे ग्रन्थ की रचना होनी चाहिये जिस्के आदि ही मे 'रसनिरूपण' अर्थात् उस्के चार अङ्ग स्थायी, संचारी, अनुभाव, और विभाव का पृथक् वर्णन, लक्षण और उदाहरण सहित हो; तत्पश्चात् नायिका और नायक भेद का प्रपंच छेड़ा जाय, क्योंकि ये विभाव के आलम्बनभेद के समनन्तर हैं. इस भाँति जब रस का स्वरूपज्ञान होजाय तव 'रसप्रकार' कहे जाँय, कि उन्के कितने भेद हैं, और अन्त में 'रसप्रादुर्भाव' होने की उपाय वतलाई जाय. जिस्से कि पूर्व ही मे समस्त ग्रन्थ के विषय हस्तामलक हो जाँय, प्रथम कुसुम मे पश्चिमीय भाषा रीत्यनुसार अनुक्रमणिका बनाकर रक्खी जाय, योंहीं लक्षण पद्य मे न रख संक्षिप्त गद्य मे लिखे जाँय, जिस्मे न तो एक शब्द का व्यर्थ प्रयोग और न अनर्थक शब्द का संयोग हो. तथा उदाहरणो को स्वतः निर्म्माण न कर अनेक सत्कवियों की

कविता से संग्रहीत किये जाँय, क्योंकि प्रायः देखा गया है कि यदि एक कवि की कविता वीर रस मे उत्तम होती तो शृंगार रस मे मध्यम, योंहीं जिन्की शृंगार रस की सरस तो वीर रस की नीरस होती है; विशेषतः साहित्य के भेदों को अन्यकविताद्वारा 'काव्यप्रकाश' और 'साहित्यदर्पण' कारादि सदृश सङ्कटित करने की गाढ़व्युत्पत्तिसूचक प्रणाली अवश्य स्पृहणीय और अनुसरणीय है. ऐसेही जहाँ २ पर प्राचीन परिपाटी का अनुकरण हो, वहाँ आधुनिक रीति को दूषित ठहरा कर उस्का प्रतिपादन और जहाँ नवीन शैली का अनुकरण हो, वहाँ पर आवश्यकता दिखला कर उन्का परिशीलन किया जाय. जिस्से सर्व्वसाधारण की समझ मे सरलता पड़े, ग्रंथ के समस्त कठिन शब्दों का एक कोश पुस्तकान्त मे सन्निवेशित हो; तथा पद्यों के शीघ्र ही पता चलने के लिये एक 'संक्षिप्तपद्यसूची' 'विषयानुक्रम' के पीछे लगाई जाय, जिस्मे समस्तपद्यों के प्रथमचरणों के पूर्वार्द्धखण्ड वर्णक्रमानुसार संकलित हों; और सब के अन्त मे 'वर्णक्रम-विषयसूची' रक्खा जाय, जिस्से ग्रंथ विषय के ढूंढने मे सुगमता होवै; एवं ग्रन्थ को सरस करने और पाठकों को रुचिकर होने के लिये स्थान २ पर चित्रों का भी समावेश हो, जिस्मे विषयों को लक्षण और उदाहरण मात्र से उद्बोध

न करा कर प्रत्यक्ष चित्रद्वारा भी उनके भाव प्रगट किये जाँय......इत्यादि"

निदान महाराज के ऐसे श्लाघनीय समीचीन संकल्प को सुन पण्डितलक्ष्मीनारायणप्रभृति पारिषदों ने प्रोतेजक प्रशंसा कर पुस्तकरचनाप्रोत्साह को और भी परिपुष्ट किया. संक्षेपतः श्रीमान् ने निज पुस्तकालय से ग्रन्थों को एकत्र कर उत्तमोत्तम कवित्त, सवैया, छप्पय, दोहा, सोरठादि संग्रहीत करना, लक्षणों को बनाना और उदाहरणों को संघटित करना प्रारम्भ किया. जब कभी राज्यप्रबन्धबाहुल्य से दिन को सावकाश नहीं मिलता तो रजनी की रम्य घटिकाओं से भी ऋण लेकर नियत समय की पूर्त्ति करनी पड़ती थी ॥

इसके व्यतिरिक्त ग्रन्थ के यथाक्रमविस्तारविनोदवायु ने उत्साहतरंगों को ऐसा लहराया कि एक काव्यबनिता-भूषणरूप व्यंग्यालंकार विषयक ग्रन्थ के भी लिखने का सङ्कल्प कराया है, यदि कहीं पाठकों की गुणग्राहकता के मिष समाजोपकृति की मिति सूचित हुई. क्योंकि जैसे रूप लावण्यहावभावकटाक्षादिसमलंकृत कलित कामिनी सदा रसिकजनों की आपेक्षा करती, एवम् संगीतसुधासारसर्व्वस्व ज्ञाता अपनी मनोहर मूर्च्छना और प्रतानतानललितलय सम-न्वित सरस स्वर के संग सूक्ष्म भेदों के सुनाने से चातक सदृश

गुणग्राहक के विनोदवारिविन्दुकण को जोहता, तथा परिमल परागपुञ्जपूरित पुष्प मधुमाते मलिन्दों का मू देखता, वैसा ही सद्ग्रन्थ भी सदा सत्पाठकों की अपेक्षा करता है; यद्यपि इस विषय मे महाराज का यह सिद्धान्त है"—

"रसिक रीझि हैं जानि, तौ ह्वै हैं कबितौ सफल।
न तरु सदा सुखदानि, श्री राधामाधव सुयस॥"

श्री अयोध्या
आश्विन शुक्ल १० सं० १९५१
९ अक्तूबर सं० १८९४ ई०

निवेदक
चौधरी मथुराप्रसाद शर्म्म
उपाध्याय बी. ए.

विषयानुक्रम।

१. अनुक्रमणिका कुसुम।

२. स्थायी कुसुम।

३. संचारी कुसुम।

४. अनुभाव कुसुम ।

५. हाव कुसुम ।

६. सखा सखी दूती कुसुम ।

७. ऋतु कुसुम ।

८. उद्दीपनविभाव कसुम ।

९. स्वकीयाभेद कुसुम ।

१०. परकीया सामान्या कुसुम ।

११. दशविधनायिका कुसुम ।

१२. नायकभेद कुसुम।

१३. श्रृंगाररस कुसुम ।

१४. दशदशा कुसुम ।

१५. रस कुसुम ।

संक्षिप्तपद्यसूची।

(छ)

(ज)

(द)

(ध)

(न)

(प)

(फ)

(भ)

(य)

(व)

(स)

साम्ब शिव.

रसकुसुमाकर।

(श्रीगणेशायनमः)

मल्लानामऽशनि, नृणां नरवरः, स्त्रीणां स्मरो मूर्तिमान्।
गोपानां स्वजनो, सतां क्षितिभुजां शास्ता, स्वपित्रोःशिशुः।
मृत्यु र्भोजपते, विराड विदुषां, तत्त्वं परं योगिनाम्।
वृष्णीनां परदेवतेति विदितो, रङ्गङ्गतः साग्रजः *॥
(१)

* रंगभूमि में प्रवेश करते हुए हलधर सहित कृष्ण भगवान् का सादर नमस्कार है, जिन्के आकार को देखते ही मल्लों को वज्र, साधारण मनुष्यों को नरपुंगव, स्त्रियों को मूर्त्तिमान् काम, ग्वालों को आत्मीय, दुष्ट नरेन्द्रों को शासक, माता पिता को बालक, कंस को काल, अविद्वानों को विराट्, योगियों को परमतत्व यौंहीं वृष्णि वंशियों को अपरदेवता [illegible] ज्ञात हुए ; अर्थात् जिन्के दर्शन मात्र से नवो रस का प्रादुर्भा[illegible]

(२)

प्रणव[1] बीज[2] मनु अज[3] अनादि परमाणु परमपर[4]।
नीलकण्ठ निरुपधि[5] नकार निर्गुण निरीहतर[6]।
महादेव मनुमय मकार श्रुति सार[7] ब्रह्म बर।
शिव सकार साकार[8] सनातन नमो नमो हर।
वेदान्त वेद सु वकार मय वामदेव विज्ञानमय।
जय यश यकार यज्ञाधिपति अविनाशी[9] काशीश जय †॥
(२)

(३)

सूनो कै परमपद, ऊनो[10] कै अनन्त मद,
नूनो[11] कै नदीस नद, इन्दिरा[12] झुरै परी।
महिमा मुनीसन की, सम्पति दिगीसन की,
ईसन की सिद्धि बृज बीथी बिथुरै परी।
भादों की अँधेरी अधराति मथुरा के पथ,
पाय कै सँयोग "देव" देवकी दुरै परी।
पारावार, पूरन, अपार, परब्रह्म रासि,
जसुदा के कोरैं एकबार ही कुरै परी॥
(३)

१. ॐ म्.
२. आदिकारण.
३. जन्मरहित.
४. सब से बड़ा.
५. उपद्रव रहित.
६. व्यापाररहित.
७. निचोड़.
८. रूपसहित.
९. विनाश रहित.
१०. छोटा.
११. कम.
१२. लक्ष्मी.

† छप्पय से पञ्चाक्षर मन्त्र के प्रत्येक अक्षरों का अर्थ है.

(४)

भूषन सारे सँवारे जराऊ, जिन्हैं लखि तारे लगैं अति फीके।
त्यों "द्विजदेव" जू, आनन की छबि अङ्ग सबै सरमाय ससी के।
ताहू पै भानु प्रभा निदरे लसैं चञ्चल कुंडल कानन नीके।
मोहमई तम क्यों न मिटै, इमि ध्यान धरे वृषभानुलली के * ॥
(४)

(५)

जाहित मातु को नाम जसोदा, सुबंस को चन्दकला कुलधारी।
सोभा समूहमयी "घनआनद" मूरति रंग अनंग जु वारी।
जानि महा सहजै रिझवार, उदार बिलास मै रास बिहारी।
मेरो मनोरथ हू पुरओ, तुम हौ जो मनोरथ पूरन कारी॥
(५)

आनन्दकन्द ब्रजचन्द और उमारमण के अभिवन्दनोपरान्त मै समस्त वर्णित विषयों की एक अनुक्रमणिका देता हूँ, जिस्से कि पाठकों को सहज ही मे समस्त ग्रन्थ हस्तामलक होजाय ॥

* केवल तारागण की ज्योति ही से अन्धकार दूर होता है ; तब दो सूर्य, एक चन्द्रमा और अनेक तारागण की ज्योति एकत्रित होने पर अन्धकार कैसे रह सकता है ?

अनुक्रमणिका।

रसनिरूपण*

१. स्थायी।

१. रति.†
- १. उत्तम.
- २. मध्यम.
- ३. अधम.

२. हास.
- १. उत्तम.
  - १. स्मित.
  - २. हसित.
- २. मध्यम.
  - १. विहसित.
  - २. उपहसित.
- ३. अधम.
  - १. अपहसित.
  - २. अतिहसित.

३. शोक.

४. क्रोध.

५. उत्साह.
- १. बल, विद्या, प्रतापादि जनित.
- २. आर्द्रतादिजनित. ‡
- ३. ज्ञानसामर्थ्यादिजनित.

६. भय.

७. जुगुप्सा. ¶

८. आश्चर्य्य.

९. निर्व्वेद. §

* अर्थात् रस के चारो अङ्गों का पृथक् वर्णन.

† अनिर्व्वचनीय प्रीति.

‡ दयादिजनित.

¶ घिन.

§ वैराग्य.

२. संचारी।

१.	निर्व्वेद.	१०.	मति.	१९.	अवहित्थ.	२८.	आवेग.
२.	ग्लानि.	११.	चिन्ता.	२०.	दीनता.	२९.	त्रास.
३.	शङ्का.	१२.	मोह.	२१.	हर्ष.	३०.	उन्माद.
४.	असूया.	१३.	स्वप्न.	२२.	व्रीड़ा.	३१.	जड़ता.
५.	श्रम.	१४.	विबोध.	२३.	उग्रता.	३२.	चपलता.
६.	मद.	१५	स्मृति.	२४.	निद्रा.	३३.	वितर्क.
७.	धृति.	१६.	आमर्ष.	२५.	व्याधि.	३४.	*
८.	आलस्य.	१७.	गर्व्व.	२६.	मरण.		
९.	विषाद.	१८.	उत्सुकता.	२७.	अपस्मार.		

३. अनुभाव।

१. सात्त्विक † { १. स्तम्भ. ४. स्वरभङ्ग. ७. अश्रु. २. स्वेद. ५. कम्प. ८. प्रलय. ३. रोमाञ्च. ६. वैवर्ण्य. ९. ‡ }

२. कायिक.

३. मानसिक.

४. आहार्य्य.

अनुभावान्तर्गत हाव।

१.	लीला.	४.	विभ्रम.	७.	बिब्बोक.	१०.	ललित.
२.	विलास.	५.	किलकिञ्चित.	८.	विहृत.	११.	हेला.
३.	विच्छित्ति.	६.	मोट्टायित.	९.	कुट्टमित.		

* कोई कवि देवमुनिगुरुपुत्रादिविषयक रति को भी सञ्चारी में गणना करते हैं.

† इसी को तनसंचारी भी कहते हैं.

‡ कोई कवि " जृम्भा " को भी सात्त्विक भाव में गणना करते हैं.

४. विभाव।

१. उद्दीपन *

- १. सखा.
  - १. पीठमर्द.
  - २. विट.
  - ३. चेट.
  - ४. विदूषक.
- २. सखी.
  - (कार्य्य)
  - १. मण्डन.
  - २. शिक्षा.
  - ३. उपालम्भ.
  - ४. परिहास.
- ३. दूती.
  - १. उत्तमा.
  - २. मध्यमा.
  - ३. अधमा.
  - ४. स्वयं.
  - (कार्य्य)
    - १. संघट्टन.
    - २. विरहनिवेदन.
- ४. ऋतु.
  - १. वसन्त. (इसी के अन्तर्गत होली.)
  - २. ग्रीष्म.
  - ३. पावस. (इसी के अन्तर्गत हिंडोरा)
  - ४. शरद्.
  - ५. हेमन्त.
  - ६. शिशिर.
- ५. पवन.
  - १. शीतल.
  - २. मन्द.
  - ३. सुगन्धित.
  - ४. तप्त.
  - ५. तीव्र.
  - ६. दुर्गन्धित.
- ६. वन.
- ७. उपवन.
- ८. चन्द्र.
- ९. चाँदनी.
- १०. पुष्प.
- ११. पराग.

२. आलम्बन.

- १. नायिका.
- २. नायक.

* इन्के पूर्णरूप से संख्यानुसार भेद नहीं हो सकते ; क्योंकि इन्की मिति नहीं है ; अतएव यहाँ पर संक्षेपतः कुछ गिना दिये गये हैं.

नायिका भेद।

- १. प्रकृति *
  - १. उत्तमा.
  - २. मध्यमा.
  - ३. अधमा.
- २. धर्म्म *
  - १. स्वकीया.
    - १. ज्येष्ठा.
    - २. कनिष्ठा.
  - २. परकीया.
    - १. ऊढ़ा.
    - २. अनूढ़ा.
      - १. उद्बुद्धा.
      - २. उद्बोधिता.
        - १. गुप्ता (१. भूत. २. वर्त्तमान. ३. भविष्य.)
        - २. विदग्धा. (१. वचन. २. क्रिया.)
        - ३. लक्षिता.
        - ४. कुलटा.
        - ५. अनुशयाना.
          - १. संकेतविघट्टना.
          - २. भाविसंकेतनष्टा.
          - ३. रमणगमना.
        - ६. मुदिता.
  - ३. सामान्या †
- ३. वय *
  - १. मुग्धा ‡
    - १. अज्ञातयौवना.
    - २. ज्ञातयौवना.
      - १. नवोढा.
      - २. विश्रब्धनवोढा.
  - २. मध्या ‡
  - ३. प्रौढ़ा.
    - मानभेदानुसार §
      - १. धीरा.
      - २. अधीरा.
      - ३ धीराधीरा.
    - ,, क्रियानुसार.
      - १. रतिप्रीता.
      - २. आनन्दसम्मोहिता.
    - ,, स्वभावानुसार.
      - १. अन्यसुरतदुःखिता.
      - २. वक्रोक्ति गर्व्विता.
        - १. रूप.
        - २. प्रेम.
      - ३. मानवती.
- ४. अवस्था *
  - १. प्रोषितपतिका.
  - २. खण्डिता.
  - ३. कलहान्तरिता.
  - ४. विप्रलब्धा.
  - ५. उत्कण्ठिता.
  - ६. वासकसज्जा.
  - ७. स्वाधीनपतिका.
  - ८. अभिसारिका.
    - १. कृष्णा. ¶
    - २. शुक्ला. ¶
    - ३. दिवा. ¶
  - ९. प्रवत्स्यत्पतिका.
  - १०. आगतपतिका.

* ये चार भेदानुसार विभक्त धाराएँ स्वतन्त्र नहीं हैं किन्तु अन्योन्य परिपोषक हैं.

† सामान्या (गणिका) का विशेष भेद रसहीन होनेके कारण नहीं किया.

‡ मुग्धा और मध्या भेद केवल स्वकीया ही में होते हैं.

§ ये भेद केवल स्वकीया ही में होते हैं.

¶ ये भेद केवल परकीयाभिसारिका में होते हैं.

नायक भेद *

- १. पति.
  - १. अनुकूल.
  - २. दक्षिण.
  - ३. धृष्ट.
  - ४. शठ.
  - ५. अनभिज्ञ.
- २. उपपति.
  - १. वचनचतुर.
  - २. क्रियाचतुर.
- ३. वैसिक.

(सब के) १. मानी. २. प्रोषितपति.

रसप्रकार ।

- १. शृंगार.
  - १. संयोग.
  - २. विप्रलम्भ.
    - १. पूर्वानुराग.
      - १. श्रवण द्वारा.
      - २. चित्र ,,
      - ३. स्वप्न ,,
      - ४. प्रत्यक्ष ,,
    - २. मान.
      - १. लघु.
      - २. मध्यम.
      - ३. गुरु.
    - ३. प्रवास.
      - १. भूत.
      - २. भविष्य.

    (दशा) १. अभिलाष. २. चिन्ता. ३. स्मरण. ४. गुणकथन. ५. उद्वेग. ६. प्रलाप. ७. उन्माद. ८. व्याधि. ९. जड़ता. १०. मरण.
- २. हास्य.
- ३. करुण.
- ४. रौद्र.
- ५. वीर.
  - १. युद्ध.
  - २. दया.
  - ३. दान.
- ६. भयानक.

* यद्यपि नायकों के भेद भी उतने ही होसकते हैं जितनी नायिकाएँ हैं, परन्तु आचार्य्यों ने इसका विस्तीर्ण वर्णन समीचीन नहीं समझा; क्योंकि वह अश्लील और पुरुषों की मर्य्यादा के प्रतिकूल होता; यथा धीर, अधीर, खण्डित, उत्कण्ठित, कलहान्तरित आदि.

७. बीभत्स.

८. अद्भुत.

९. शान्त.

रसप्रादुर्भाव *

काव्य. { १. दृश्य. (अभिनय वा नाट्य.)
२. श्रव्य. (वाचनिक.)

संग्रह छन्द बिचारि, अधिक पञ्चदस पञ्चसत।
मङ्गलमय हितकारि, हरिचरनन अरपन कियो†॥

(६)

* अर्थात् रस के प्रगट होने के द्वार.

† इस ग्रन्थ मे ५१९ छन्द संग्रहीत हैं, जो कि हरिचरणों मे सादर समर्पित है.

द्वितीय कुसुम।

रसनिरूपण।

अपरिमित[1] स्थायीभाव जब विभाव, अनुभाव और सञ्चारियों के सहित चमत्कृत[2] हो कर मनुष्यों के हृदय मे अनिर्वचनीय आनन्दकारी होता है, तब उसको रस कहते हैं. इसके चार अङ्ग हैं, अर्थात् स्थायी, संचारी, अनुभाव और विभाव॥

(यथा)

सुरही के भार सूधे सबद सुकीरन के, मन्दिरन त्यागि करैं अनत कहूँ न गौन।
"द्विजदेव" त्योंहीं मधु[3] भारन अपारन सों नेकु झुँकि झूमि रहे मोगरे[4] मरुत्र दौन।
खोलि इन नैननि निहारौं तौ निहारौं कहा, सुखमा[5] अभूत[6] छाय रही प्रति भौन भौन।
चाँदनी के भारन दिखात उनयो सो चन्द, गंध ही के भारन बहत मन्द मन्द पौन॥

(७)

(२)

फूलि उठे कमल से अमल हितू के नैन, कहै "रघुनाथ," भरे चैन रस सियरे।
दौरि आये भौंर से करत गुनी गुनगान, सिद्ध से सुजान सुख सागर सों नियरे।
सुरभी सी खुलनि सुकवि की सुमति लागी, चिरियासी जागी चिन्ता जनक के जियरे।
धनुष पैं ठाढ़े राम रवि से लसत आज, भोर कैसे नखत नरिन्द भए पियरे॥

(८)

१. जिस्की हद नहीं.
२. विलक्षण.
३. पुष्परस.
४. एक प्रकार के बेले का पुष्प.
५. परम शोभा.
६. आगे जैसा नहीं था अर्थात् नवीन.

(३)

देस बिनु भूपति, दिनेस[1] बिनु पङ्कज, फनेस बिनु मनि, औ निसेस[2] बिनु यामिनी।
दीप बिनु नेह[3], औ सुगेह बिनु सम्पति, अदेह[4] बिनु देह, घन मेह बिनु दामिनी।
कविता सुछन्द बिनु, मीन जलबृन्द बिनु, मालती मलिन्द बिनु होति छबि छामिनी[5]।
'दास' भगवन्त बिनु सन्त अति ब्याकुल, बसन्त बिनु कोकिल सुकन्त बिनु कामिनी॥
(९)

(४)

कूरम नरेन्द्र गज सिंह जू के दल दौरि लङ्क लौं अतङ्क[6] बङ्क सङ्क सरसाती हैं।
"उदैनाथ" बजत नगारे देव दुन्दुभी से, धरा धरमसै[7], गिरिपाँती डगलाती हैं।
कच्छप की पीठि पर सेस की सहस फनै, दिया लौं दिपति ऐसी उपमा दिखाती हैं।
फनन के बाहर निकासि द्वै हजार जीहैं स्याह स्याह बाती सी बुझाती रहिजाती हैं॥
(१०)

(५)

भौं हनि कमान तान फिरति अकेली, बधू! तापैं ये विसिख[8] कोर कज्जल भरै है री!
तोहिँ देखि मेरे हू गोबिन्द मन डोलि उठै, मघवा निगोड़ो उतै रोष पकरै है री!
बलि बलि जाँहु, बृषभानु की दुलारी! मेरो नेक कह्यो मान, तेरो कहा बिगरै है री!
चंचल चपल ललचौंहैं दृग मूदि राखि, जौलौं गिरिधारी गिरि नख पै धरै है री!!
(११)

(६)

कढ़ि कै निसङ्क पैठि जाति रुण्ड मुण्डन मैं, लोगन को देखि "दास" आनद पगति है।
दौरि दौरि जेहि तेहि लाल करि डारति है, अङ्क लागि कण्ठ लगिबे को उमगति है।
चमक झमक वारी, ठमक जमक वारी, रमक तमक वारी, जाहिरै जगति है।
राम! असि रावरे की रन मे, नरन मै निलज्ज बनिता सी होरी खेलन लगति है*॥
(१२)

१ सूर्य्य.
२. चंद्रमा.
३. तैल.
४. कामदेव.
५. हीन.
६. भय.
७. धसती है.
८. बाण.
* खड्ग की समता फाग खेलती हुई निर्लज्ज स्त्री से दिखायी है.

(७)

तिय! कित कमनैती[1] पढ़ी बिनु जिह[2] भौंह कमान ?
चलचित बेधत, चुकत नहिँ, बङ्क बिलोकनि बान ॥

(८) (१३)

अनियारे,[3] दीरघ नयनि, किती न तरुनि समान ?
वह चितवनि औरै कछू, जेहि बस होत सुजान ॥

(९) (१४)

कहा कुसुम, कह कौमुदी[4], कितिक आरसी जोति ?
जाकी उजराई लखे आँखि ऊजरी होति ॥

(१०) (१५)

अजौं तरयौना[5] ही रह्यो स्रुति[6] सेवत इक अङ्ग।
नाक[7] बास बेसरि[8] लयो बसि मुकतन[9] के सङ्ग ॥

(११) (१६)

मै बरजी कै बार तुव, इत कित लेति करौट ?
पखुरी लगे गुलाब की परि हैं गात खरौट ॥

(१२) (१७)

मानहुँ मुखदिखरावनी दुलहिन करि अनुराग।
सासु सदन[10], मन ललन हू, सौतिन दियो सोहाग ॥

(१३) (१८)

जौ न जुगुति पिय मिलन की, धूरि मुकुति मुह दीन।
जौ लहियै सँग सजन, तौ धरक[11] नरक हू कीन ॥

(१९)

१. धनुर्विद्या.
२. रोदा.
३. कटीले.
४. चाँदनी.
५. कान का गहना.
६. कान और वेद.
७. नासिका और स्वर्ग.
८. नाक का गहना और बिना मर्यादा के.
९. मोती और मुक्त जन.
१०. घर.
११. धारण, अङ्गीकार.

(१४)

दृग उरझत, टूटत कुटुम, जुरत चतुर चित प्रीति।
परति गाँठि दुरजन हिये, दई! नई यह रीति॥

(१५) (२०)

जिन दिन देखे वे कुसुम, गई सो बीति बहार[१]।
अब अलि[२]! रही गुलाब की अपत[३] कटीली डार॥

(१६) (२१)

यहि आसा अटक्यो रहै अलि गुलाब के मूल।
ह्वै हैं बहुरि बसन्त ऋतु इन डारनि वे फूल॥

(१७) (२२)

किती न गोकुल कुलबधू[४], काहि न केहि सिख दीन?
कौने तजी न कुलगली, ह्वै मुरली सुर लीन??

(१८) (२३)

नीकी, दई! अनाकनी[५], फीकी परी गुहारि।
तज्यो मनो तारन बिरद[६] बारक[७] बारन[८] तारि॥

(२४)

१. स्थायी।

जिस्की रस मे सदा स्थिति रहती है, उस्को स्थायी कहते हैं. इस्के नव भेद हैं; अर्थात् रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, आश्चर्य और निर्वेद॥

१. वसन्त.
२. भौंरा.
३. पत्ररहित.
४. अच्छे कुल की स्त्री.
५. टालबाल.
६. यश.
७. एकबार.
८. हाथी.

१. रति।

प्रिया और प्रियतम के मिलने की इच्छा से उत्पन्न हुई अपूर्व प्रीति को रति कहते हैं. इसके तीन भेद हैं, अर्थात् उत्तम, मध्यम और अधम॥

(यथा)

हाथ हँसि दीन्हों भीति अन्तर परोस प्यारी, हाथ साथ छकी मति काँधर प्रबीन की।
निकस्यो झरोखा ह्वै कै, बिकस्यो कमल सम, ललित अँगूठी तामै चमक चुनीन[1] की।
"कालिदास" तैसी लाली मेंहदी के बिन्दुन की, चारु[2] नखचन्द की, ललित अँगुरीन की।
तैसी छबि छलकति छाप के छलान की, सुकंकन चुरीन की, जराऊ[3] पहुँचीन की॥
(२५)

१. उत्तम।

सदा एकरस रहनेवाली एकांगी प्रीति को उत्तम प्रीति कहते हैं; जैसे ईश्वर मे सेव्य[4] सेवक भाव॥

(यथा)

दहै अङ्ग को पतङ्ग दीप के समीप जाय, बारिज बँधाय भृङ्ग दरद न मानई।
सुनि कै बिपञ्ची[5] धुनि बिसिख सहैं कुरङ्ग[6], सती पतिसङ्ग देहदुख को न आनई।
मनी हीन छीन फनी, मीन बारि सों बिहीन ह्वै कै मलीन मति दीनता बितानई।
चातक मयूर मन मेह के सनेह, उधो! जाकी लगै नेह सोई देह भले जानई॥
(२६)

१. मानिक के छोटे टुकड़े.
२. सुन्दर.
३. रत्नों से जड़ी हुई.
४. स्वामी.
५. वीणा.
६. मृग.

रति स्याई.
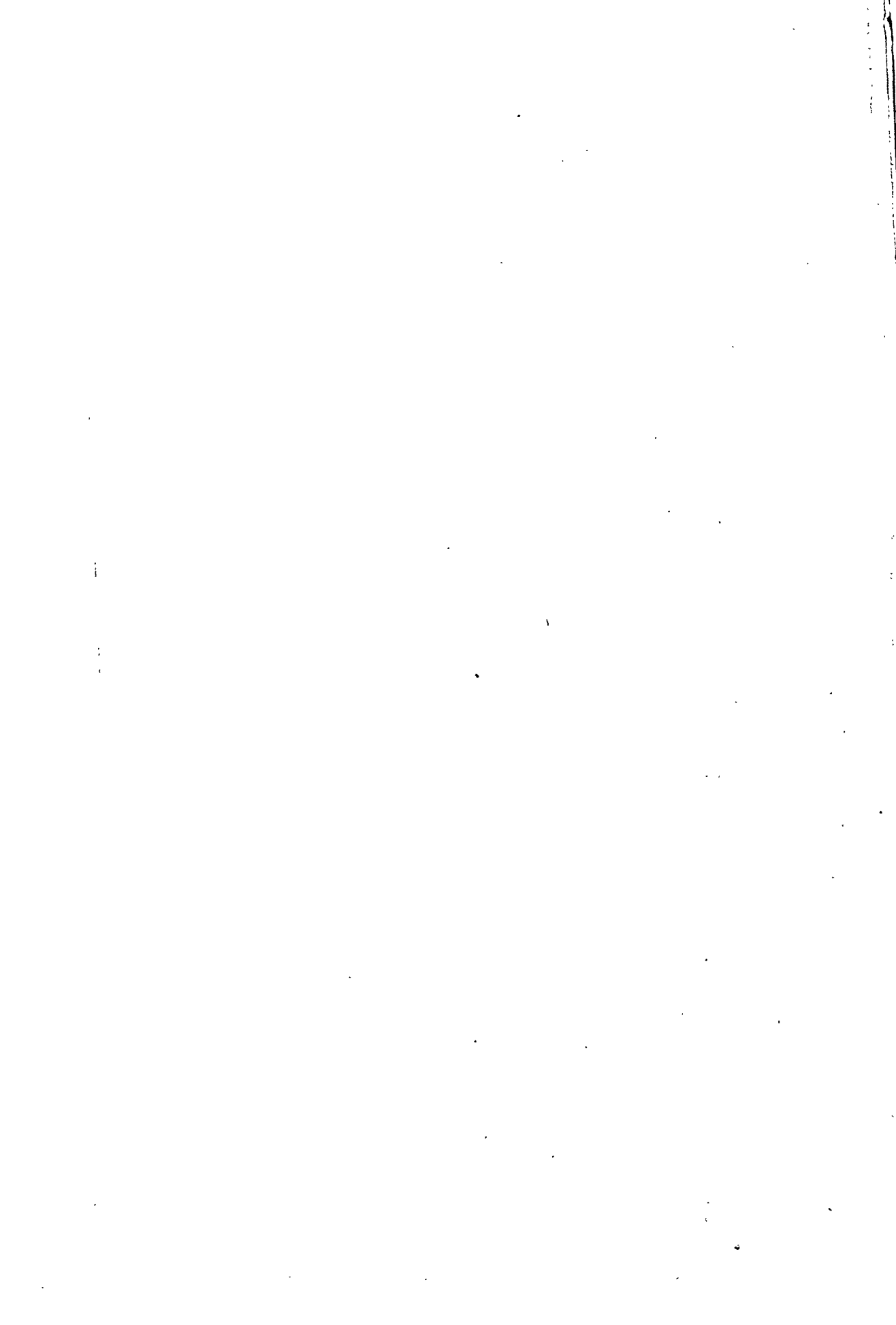
२. मध्यम।

अकारण[1] परस्पर प्रीति के मध्यम प्रीति कहते हैं; जैसे मित्रों मे॥

(यथा)

सावनी तीज सुहावनी को सजि सूहे[2] दुकूल[3] सबै सुखसाधा।
त्यों "पदमाकर" देखे बनै, न बनै कहते अनुराग अबाधा।
प्रेम के हेम[4] हिँडोरन मै सरसै, बरसै रस रङ्ग अगाधा।
राधिका के हिय झूलत साँवरो, साँवरो के हिय झूलति राधा॥ (२७)

३. अधम।

कार्यवश प्रीति के अधम प्रीति कहते हैं; जैसा कि प्रायः सांसारिक व्यवहारों मे देखा जाता है॥

(यथा)

आजु मिले बहुतै दिन, भावते[5]! भेंटत भेंट कछू मुख भाखौ।
ये भुज भूषन मो भुज बाँधि, भुजा भरि कै अधरारस चाखौ।
दीजियै मोहिँ ओढ़ाय जरीपट[6], कीजियै जू जिय जो अभिलाखौ।
"देव" हमै तुम्हैं अन्तर पारत, हार उतारि इतै धरि राखौ॥ (२८)

२. हास।

कौतुकार्थ[7] अनुपयुक्त[8] वचन वा रूपरचना से आह्लाद[9] युक्त मनोविकार[10] के हास कहते हैं. इसके तीन भेद हैं; उत्तम, मध्यम और अधम और इन तीनो के दो दो भेद हैं, अर्थात् उत्तम के

१. बिना किसी हेतु के.
२. लाल रंग का एक भेद.
३. वस्त्र.
४. सोना.
५. प्यारे.
६. सोनहरे काम का कपड़ा.
७. दिल्लगी के लिये.
८. बेढब.
९. आनन्द.
१० मन की बदली हुई अवस्था.

स्मित और हसित, एवम् मध्यम के विहसित और उपहसित, तथा अधम के अपहसित और अतिहसित * ॥

(यथा)

चन्द्रकला चुनि चूनरी चारु दई पहिराय लगाय सु रोरी ।
वेनी बिसाखा रची "पदमाकर" अञ्जन साजि समाजि कै गोरी ।
लागी जबै ललिता पहिरावन कान्ह को कञ्चुकी केसरि वोरी ।
हेरि[1] हरे[2] मुसुक्याय रही, अँचरा मुख दै, बृषभानु किसोरी ॥
(२१)

१. स्मित ।

बिना दाँत देख पड़ते हुए विकसित[3] कपोलों से युक्त मन्द हास को स्मित कहते हैं ॥

२. हसित ।

कुछ दाँत देख पड़ते हुए प्रफुल्लित[4] कपोलों से युक्त हास को हसित कहते हैं ॥

३. विहसित ।

अवसर पर मनोहर शब्द निकलने योंहीं कुछ मू सकोड़ने और वदनराग[5] दीखते हुए हास को विहसित कहते हैं ॥

४. उपहसित ।

नाक के फुलाने एवम् कुटिल[6] दृष्टि से देखने तथा ग्रीवा सकोरे हुए शब्द भरे हास को उपहसित कहते हैं ॥

१. देखकर.
२. धीरे धीरे.
३. थोड़ा खिलते हुए.
४. पूरा खिलते हुए.
५. मुख की ललाई.
६. टेढ़ी.

* हास के इन छ भेदों के उदाहरण अभव्य होने से नहीं दिया.

हास.

शोक.

५. अपहसित।

सिर हिलते और आँसू निकलते हुए उद्धत[1] हास को अपहसित कहते हैं॥

६. अतिहसित।

शरीर के कँपने, अधिक आँसुओं के बहने और ताली दे ऊँचे स्वर से ठठाकर हँसने को अतिहसित कहते हैं.

३. शोक।

प्रिय पदार्थ के वियोग से उत्पन्न हुये रतिरहित मनोविकार को शोक कहते हैं॥

(यथा)

दिसि बिदिसान तैं उमड़ि मढ़ि लीन्हों नभ, छोड़ि दिये धुरवा[2] जवासे जूथ जरिगे।
डहडहे भए द्रुम रञ्चक हवा के गुन, कुहू कुहू मोरवा पुकारि मोद भरिगे।
रहि गये चातक जहाँ के तहाँ देखत हीं "सोभनाथ" कहूँ बूँदा बूँद हू न करिगे।
सोर भयो घोर चहुँ ओर नभमण्डल मैं, आए घन, आए घन, आय कै उघरिगे॥ (३०)

(२)

मोहिँ न सोच इतो तन प्रान को, जाँय, रहैं, कै लहैं लघुताई।
एहू न सोच घनो "पदमाकर" साहिबी जोपै सुकण्ठ[3] ही पाई।
सोच यहै एक, बालि बधे पर देहिगो अङ्गद को युवराई[4]?
यों बैंच[5] बालिबधू के सुनें करुनाकर[6] को करुना कछु आई॥ (३१)

१. ऊँचे.
२. बादल.
३. कपिराज सुग्रीव.
४. युवराज की पदवी.
५. बचन.
६. दयानिधि.

४. क्रोध।

अपमानादि से उत्पन्न हुये हर्ष के प्रतिकूल[1] मनोविकार को क्रोध कहते हैं॥

(यथा)

वार एक विन्सति[2] सिकार करि छत्रिनको छमा छाँड़ि काटि मुंड पाट्यो कुंड काल को।
खण्डि को सुनायो जगदण्डमे प्रचण्ड धुनि, आछत प्रताप मेरे चाप चन्द्रभाल को?
फेरि फेरि ताकत कठोर दृग हेरि हेरि, टेरि टेरि पूँछै नाम रामहिँ कृपाल को।
कालके करालगेह आन्यो है विदेह दोऊ कौसिक[3]! कहौ न वाल कौन महिपाल को?
(३२)

(२)

जानत स्वभाव ना प्रभाव भुजदण्डन को, खण्डन को छत्रिन के वच्छस[4] कपाट[5] को?
सोई हौं कहत नृपमण्डली के मध्य, भयो युद्ध यमराज क्रुद्ध राजन के ठाट को।
ऐसो है त्रिलोक मे कवन रनधीर सुनि बीरता विदित वित उचित उचाट[6] को?
मोजिहौं मसक सम कौसिक! कहौ न कौन तोर्यो करकाय[7] चाप चन्द्रमाललाट को॥
(३३)

५. उत्साह।

शूरता[8], दान, वा दया से उत्पन्न हुई उत्तरोत्तर इच्छावृद्धि को उत्साह कहते हैं. इसके तीन भेद हैं, अर्थात् बलविद्या प्रतापादिजनित, आर्द्रतादिजनित और दानसामर्थ्यादिजनित॥

(यथा)

हाँकीवँधी वकनि, नसा की बँधी मानो मति, ऊँचे नीचे बाट की न क्योंहू सुधि गात है।
दीठि दीने मृग पै, न पीठि दीने ओटन पै, भूल्यो राजकाज हू, न जानै निसि प्रात है।

१. बरखिलाफ.
२. इक्कीस.
३. विश्वामित्र.
४. छाती.
५. केवाड़ा.
६. घबराहट.
७. कड़का कर.
८. वीरता.

क्रोध.

उत्साह.
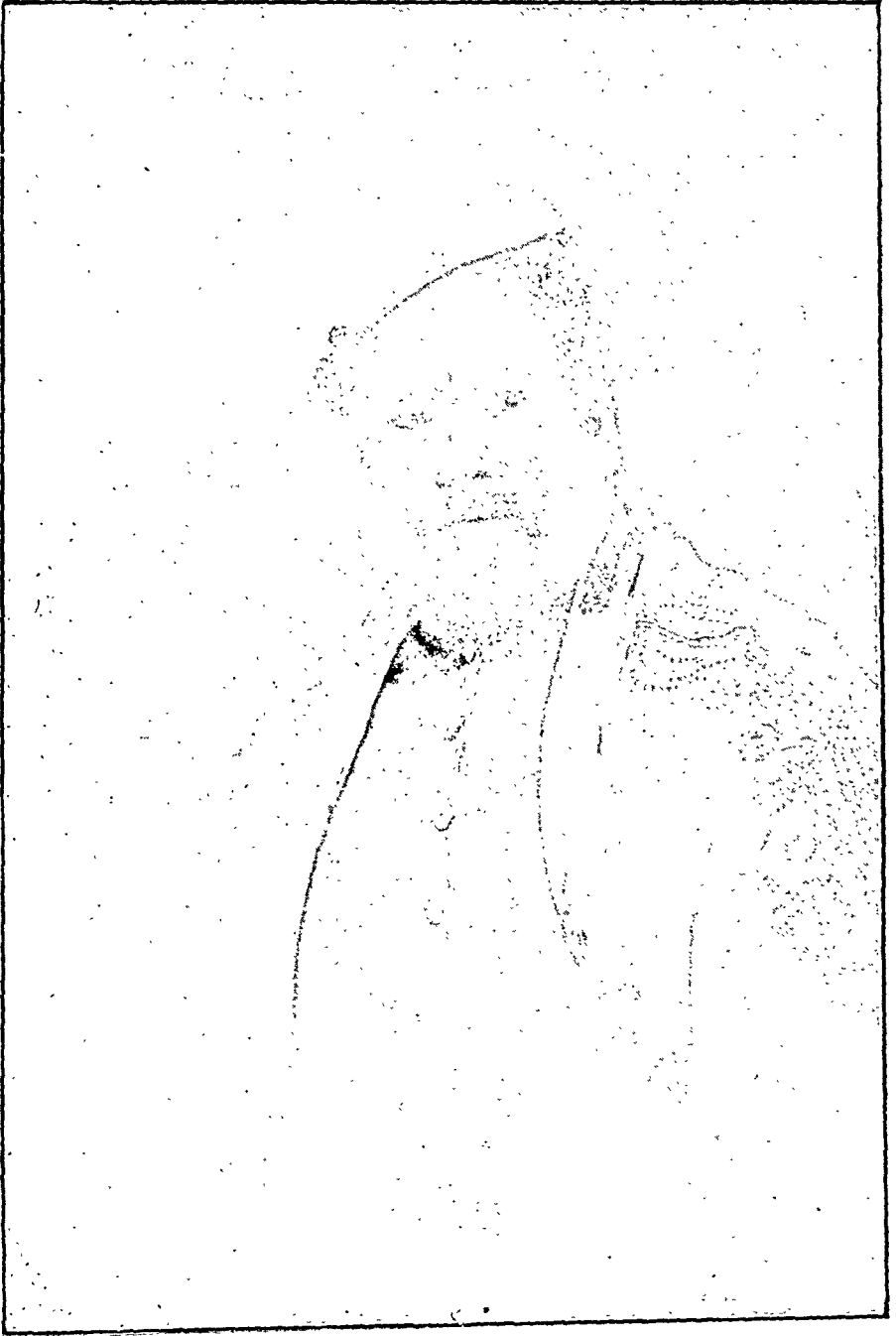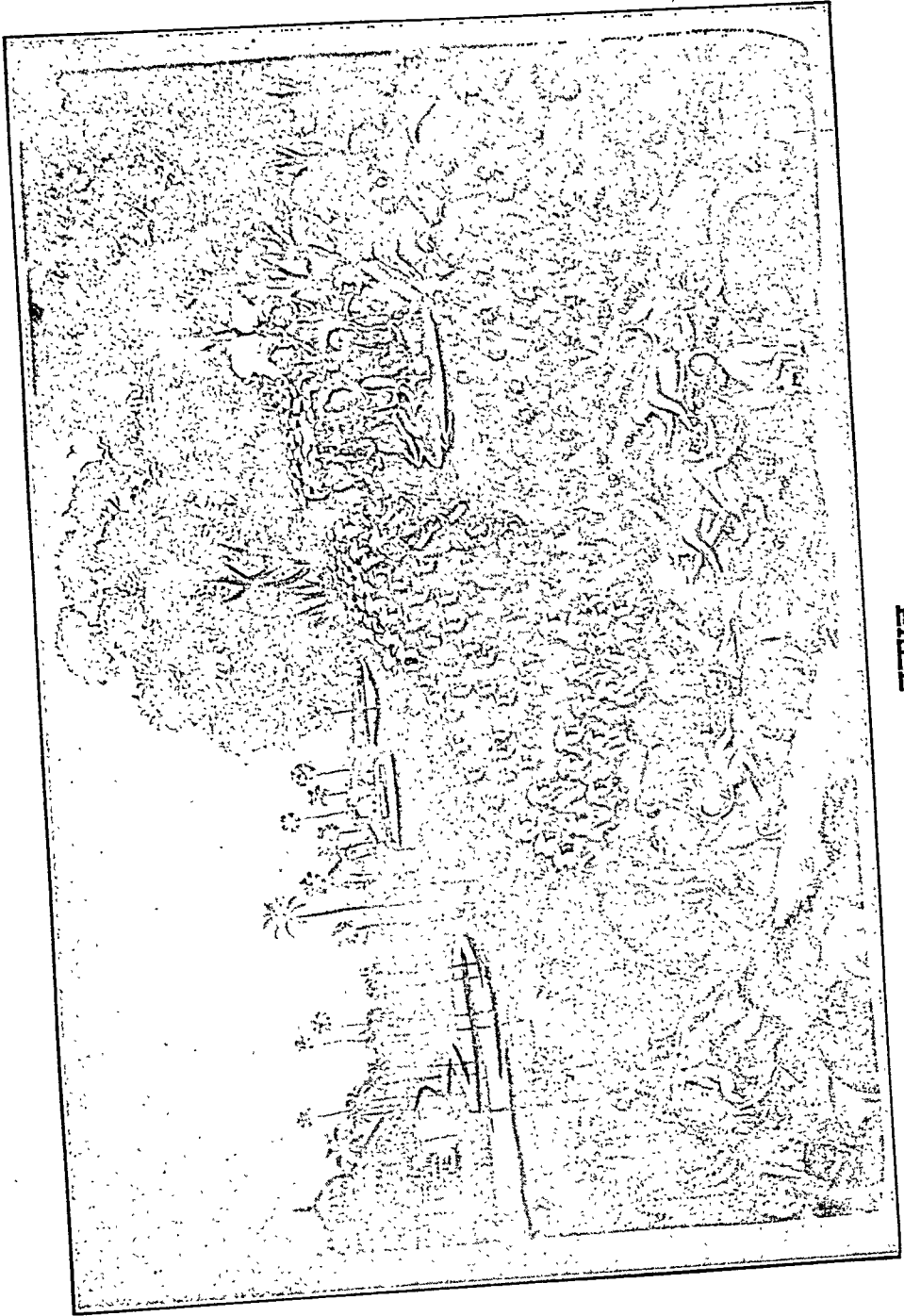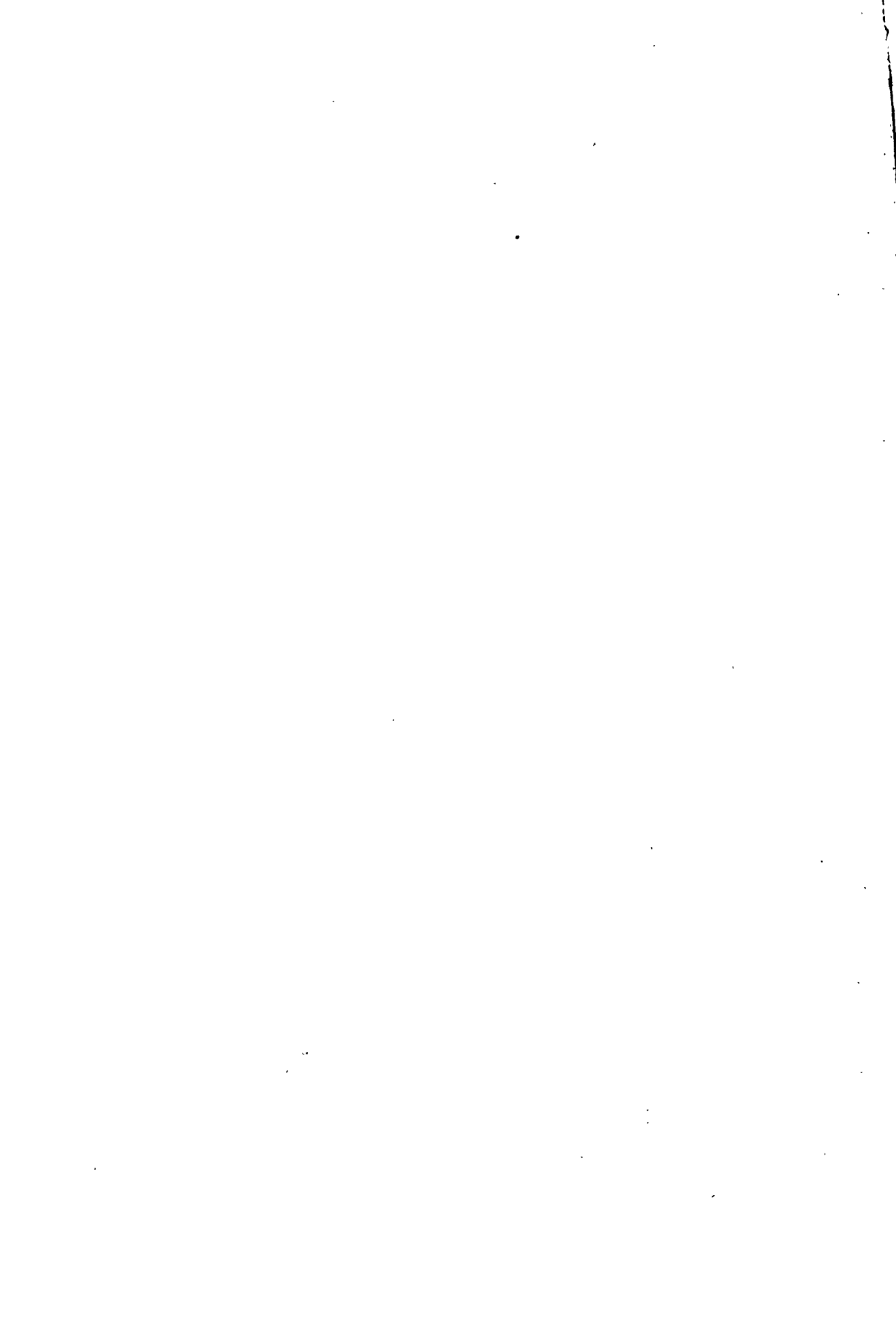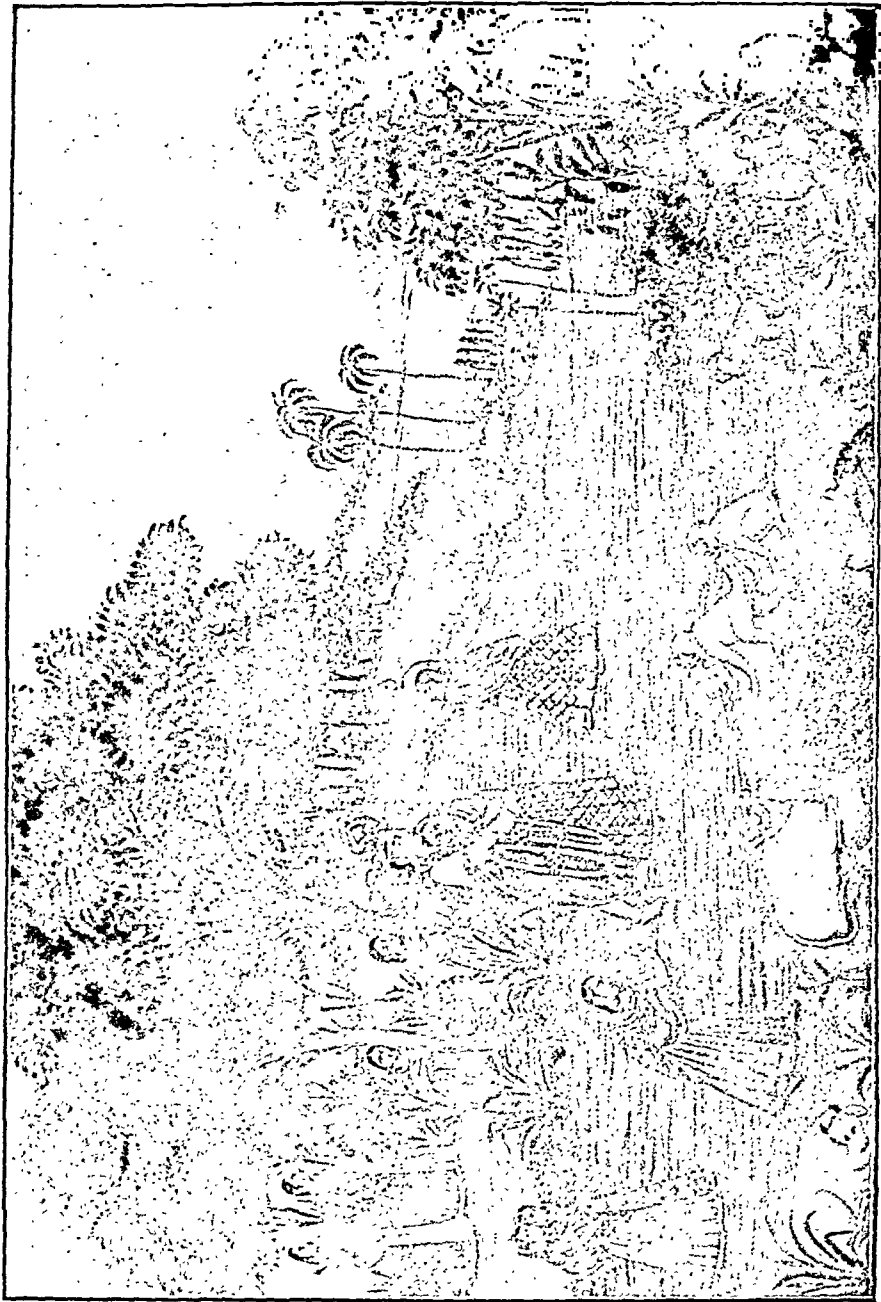
भय.

बात हू तैं अधिक अनोखो रथ जात, तऊ चारि पग आगेही मनोरथ दिखात है।
जोरकरि ज्यों ज्यों मृग वन नजिकात त्यों त्यों मोह तैं महीपतिको मन नजिकात है।।
(३४)

६. भय।

अपराध, विकृत[1] शब्द, चेष्टा वा विकृत जीवादि से उत्पन्न हुए मनोविकार के भय कहते हैं॥

(यथा)

आयो सुनि कान्ह, भूल्यो सकल हुस्यारपन, स्यारपन कंस को न कहत सिरातु है।
व्यालवर पूर और चून नर छार खेत भभरि भगाय भए भीतरहि जातु है।
"दास" ऐसी डरडरी मति हेतु हाउ ताकी, भरभरी लागु मन, थरथरी गातु है।
खरॆ[2] हू के खरकत धकधकी धरकत, भौन कोन सकुरत सरकत जातु है॥
(३५)

७. जुगुप्सा।

अश्रद्धा से सब इन्द्रियों के सङ्कोच[3] के जुगुप्सा कहते हैं॥

(यथा)

पालि लिये दधि, दूध, मही, जिन ऊधमही तिनहूँ सों तिनाने[4]।
साथी महा हय, हाथी, भुजङ्ग, बछा, बृष, मातुल[5] मारि बिनाने[6]।
कूबरी दूबरी जाति न ऊबरी, डूब री बात! सु साँची किनाने।
ज्ञान गहीरिन सों रुचि मानी, अहीरिन सों घनस्याम घिनाने॥
(३६)

८. आश्चर्य।

समझ मे न आनेवाली वस्तु के देखने, सुनने वा स्मरण आने से उत्पन्न हुए मनोविकार के आश्चर्य कहते हैं॥

१. बिगड़े हुए.
२. तिनका.
३. सिकुड़ना.
४. तनेने परे, कड़े परे.
५. मामा (माता का भाई).
६. गर्व मे भरगये.

(यथा)

तेरे जोग काम यह, रामकेसनेही! जामवन्त कह्यो, औधिहू को द्योस दसद्दै रह्यो ।
एती वात अधिक सुनत, हनुमन्त गिरि सुन्दर तें कूदि कै सुबेल[1] पर ह्वै रह्यो ।
"दास" अति गति की चपलता कहाँ लौं कहौं, भालुकपिकटक[2] अचम्भा जकि ज्वै[3] रह्यो ।
एक छिन वारापार लगि वारापार को गगनमध्य कञ्चन धनुष ऐसो वै[4] रह्यो ॥

(३७)

९. निर्वेद ।

विशेष ज्ञान होने से सांसारिक विषयों मे निन्दा वुद्धि उत्पन्न हुए मनोविकार को निर्वेद कहते हैं ॥

(यथा)

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं ।
आठहू सिद्धि, नवो निधि के सुख, नन्द की गाय चराय विसारौं ।
नैनन सों "रसखानि" जवै ब्रज के वन, बाग तड़ाग[5], निहारौं ।
कोटिक वे कलधौत[6] के धाम करील के कुञ्जन ऊपर वारौं ॥

(३८)

१. एक पर्व्वत का नाम.
२. सेना.
३. चक्राकार.
४. उदय.
५. तालाव.
६. सुवर्ण.
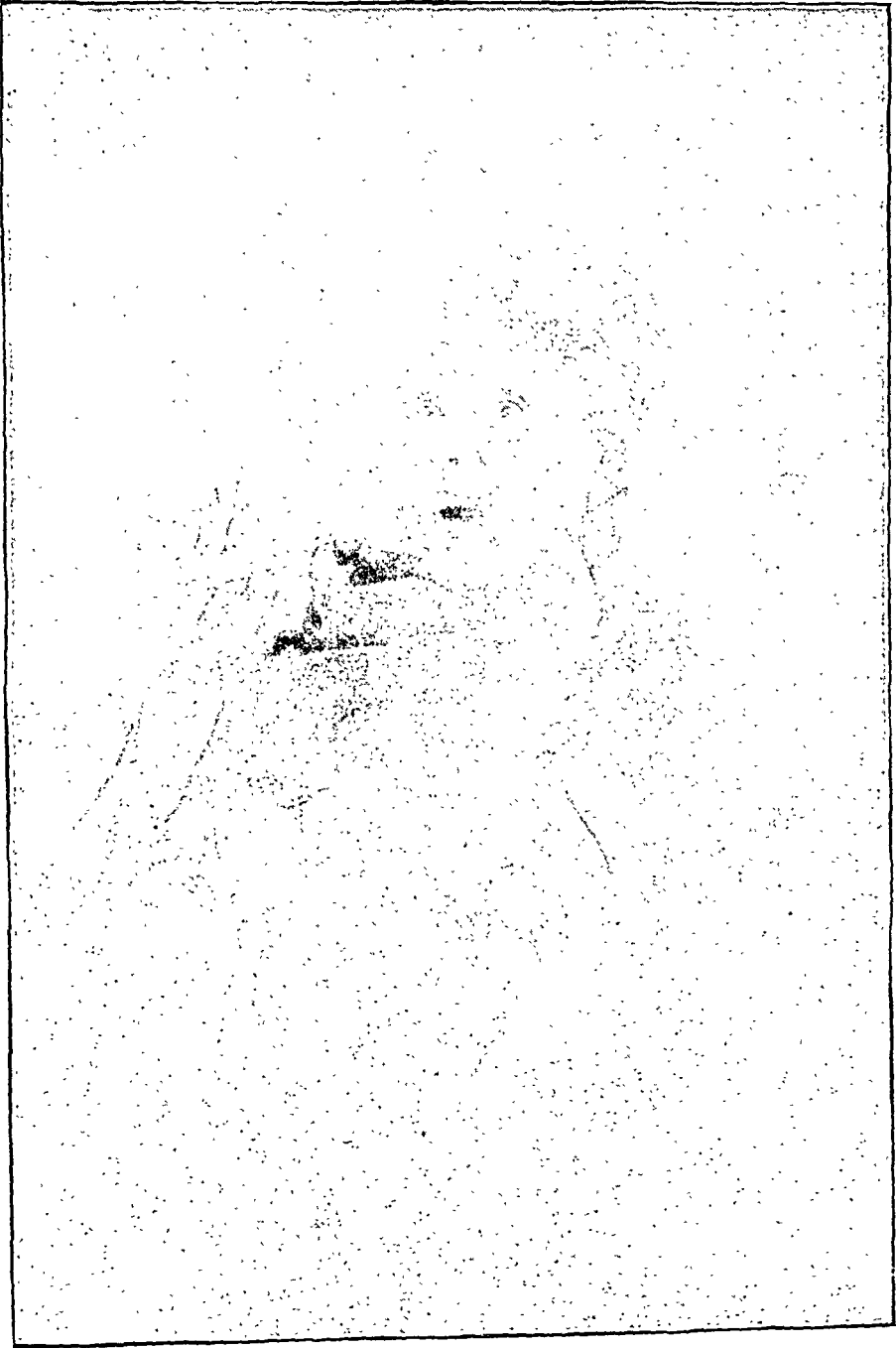
आश्चर्य्य.

तृतीय कुसुम।

सञ्चारी भाव।

जो भाव रस के उपयोगी होकर जल के तरङ्ग की भाँति उसमे संचरण[1] करते हैं, उन्को संचारी भाव कहते हैं. इन्के तैंतीस भेद हैं, जिन्का यथाक्रम वर्णन किया जाता है॥

१. निर्वेद।

विपत्ति, ईर्षा, ज्ञानादि से स्वशरीर अथवा सांसारिक पदार्थों के तिरस्कार[2] को निर्वेद संचारी कहते हैं॥

(यथा)

मानुष हों तौ वही "रसखानि" बसौं सँग गोकुल गाँव के ग्वालनि।
जौ पसु हों तौ कहा बस मेरो, चरौं मिलि नन्द के धेनु मझारनि[3]।
पाहन[4] हों तौ वही गिरि को, जो कियो हरि छत्र पुरन्दर[5] धारनि[6]।
जौ खग हों तौ बसेरो करौं मिलि कूल कलिन्दी[7] कदम्ब के डारनि॥
(३१)

२. ग्लानि।

निर्बलता से शिथिलता[8] अथवा असहनशीलता के खेद को ग्लानि कहते हैं॥

१. चलना.
२. अनादर.
३. मध्य.
४. पत्थर.
५. इन्द्र.
६. जलधारा.
७. यमुना नदी.
८. ढीलापन.

(यथा)

घहरि, घहरि, घन ! सघन चहूँघा घेरि, छहरि, छहरि, बिष बूँद बरसावै ना।
"द्विजदेव"की सौं,अब चूक मति दाँव, अरे पातकी पपीहा ! तू पियाकी धुनि गावै ना।
फेरि ऐसो औसर न ऐहै तेरे हाथ, एरे मटकि, मटकि, मोर ! सोर तू मचावै ना।
हौं तो बिन प्रान, प्रान चाहत तज्योई, अब कत नभचन्द! तू अकास चढ़ि धावै ना।।

(४०)

३. शंका।

विषम अनिष्ट वा इष्टहानि के विचार के शङ्का संचारी कहते हैं॥

(यथा)

मोहिँ लखि सोवत बिथोरिगो[1] सुबेनी[2] बनी,तोरिगो हिये को हरा,छोरिगो सुगैया[3] को।
कहै"पदमाकर"त्यों घोरिगो घनेरो दुख,बोरिगो बिसासी[4] आज लाजही की नैया को।
अहित अनैसो ऐसो कौन उपहास, यातैं सोचन खरी मैं परी जोवति[5] जुन्हैया को।
बूझिहैं चवैया[6] तब कैहौं कहा दैया! इत पारिगो[7] को मैया! मेरी सेज पै कन्हैया को।।

(४१)

४. असूया।

दूसरे की उत्कर्षता का असहन वा उसके हानि पहुँचाने की इच्छा के असूया संचारी कहते हैं॥

(यथा)

सजल रहत आप, औरन को तापैं देत, बदलत रूप और बसन बरेजे मे।
तापर मयूरन के झुण्ड मतवाले साले, मदन मरोरैं महा झरनि मरेजे मे।

१. छितरा दिया.
२. चोटी.
३. अँगिया, चोली.
४. विश्वासघाती.
५. देखती.
६. चुगली करने वाली स्त्रियाँ.
७. लेटा गया.
८. बढ़ती.

कबि "लछिराम" रङ्ग साँवरो सनेही पाय अरज न मानै हिय हरष हरेजे मैं।
गरजि गरजि बिरहीन के बिदारै उर, दरद न आवै धरे दामिनी करेजे मैं ॥
(४२)

५. श्रम।

किसी कार्य के करने से संताेष सहित अनिच्छा को श्रम संचारी कहते हैं ॥

(यथा)

सीस फूल सरकि सोहावनेे ललाट लाग्यो, लाँबी लटैं लटकि परी हैं कटि छामै[1] पर।
"द्विजदेव" त्यों हीं कछु हुलसि हियेतैं हेलि फैलि गयो राग मुख पङ्कज ललाम पर।
स्वेद सीकरनि[2] सराबोर ह्वै सुरँग चीर लाल दुति दै रही सु हीरनि के दामै[3] पर।
केलिरस साने, दोऊ थकित त्रिकाने, तऊ हाँ की होति कुमक सु ना की धूमधाम पर ॥
(४३)

६. मद।

मदिरादिक सेवन से हर्षाधिक्य सहित क्षोभ[4] को मद संचारी कहते हैं ॥

(यथा)

बृन्दाबन बीथिन[5] मैं बन्सीबट छाँह अरी! कौतुक अनोखो एक आजु लखि आई मैं।
लागो हुतो हाट एक मदनधनी को, जहाँ गोपिन को बृन्द रह्यो जूमि चहुँ घाई मैं।
"द्विजदेव" सौदा[6] की न रीति कछु भाखी जाय, ह्वै रही जु नैन उनमत्त की देखाई मैं।
लै लै कछु रूप मनमोहन सों बीर, वै अहीरनै गँवारी देत हीरन बटाई मैं ॥
(४४)

७. धृति।

विपत्ति में अविचलित बुद्धि को धृति संचारी कहते हैं ॥

१. छीनं.
२. जलकण.
३. माला.
४. व्याकुलता.
५. मार्ग.
६. वाणिज्यवस्तु और उन्माद.

(यथा)

ऐसी काहू आजुलौं न कीन्हीं ती अनैसी,[1] जैसी सैयद नै करी, ये कलङ्क सिर चढ़ैं गे।
दूसरो नगारो बाजैं दिल्ली में दिलीस आगैं, हम सुनि भागैं, तौ कबिन्द काहि पढ़ैं गे।
हमहो हैं धीरवुद्धि, हमको हैं कीबो[2] युद्ध, स्वामि काज सुद्ध ह्वै जहान यस मढ़ैं गे।
हाड़ा[3] कहवाय, कहौ हारिकै रहैंगे कैसे, भारि समसेरैं आजु रारि करि कढ़ैं गे॥
(४५)

(२)

चले चन्द्र बान, घनबान औ कुहुकबान, चलत कमानै, आसमानै भूमि छ्वै रह्यो।
चलीं जमदाढ़ैं[4], तरवारैं चलीं, बाढ़ैं चलीं, ग्रीषम को तरनि[5] तमासे आनि वै रह्यो।
ऐसे राव बुद्ध के मुकुन्द नै चलाए हाथ, अरिन के चले पाँय, भारत बितै रह्यो।
हय[6] चले, हाथी चले, सङ्ग छोड़ि साथी चले, ऐसी चलाचल मैं अचल हाड़ा ह्वै रह्यो॥
(४६)

८. आलस्य।

कार्य मे समर्थ होते भी उत्साहहीन होने को आलस्य संचारी कहते हैं॥

(यथा)

गोकुल मे गोपिन गुबिन्द सङ्ग खेली फाग राति भरि, प्रात समै ऐसी छबि छलकैं।
देहैं भरी आरस, कपोल रस रोरी भरे, नींद भरे नयन, कछूक झपैं झलकैं।
लाली भरे अधर, बहाली भरे मुखबर, कवि "पदमाकर" बिलोके को न ललकैं।
भाग भरे लाल, औ सोहाग भरे सब अङ्ग, पीक भरी पलकैं, अबीर भरी अलकैं॥
(४७)

९. विषाद।

इष्टहानि वा अनिष्ट की प्राप्ति से दुःखित होने को विषाद संचारी कहते हैं॥

१ अन्याय.
२. करना.
३. क्षत्रियों की एक जाति.
४. जमधर, पेशकब्ज.
५. सूर्य्य.
६. घोड़ा.

आलस्य.

चिन्ता.

(यथा)
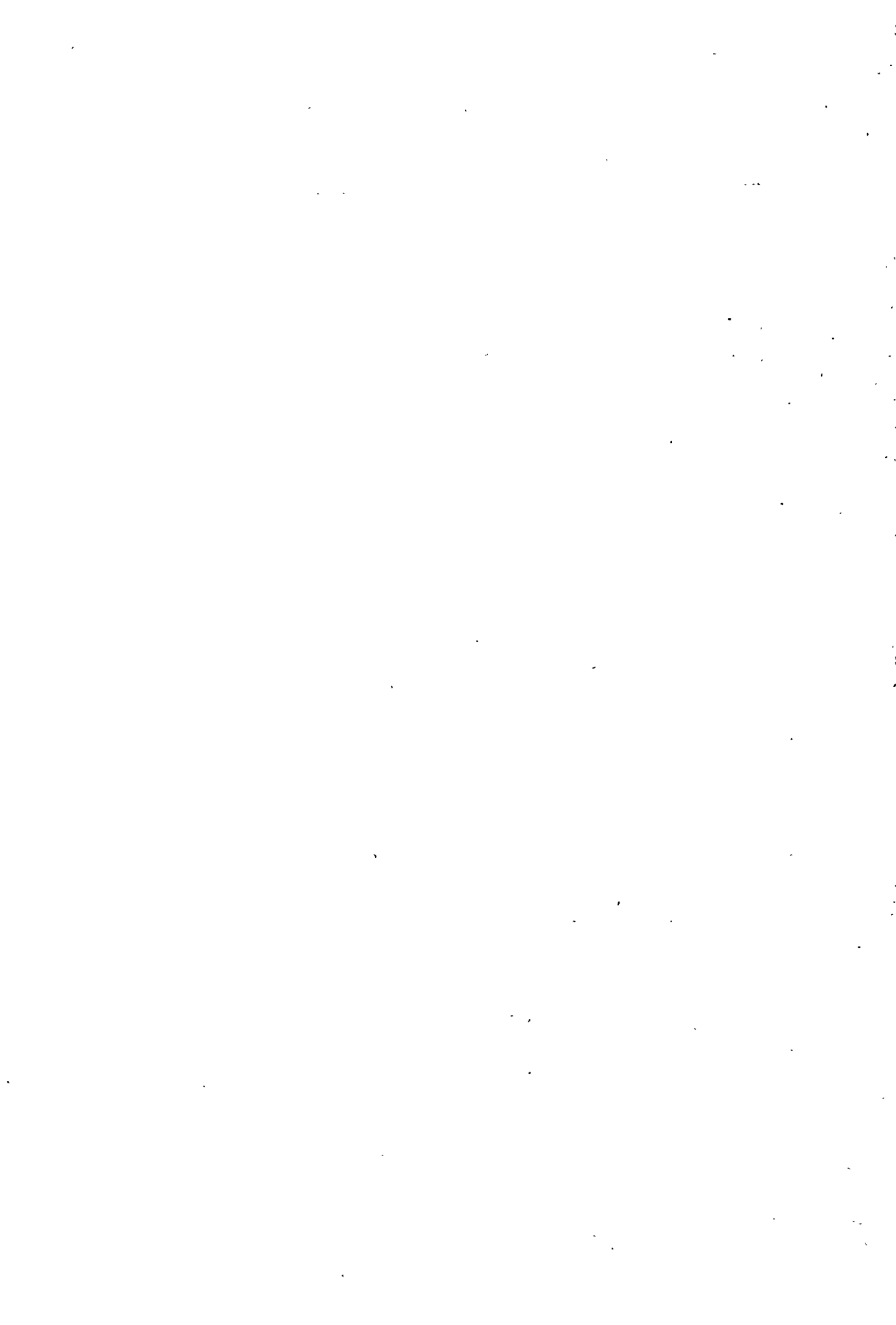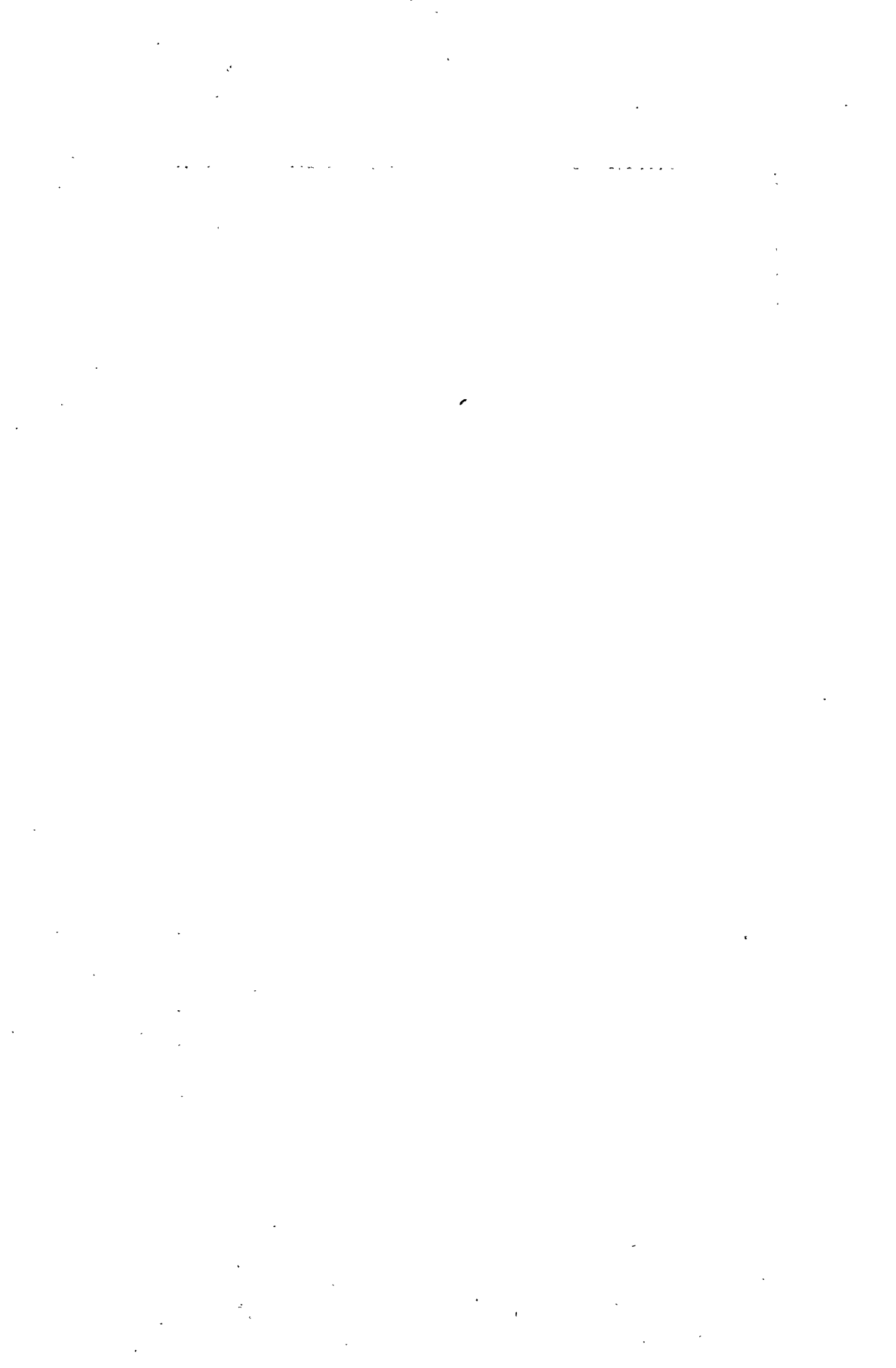
दारिद बिदारिबे को प्रभु को तलास, तौ हमारे इहाँ अनगन दारिद की खानि है ।
अर्घ¹ के सिकारी जौ है नजरि तिहारी, तौपै हौंहू मनपूरन अघन राख्यो ठानि है ।
"दास" निज सम्पति सु साहिब के काज आए होत हरषित पूरोभाग उन मानि है ।
अपनी बिपति को हजूर हौं करत लखि रावरे की बिपति बिदारिबे की बानि है ॥

(४८)

(२)

कारी परास² तरु डार सबै भई हैं । लाली तहाँ कछुक³ किंसुक की ठई हैं ।
कैला जग्यो मदन पावक को बिचारौ । आयो बसन्त तिलकानन⁴ तौ निहारौ *॥

(४९)

१०. मति ।

भ्रान्तिकारण रहते भी यथार्थ ज्ञान बने रहने को मति संचारी कहते हैं ॥

(यथा)

गोरो छीर सिन्धु, गोरो देखियै सुधाको सिन्धु, गोरो चन्द्रबंस, गोरो यदुबंसही को है ।
गोरे बलदेव, गोरे बसुदेव, देवकी हू गोरी, गोरी जसुमति, गोरो नंद नीको है ।
ब्रज सब गोप गोरे, गोपिकाहूँ गोरी सबै, कान्ह भयो कारो यातै जान्यो चोरी जीको है ।
स्यामपूतरी के बीच स्यामपूतरी मै राखि नन्दपूतरी को लग्यो रङ्ग पूतरी को है ॥

(५०)

११. चिन्ता ।

किसी अहित वस्तु के विचार को चिन्ता संचारी कहते हैं॥

१. पाप.
२. पलास के फूल.
३. जरा, टुक.
४. जंगल.
* इसमें बसन्ततिलका छन्द का कैसा सार्थक प्रयोग हुआ है.

(यथा)

भोरहिँ भुखात ह्वै हैं, कन्द मूल खात ह्वै हैं, दुति कुँभिलात ह्वै हैं मुख जलजात[1] को ।
प्यादे[2] पग जात ह्वै हैं, मग मुरझात ह्वै हैं, थकि जै हैं घाम लागे स्याम कृस गात को ।
"पंडित प्रवीन" कहै, धर्म्म के धुरीन[3] ऐसे, मन मेन माख्यो पीन[4] राख्यो प्रन तात को ।
मात कहै, कोमल कुमार सुकुमार मेरे छौना[5] कहूँ सोवत बिछौना करि पाति को ॥
(५१)

१२. मोह।

भ्रमजनित वैचित्य को मोह संचारी कहते हैं ॥

(यथा)

जा मुखको जग जोगी भयो औ वियोगी ह्वै जाइ मर्यो गर काटी ।
जा मुख को बहु जीवत काल, बजावत गाल रह्यो परिपाटी[6] ।
जा मुख को ब्रतधारी भयो अरु कोटि उपाय सों ठाटन ठाटी ।
सो मुख नन्द की नारि जसोमति साटी[7] लिये उगिलावति माटी ॥
(५२)

१३. स्वप्न।

निद्रावस्था मे किसी वस्तु के ज्ञान होने को स्वप्न संचारी कहते हैं ॥

(यथा)

सोवत आजु सखी सपने "द्विजदेव" जू, आनि मिले बनमाली ।
जौ लौं उठी मिलबे कहँ धाय, सो हाय भुजान भुजान पैं घाली[8] ।
बोलि उठे ये पपीगन तौं लगि, पीव कहाँ कहि कूर कुचाली ।
सम्पति सी सपने की भई मिलिबो ब्रजराज को आज को आली ॥
(५३)

१. कमल.
२. पैदल.
३. अगुआ.
४. मोटा अर्थात् पूरा.
५. पुत्र.
६. परंपरा.
७. पतली छड़ी.
८. रक्खा.

१४. विबोध।

निद्रा की प्रतिकूलावस्था को विबोध संचारी कहते हैं॥

(यथा)

अधखुली कञ्चुकी, उरोज[1] अध आधे खुले, अधखुले बेष नखरेखन के झलकैं।
कहै "पदमाकर" नवीन अध नीबी खुली, अधखुले छहरि छरा[2] के छोर छलकैं।
भोर जगि प्यारी अध उरध[3] इतै की ओर झाँकि, झँपि, झिरकि, उघारि अध पलकैं।
आँखैं अधखुली अधखुली खिरकी ह्वै खुली, अधखुले आनन पैं अधखुली अलकैं[4]॥
(५४)

१५. स्मृति।

गत पदार्थों के पुनर्ज्ञान को स्मृति संचारी कहते हैं॥

(यथा)

जा थल कीन्हे बिहार अनेकन, ता थल काँकरी बैठि चुन्यो करैं।
जा रसना[5] तैं करी बहु बातन, ता रसना सों चरित्र गुन्यो करैं।
"आलम" जौन से कुञ्जन मैं करी केलि, तहाँ अब सीस धुन्यो करैं।
नैननि मैं जे सदा रहते, तिनकी अब कान कहानी सुन्यो करैं॥
(५५)

(२)

जहाँ जहाँ ठाढ़ो लख्यो स्याम सुभग[6] सिरमौर।
उनहूँ बिन छिन गहि रहत दृगनि अजौं वह ठौर॥
(५६)

१६. आमर्ष।

दूसरे का अहंकार न सह कर उसके नष्ट करने की इच्छा को आमर्ष संचारी कहते हैं॥

१. स्तन.
२. स्त्रियों का नीवीबन्धन.
३. ऊपर.
४. बाल,केश.
५. जीभ.
६. सुन्दर.

(यथा)

जैसे तजि आसन पर्यो तू मो पासन, सु तैसे ही कछूक दिन मो हूँ तो बिसारि है।
सत औ असत कछु तोहूँ को दिखाई देत, ऐसे ऐसे कर्मन तैं तू हूँ अब हारि है।
आजुही तो एरे मेरे कर्मज[1] कुदिन[2]! कछु फल सहसा[3] को निज नैननि निहारि है।
दुष्टदलघाली "द्विजदेव" कुलपाली जब तो को देवकाली गहि पटकि पछारि है॥

(५७)

१७. गर्व।

सब की अपेक्षा अपने मे अधिकत्व बुद्धि वा सब मे न्यून बुद्धि को गर्व संचारी कहते हैं॥

(यथा)

भौंर ज्यों भ्रमत भूत बासुकी गनेस जूथ, मानो मकरन्द बुन्द माल गङ्गाजल की।
उड़त पराग पटनाल[4] सी बिसाल बाहु, कहा कहौं "केसोदास" सोभा पल पल की।
आयुध[5], सघन सर्ब मङ्गला[6] समेत सर्ब[7] पर्बत उठाय गति कीन्ही है कमल की।
जानत सकल लोक, लोकपाल, दिगपाल, जानत न बान बात मेरे बाहुबल की* ॥

(५८)

(२)

आज हौं गईती "शम्भु" न्योंते नँदगाँव, तहाँ साँसति परीहै रूपवती बनितान की।
घेरि लियो तियन, तमासो करि मोहिँ लखैं, गहि गहि गुलुफ[8] लुनाई तरवान की।
एकै कल बोलि बोलि औरन देखावै रीझि, रीझि कुमलाई औ ललाई मेरे पान की।
घूँघट उघारि एकै मुख देखि देखि रहैं, एकै लगी नापन बड़ाई अखियाँन की॥

(५९)

१. कर्म्म जनित.
२. खोटे दिन, दुर्भाग्य.
३. साहस.
४. कमल की डाँड़ी.
५. शस्त्र, हथियार.
६. पार्व्वती.
७. महादेव.
८. एँड़ी के ऊपर की गाँठ.

* कमल और कैलास के रूपक का पूर्ण निर्वाह किया है.

(यथा)

हौं जब ही जब पूजन जात पिता पद पावन[1] पाप प्रनासी ।
देखि फिर्‌यो तब ही तब रावन, सातौ रसातल के जे बिलासी[2] ।
लै अपने भुजदण्ड अखण्ड, करी छितिमण्डल छत्र प्रभा सी ।
जानै को "केसव" केतिक बार मै सेस[3] के सीसन दीन्ही उसासी[4] ॥
(६०)

१८. उत्सुकता ।

किसी कार्य्य मे विलम्ब को न सहकर तत्काल उस्मे तत्पर हो जाने को उतसुकता संचारी कहते हैं ॥

(यथा)

द्वार खरो भयो भावतो नेह तैं, मेह तैं आयो उनै अँधियारो ।
ऐसे मे चातुर आतुर ह्वै, मुरली सुर दै, कियो नेकु इसारो ।
ह्वाँ मनभावती[5] मन्दहि मन्द गई करिबे कहँ बन्द किवारो ।
अङ्क मे लाइ निसङ्क ह्वै जाइ प्रजङ्क[6] बैठाइ लियो पियप्यारो ॥
(६१)

(२)

फिरि फिरि बूझति कहि, कहा कह्यो साँवरे गात ?
कहा करत, देखे कहाँ, अली! चली क्यों बात ??
(६२)

१९. अवहित्थ ।

चतुराई से किसी बात के छिपाने को अवहित्थ संचारी कहते हैं ॥

१. पवित्र.
२. भोग करनेवाला.
३. शेष नाग, जिसपर पृथ्वी स्थित मानी गई है.
४. साँस.
५. प्यारी.
६. पलंग.
७. पूछती है

(यथा)

ज्यों ज्यों चवाव चलै चहुँ ओर, धरैं चित चाव ये त्योंहीं त्यों चोखे ।
कोऊ सिखावनहार नहीं, विनु लाज भए बिगरैले[1] अनोखे ।
गोकुल गाँव को एती अनीति, कहाँ तै दई धौं दई अनजोखे[2] ।
देखती हौ, मोहिँ माझ गली मै गही इन आइ धौं कौन के धोखे ॥
(६३)

२०. दीनता ।

दुःखादि से चित्तके नम्र होनेको दीनता संचारी कहते हैं ॥

(यथा)

पावक पुञ्जन[3] खाय अघाय घने घने घायन अङ्ग सँवारत ।
ऐसई दीन मलीन हुती, मन मेरो भयो अब तो अति आरत ।
ए मनमोहन मीत मनोज[4]! दयादृग तैं किन नेकु निहारत ?
जानत पीर जरे की तऊ, अबला जिय जानि कहा अब जारत ??
(६४)

२१. हर्ष ।

चित्त की प्रसन्नता को हर्ष संचारी कहते हैं ॥

(यथा)

चहकि चकोर उठे, सोर करि भौंर उठे, बोलि ठौर ठौर उठे कोकिल सुहावने ।
खिलि उठीं एकै बार कलिका[5] अपार[6], हिलि हिलि उठे मारुत[7] सुगन्ध सरसावने ।
पलक न लागी अनुरागी इन नैननि मै, पलटि गए धौं कबै तरु मनभावने ।
उमगि अनन्द अँसुवान लौं चहूँधा लागे, फूलि फूलि सुमन मरन्द[8] बरसावने ॥
(६५)

१. बिगड़े हुए.
२. बिना तौले.
३. समूह.
४. काम.
५. फूल की कली.
६. अनेक.
७. वायु.
८. पुष्परस.

व्रीडा.

२२. व्रीडा।

स्वच्छन्द क्रिया से संकुचित होने को व्रीडा संचारी कहते हैं॥

(यथा)

मोहन आपनो राधिका को बिपरीत को चित्र बिचित्र बनाइ कै।
डीठि बचाइ सलोनी[1] की, आरसी मैं चपकाइ गयो बहराइ[2] कै।
घूमि घरीक मै आइ कह्यो, कहा बैठी कपोलन बिन्दु लगाइ कै ?
दर्पन त्यों तिय चाह्यो तहीं, मुसुकाइ रही मुख मोरि लजाइ कै॥
(६६)

२३. उग्रता।

निर्दयपन की इच्छा को उग्रता संचारी कहते हैं॥

(यथा)

ह्वैरही कनौड़ी[3] मति, कौड़ी भई गोपी अति, डौंड़ी[4] फिरीलौंड़ी कीन लाज धारियतु है।
बनें महाराज आज, सुनै हैं समाज बाद, तातैं फिरियाद हम हूँ पुकारियतु है।
दरद हरै हैं, तब सरद निसा मैं स्याम, अब क्यों करदं[5] लै करेजा फारियतु है।
चाहियै कठोरता न एती बरजोर[6], ऊधो ! काँकरी के चोरन कटारी मारियतु है॥
(६७)

२४. निद्रा।

[नाम हीं से लक्षण स्पष्ट है॥]

(यथा)

१. सुन्दरी.
२. बहलाकर.
३. निन्दित.
४. ढिंढोरा.
५. करौली, एक प्रकार का शस्त्र.
६. जबर दस्ती.

तीसरे पहर लौं मचाई रस बस रास, परव सुपून्यो कार चाँदनी को सुख है।
पाछिले पहर नौल[1] नेह के उमाहन[2] मे आरस बलित[3] सोई स्याम सनमुख है।
सारी सेत ऊपर गोराई त्यों झलक देति "लछिराम" कछुक तिरोछो गात रुख है।
जंग जीति जगत अनङ्ग सो बिछलि पर्‌यो गङ्गधार मानो चारु चम्पा को धनुख है॥
(६८)

२५. व्याधि।

शरीर मे रोगादि के संचार को व्याधि संचारी कहते हैं॥

(यथा)

पीछे पंखा चौंर वारी, ज्यों की त्यों सुगन्ध वारी, ठाढ़ी बायें दाये बने फूलनि के हार गहे।
दाहिने अतर और अम्बर तमोर लीन्हे, सामुहें लपेटे पट भोजन के थार गहे।
नित के नियम हितू हितके बिसारि "देव" चित के बिसारे बिसराये सब वार गहे।
सम्पा[4] घन बीच ऐसी, चम्पाबन बीच फूली, डारसी कुँवरि कुम्हिलात फूली डार गहे॥

(२) (६९)

करि राख्यो निरधार[5] यह, मै लखि नारी ज्ञान।
वहै बैद, औषध वहै, वहै जु रोग निदान[6]॥

२६. मरण। (७०)

शरीर से प्राणवायु के वियोग को मरण संचारी कहते हैं॥

(यथा)

लख्यो सकबन्धी साहजादे साहजहाँ जू के, महा मारु मची तहाँ रह्यो ढेर ढहि कै।
लोह की लपट लागे, चलैं दल "नीलकण्ठ," हाड़ा छत्रसाल तहाँ रह्यो लाज गहि कै।
मण्डि रनभूमि तैसे भूप भट भारत[7] मै पारा पुनि स्वामित को सारा सार सहि कै।
टूटि सिर पर्‌यो, हर धर्‌यो हार करिबे को, तौलौं धर लर्‌यो जौलौं दारा गो निबहि कै॥
(७१)

१. नवीन.
२. उमंग.
३. लपटी हुई.
४. बिजली.
५. निश्चय.
६. रोग की पहचान.
७. महाभारत युद्ध.
८. एक नदी का नाम.

२७. अपस्मार।

किसी कारण से कम्पादिक होकर पृथ्वी पर गिर पड़ने और फेनादिक मुख मे आने से अपस्मार रोग के सदृश हो जाने को अपस्मार संचारी कहते हैं॥

(यथा)

बोलै बिलोकै न पीरी[1] गई परि, आई भले ही निकुञ्ज मझारन।
ऐसी अनैसी बिलोकनि रावरी, होत अचेत लगी कछू बारन[2]।
फेन तजै मुख तैं, पटकै कर, जौ न कियो जू बिथा निरवारन।
याहि उठाय सबै सखियाँ हम जातीं चलीं जसुदा पहँ डारन॥
(७२)

२८. आवेग।

अकस्मात् इष्ट वा अनिष्ट की प्राप्ति से चित्त के आतुर होने को आवेग संचारी कहते हैं॥

(यथा)

लटपटी पाग सिर साजत उनींदे अङ्ग "द्विजदेव" ज्यों त्यों कै सँभारत सबै बदन।
खुलि खुलि जाते पट[3] बायु के झँकोर, भुजा डुलि डुलि जातीं अति आतुरी सों छनछन।
ह्वै कै असवार मनोरथ ही के रथ पर, द्विजदेव होत अति आनँद मगन[4] मन।
सूने भये तन कछु सूनेई सुमन लखि, सूनी सी दिसान लख्यो सूनेई दृगन बन॥
(७३)

१. पीली, ज़र्द.
२. देर, बिलम्ब.
३. वस्त्र.
४. मग्न, डूबना.

(२)

सब ही के गोधन हैं, सब ही के बाला बाल, सब ही को परी आय प्रानन की भीर है।
सब ही पैं बरषत गोराधार[1] मेह यह, सब ही की छाती छेद पारत समीर है।
मेरे ही अनोखो यह बेटा है कि मागि आन्यो, बोझिलैं[2] पहार तेरे कोमल सरीर है।
गिरि याके कर तें धरीक किन लेय कोऊ, सब ही अहीर पै न काहू हीर पीर है॥

(७४)

२९. त्रास।

अचाञ्चक अहित प्राप्त से अविचारित चित्तविकार को त्रास संचारी कहते हैं॥

(यथा)

ए बृजचन्द गोविन्द गोपाल ! सुन्यो न क्यों एते कलाम[3] किये मैं।
त्यों "पदमाकर" आनँद के नद हौ, नँदनन्दन ! जानि लिये मैं।
माखन चोरी कै खोरिन[4] ह्वै चले, भाजि कछू भय मानि जिये मैं।
दूर हूँ दौरि दुर्‌यो जो चहौ, तौ दुरौ[5] किन मेरे अँधेरे हिये मैं॥

(७५)

३०. उन्माद।

कारणवश वैचित्र्य[6] वा रोगविशेष को उन्माद संचारी कहते हैं॥

(यथा)

आजु भले गहि पाये, गोपाल ! गुहौं गहि लाल तुम्हैं गुन जालहिं।
होन न देहुँ कहूँ चलचाल, सुराखौं हिये पैं मिलाय कै मालहिं।

१. मुशलधार.
२. गड्डु.
३. निवेदन.
४. गली.
५. छिपो.
६. पागलपन.

उन्माद.

बोलत काहे न बैन रसाल[1] हौ, जानत भाग भरे निज भालहिँ।
सींचि कै नैन बिसालन के जल, बाल सु भेंटत बाले[2] तमालहिँ॥
(७६)

३१. जडता।

विवेकशून्य चित्तवृत्ति को जडता संचारी कहते हैं॥

(यथा)

परम परत्र पाय न्हाय यमुना के नीर पूरि कै प्रबाहैं[3] अङ्गराग के अगर तैं।
"द्विजदेव" कीसौं, द्विजराजैं[4] अञ्जली के काज जौ लौं चहै पानिपैं[5] उठायो कञ्जकर तैं।
तौ लौं बन जाय मनमोहन मिलापो[6] कहूँ फूँकै[7] सी चलाई फूँकि बाँसुरी अधर तैं।
स्वासा कढ़ी नासा तैं, न बासतैं[8] भुजायें कढ़ीं, अञ्जली न अञ्जली तैं, आखरौ[9] न गर तैं॥
(७७)

३२. चपलता।

अस्थिरतासहित कार्य करने को चपलता संचारी कहते हैं॥

(यथा)

ढोल बजावती, गावती गीत, मचावती धूँधुरि धूरि के धारनि।
फेंट फते की कसे "द्विजदेव" जू, चञ्चलता बस अञ्चल तारनि।
औंचक ही बिजुरी सी जुरी[10] दृग, देखत मूदि लिये दिखवारनि।
दामिनी सी घनस्यामहिँ भेंटि, गई गहि गोरी गोपाल के हारनि॥
(७८)

१. रसीला.
२. छोटे.
३. धारा.
४. चन्द्रमा.
५. जल.
६. अलापी.
७. जादू.
८. बस्त्र.
९. अक्षर.
१०. मिली.

३३. वितर्क।

शङ्कासमाधानपूर्वक यथार्थज्ञान को वितर्क संचारी कहते हैं॥

(यथा)

कैधौं रह्यो राहु तैं मयङ्क[1] प्रतिबिम्बित ह्वै, कैधौं रति राजी सङ्ग मनमथ[2] सेजे मैं।
कैधौं अलि मालती सुमन पै सुमन दै कै रीझि रह्यो थकित सुगन्धन अमेजे[3] मैं।
दामिनी कदम्बिनै[4] मिली है चञ्चलाई तजि, कैधौं रजनी को अन्त दिनकर तेजे मैं।
सोई सङ्ग मोहन के मोहनी रसीली, कैधौं छबि अरसीली फसी मरकत[5] रेजे मैं॥
(७९)

(२)

जौ हौं कहौं रहियै, तौ प्रभुता प्रगट होत, चलन कहौं, तौ हितहानि नाहिँ सहनै।
भावै सु करहु, तौ उदास भाव, प्राननाथ! सङ्ग लै चलैं, पै कैसे लोकलाज बहनै।
केसो "केसोराइ" की सौं, सुनहु छबीले लाल! चले ही बनत जौ पै नाहीं राज रहनै।
तुमहीं सिखाओ सीख, सुनहु सुजान[6] प्रिय! तुमही चलत, मोहिँ जैसी कछू कहनै॥
(८०)

१. चन्द्रमा. २. कामदेव. ३. मेल. ४. मेघमाला. ५. पन्ना. ६. चतुर.

चतुर्थ कुसुम ।

अनुभाव ।

जिन क्रियाओं से रसास्वाद का अनुभव अर्थात् अनुमान हो, उनको अनुभाव कहते हैं. इसके चार भेद हैं, अर्थात् सात्त्विक, कायिक, मानसिक और आहार्य्य ॥

१. सात्त्विक ।

शरीर के अकृत्रिम[1] अङ्गविकार को सात्त्विक भाव कहते हैं. ये आठ प्रकार के होते हैं, अर्थात् स्तम्भ, स्वेद, रोमाञ्च, स्वरभंग, कम्प, वैवर्ण्य, अश्रु और प्रलय ॥

१. स्तम्भ ।

किसी कारण से सम्पूर्ण अङ्गों की गति के अवरोध[2] होजाने की स्तम्भ संज्ञा है ॥

(यथा)

देखादेखी भई, छूट तब तैं सँकुच गई, मिटी कुलकानि[3], कैसो घूँघुट को करिबो ।
लागी टकटकी, उर उठी धकधकी, गति[4] थकी, मति छकी, ऐसो नेह को उघरिबो ।

१. बे बनावट.
२. रुकजाना.
३. लज्जा.
४. चलने की शक्ति.

चित्र कैसे लिखे दोऊ ठाढ़े रहे "कासीराम" नाहीं परवाह लोग लाख करो लरिबो।
बंसी को बजैबो नटनागर बिसरि गयो, नागरि बिसरि गई गागरि को भरिबो॥
(८१)

२. स्वेद।

रोमकूप से निःसृत[1] जल की स्वेद संज्ञा है॥

(यथा)

किंकिनि, नेवर[2] की झनकारनि, चारु पसारि महा रस जालहिँ।
काम कलोलनि मे "मतिराम" कलानि निहाल कियो नँद लालहिँ।
स्वेद के बिन्दु लसैं तन मे, रति अन्तर हीं लपटानि गोपालहिँ।
मानो फली मुकुताफल पुञ्जनि, हेमलता लपटानि तमालहिँ॥
(८२)

३. रोमाञ्च।

किसी कारण से रोम के उत्थित[3] होने की रोमांच संज्ञा है॥

(यथा)

आनन चन्द सो, मन्द हँसी दुति दामिनी सी चहुँ ओर रहै वै।
"बेनीप्रवीन" बिलोचन चञ्चल, माधुरे बैन सुधासे परे च्वै।
कौतुक एक अनूप लख्यो, सखि! आजु अचानक नाह[4] गयो छ्वै।
श्रीफल[5] से कुच कामिनी के दोउ फूलि कदम्ब के फूल गए ह्वै॥
(८३)

४. स्वरभंग।

स्वाभाविक ध्वनि के विपर्यय[6] की स्वरभङ्ग संज्ञा है॥

१. निकले हुए.
२. एक प्रकार का नूपुर.
३. खड़ा होना.
४. नाथ, प्रियतम.
५. बेल का फल.
६. बदल जाना.

(यथा)

आजु चन्द्रभागा चम्पलतिका बिसाखा को बढ़ाय हरि बाग तैं कलामै करि कोटि कोटि।
साँझ समै बीथिन मै ठानि दृगमोचिनी ई[1] भोरई तैं राधे को जुगुति करि खोटि खोटि।
ललिता के लोचन मिचाये[2] चन्द्रभागा सो दुराइबे को ल्याई वै तहाँई "दास" पोटिपोटि।
जानि जानि धरी तियवानी लरवरी तकी आजी तेहिं घरी हँसि २ परी लोटि लोटि॥
(८४)

५. कम्प।

शीत, कोप और भयादि से अकस्मात् प्रत्यङ्ग के संचलित[3] होने को कम्प संज्ञा है॥

(यथा)

पहिले दधि लैगई गोकुल मै, चख[4] चारु भए नटनागर पै।
"रसखानि" करी उन चातुरता, कहैं दान दै दान खरे अरपै।
नख तैं सिख लौं पटनील लपेटे, लली सब भाँति कँपै डरपै।
मनु दामिनी सावन के घनमै, निकसै नहीं, भीतर ही तरपै॥
(८५)

६. वैवर्ण्य।

शरीर के कान्तिविपर्यय[5] को वैवर्ण्य संज्ञा है॥

(यथा)

चलिये गोबिन्दचन्द! चन्दवदनी के पास "कालिदास" आसरो धरी न पल आधे को।
तुम्हे देखि पावै, सुख पावै बहु भाँति, ताहि दीजै नेकु निरखि, नतीजा नेह नाधे[6] को।

१. आँखमुदौवल.
२. बन्द किया.
३. हिलना.
४. आँख.
५. रंग का बदल जाना.
६. सम्बन्ध,

देखत सखिन के सुखी न करि डारी, कान्ह! देह दुख पायो बिरहानल के दाधे[1] को।
पीरो परो बदन, सदन चलि देखो, स्याम! मदन सुनार हर्‌यो सुबरन[2] राधे को॥

(८६)

७. अश्रु।

कारणवश नेत्रों से सलिलप्रवाह[3] की अश्रु संज्ञा है॥

(यथा)

भेद मुकुता के जेते, स्वाति ही मैं होतु तेते, रतनन हूँ को कहूँ भूलि हू न होत भ्रम।
मोती सो न रतन, रतन हू न मोती होत, एक के भये ते कहूँ होत दूसरे को क्रम।
"द्विजदेव" की सौं, ऐसी बनक[4] निकाई देखि, रामकी दोहाई! मन होत है निहाल मम।
कञ्ज के उदर प्रगट्यो है मुकताहल सो, बाहर के आवत भयो है इन्द्रनील[5] सम॥

(८७)

(२)

न्हान समै "दास" मेरे पायन पर्‌यो है सिन्धु नश्वर रूप ह्वै कै निपट बेकार मै।
मै कह्यो, तू को है? कह्यो बूझती कृपाकै तो, सहायकछु करौ ऐसे संकट अपार मै।
हौं तौ बड़वानल, बसायो हरि ही को, मेरी बिनती सुनाओ द्वारिका के दरबार मै।
बृज की अहीरिन की अँसुवा बलित आय यमुना सतावै मोहि महानल[6] झार मै॥

(८८)

८. प्रलय।

किसी वस्तु मे तन्मय होकर पूर्व दशा की विस्मृति की प्रलय संज्ञा है॥

१. दाह, ताप.
२. सोना और सुन्दर रंग.
३. जल बहना.
४. अदा.
५. नीलम.
६. बडवानल.

प्रलय.

(यथा)

कैसी भई है दसा इन की ? तुम हूँ तौ कहौ, सब मै महती हौ।
मोहन तौ मथुरा को गए, भटू[1] ! कौन उपाय करे गहती हौ।
गोकुल ध्यान धुनी[2] मै धँसी अब ताहि कहौ किन क्यों लहती हौ।
राधे कहे कछु ऊतरु देति न, कान्ह कहे कहै, का कहती हौ॥

(८९)

२. कायिक।

कटाक्षादि कृत्रिम चेष्टाओं को कायिक अनुभाव कहते हैं॥

(यथा)

मन्द ही मन्द अनन्दित सुन्दरी, जाति हुती अपने कहूँ नाते।
आगे सबै गुरुनारि हुतीं हरए हरि बात कही इक घाते।
हाथ उठाय छुई छतियाँ, मुसुकाय कै जीभ गही दुहूँ दाँते।
बैनन हीं कह्यो हे जगदीस ! सुनैनन हीं कह्यो जाउ इहाँ ते॥

(९०)

३. मानसिक।

मनःकृत प्रमोदादिक अनुभाव को मानसिक अनुभाव कहते हैं॥

(यथा)

आवत कदम्ब कुसुमन को पराग पूरि सीरी पौन लहलही ललित लतान की।
घेरै घन घेरि घेरि पावस अँधेरी, पिक[3] केकिन[4] की टेरि गनि अरि होति मान की।
ऐसे समै कुञ्जभौन आनँद उछाह बाढ़े ठाढ़े ढिग ललना[5] मनोरथ नभान की।
सोहन सचाई बात करत रचाई दोऊ छबि सों बचाई छीटैं ओट छतनान[6] की॥

(९१)

१. सखी.
२. नदी.
३. कोइल.
४. मोर.
५. नायिका.
६. पत्तों का बनाया हुआ छाता.

४. आहार्य।

आरोपित[1] वेष को आहार्य अनुभाव कहते हैं॥

(यथा)

स्याम रङ्ग धारि पुनि बाँसुरी सुधारि करैं[2] पीतपट पारिँ[3] बानी मधुर सुनावैगी।
जरकसी पाग अनुराग भरे सीस बाँधि कुण्डल किरीट[4] हू की छबि दरसावैगी।
याही हेत खरी अरी! हेरति हौं बाट वाकी, कैयो बहुरूपि[5] हू को "श्रीधर" भुरावैगी[6]।
सकल समाज पहिचानैगो न केहूँ भाँति, आज वह बाल ब्रजराज बनि आवैगी॥
(१२)
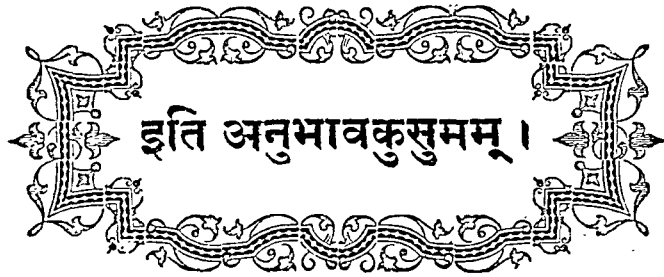
१. दूसरे के रंग रूप को धारण करना.
२. हाथ.
३. पहिनकर.
४. एक प्रकार का मुकुट.
५. बहरूपिया, जो नाना वेष धारण करते हैं.
६. भुलावैगी, धोखा देगी.

लीलाहाव.

पञ्चम कुसुम।

(अनुभावान्तर्गत)

हाव।

संयोग समय मे स्त्रियों के स्वाभाविक चेष्टा विशेष के हाव कहते हैं. ये ग्यारह प्रकार के होते हैं, अर्थात् लीला, विलास, विच्छित्ति, विभ्रम, किलकिंचित्, मोहायित, विव्वोक, विहृत, कुट्टमित, ललित और हेला॥

१. लीला।

प्रेम विवश हो प्रिया प्रियतम के अन्योन्य बेष धारण करने के लीला हाव कहते हैं॥

(यथा)

रच्यो कच[१] मौरै[२] सु मोरपखा[३] धरि काकपखा[४] मुख राखि अरालै[५]।
धरी मुरली अधराधर लै सुरली[६] सुर लीन ह्वै " देव " रसाल।

१. केश, बाल.
२. मौलि, सिर वा मुकुट.
३. मयूर के पंख.
४. ज़ुल्फ़.
५. कुटिल, घुँघराला.
६. सुरीली.

पितम्बर काछनी, पीत पटा करि बालम बेष बनावति बाल।
उरोजनि खोज[1] निवारिबे को उर पैन्ही सरोजन[2] की बनमाल[3]। (१३)

(२)

कालि भटू! बंसी बट के तट खेल बड़ो इक राधिका कीन्हो।
साँझ निकुञ्जनि माझ बजायो जु स्याम को बेनु चुराइ कै लीन्हो।
दूरि तें दौरत "देव" गए सुनि कै धुनि रोस महा चित चीन्हो।
सङ्ग की औरें उठीं हँसि कै तब हेरि हरें हरि जू हँसि दीन्हो॥ (१४)

(३)

रूप रच्यो हरि राधिका को, उनहूँ हरि रूप रच्यो छबि छावत।
गावत तान तरङ्ग दुहूँ, दुहूँ भाव बताय दुहून रिझावत।
त्यौं "भुवनेस" दुहून के नैन दुहून के आनन पैं टक लावत।
छाय रही छबि वैसई री! सुनी जो हुती चन्द चकोर कहावत॥ (१५)

(४)

राधा हरि, हरि राधिका बनि आए संकेत[4]।
दम्पति[5] रति बिपरीत सुख सहज सुरत हूँ लेत॥ (१६)

२. विलास।

संयोग समय मे कटाक्षादि अनेक क्रियाओं से पुरुष के मोहित करने को विलास हाव कहते हैं॥

(यथा)

आछे उरोज लची सी परै, कटि मत्त गयन्दन[6] की गति डोलनि।
रूप अनूपम आनँद सों अलि पीतम मोल लिये बिनु मोलनि।

१. पता.
२. कमल.
३. घुटने तक लंबी फूलों की माला.
४. इशारा से, वा प्रिया, प्रिय के मिलने का नियुक्त गुप्त स्थान.
५. पति और पत्नी.
६. गजेन्द्र, मस्त हाथी.

विच्छित्ति हाव.

को बरनै कबि "बेनी प्रबीन" रही छबि त्यों फबि गोल कपोलनि।
पैनी[1] चितौनि, रसीले बिलोचन, मन्द हँसी, मृदु[2] माधुरी[3] बोलनि॥

३. विच्छित्ति। (९७)

किंचित् श्रृंगार से पुरुष के मोहित करने को विच्छित्ति हाव कहते हैं॥

(यथा)

प्यारी कि ठोढ़ी को बिन्दु "दिनेस" किधौं बिसराम गोबिन्द के जी को।
चारु चुभ्यो कनिका[4] मनि नील को, कैधों जमाव जम्यो रजनी[5] को।
कैधौं अनङ्ग[6] सिँगार को रङ्ग, लिख्यो बर मंत्र बसी कर पी को।
फूले सरोज मे भौंरी बसी, किधौं फूल ससी मे लग्यो असी को॥

(२) (९८)

बेंदी भाल, तमोल मुख, सीस सिलसिले[7] बार।
दृग आँजे[8] राजे खरी साजे सहज सिँगार॥

४. विभ्रम। (९९)

संयोग समय मे आतुर होने से क्रिया और भूषणादिक की विपर्य्यय को विभ्रम हाव कहते हैं॥

(यथा)

ये नहिँ वाके उरोज लसैं, कत श्रीफल के फल भूमि झपेटत ?
त्यों "द्विजदेव" जू नाहक ही मुख मेरि घने अरबिन्द घुरेटत[9] !
सो तड़िता सी मिलैगी तुम्है, किन लाजन आपनो स्वाँग समेटत ?
स्याम! प्रबीन कहाइ, कहा तुम फूल छरीन भुजान सों भेंटत॥

(१००)

१. चोखी. ४. टुकड़ा. ७. भीगे, आर्द्र.
२. मुलायम. ५. रात. ८. कज्जल लगाये.
३. मीठी. ६. कामदेव. ९. धूरि से लपेटते हों.

५. किलकिञ्चत्।

संयोग समय मे श्रम, अभिलाष, गर्व, स्मित, हर्ष, भय और क्रोध के युगपत् प्रगट होने को किलकिञ्चित् हाव कहते हैं॥

(यथा)

पी के जिय जी करति, प्रीति उपजी करति, नाहीं के न जी करति, हिय हुलसी करति।
त्योरी तिरछी करति, नासा मोरि छी करति, छाती छुए की करति, साँसैं उससी करति।
"देव" स्रम सी करति, करवर सी करति, योंहीं अरसी करति, सौंहीं अरसी करति।
सीकरति ओठनि, बसीकरति आँखिन, रिसौंही सी हँसी करति, भौंहनि हँसी करति॥
(१०१)

(२)

वह साँकरी कुञ्ज की खोरी अचानक राधिका माधव भेंट भई।
मुसक्यानि भली अँचरा की अली! त्रिवली की[1] बली पर डीठि दई।
झहराइ, झुकाइ, रिसाइ "ममारख" बाँसुरिया हँसि छीनि लई।
भृकुटी मटकाय गुपाल के गाल मै आँगुरी ग्वालि गड़ाइ गई॥
(१०२)

(३)

कहति, नटति[2], रीझति, खिझति[3], मिलति, खिलति लजिजात।
भरे भौन मे करत हैं नैनन हीं सों बात॥ (१०३)

६. मोट्टायित।

संयोग समय मे कटुभाषण[4] होने पर भी प्रीति लक्षण को मोट्टायित हाव कहते हैं॥

१. स्त्रियों के उदर की तीन लड़ी. ३. खफा होती है.
२. नहीं करती. ४. कड़०, अप्रिय.

(यथा)

मान्यो न मानवती गयो प्रात ह्वै, सोचत सोय रहे मनभावन।
तेह[1] तैं सासु कह्यो, दुलही! भई बार[2], कुमार को जाहु जगावन।
मान को सोच, जगैवै कि लाज, लगी पग नूपुर पाटी बजावन।
सो छबि हेरि हेराय रहे हरि, कौन को रूसिबो, काको मनावन॥

(१०४)

७. बिब्बोक।

संयोग समय मे गर्व पूर्वक प्रियतम के अनादर को बिब्बोक हाव कहते हैं॥

(यथा)

फूलन की माल मो सों कहत मुलाम[3] ऐसी, फूलन की माल मेलि राखत न क्यों गरैं?
मेरे दृग रोज ही बतावत सरोज ऐसे, लै लै कै सरोज रोज मन मे न क्यों भरैं?
हौं तौ री न जैहौं आजु बनमाली पास, वोई पिय आइ पास पायँ[4] इत को न क्यों धरैं?
मेरो मुख चन्द सो बतावैं बृजचन्द रोज, कहो बृजचन्दजू सों चन्द देखिबो करैं॥

(१०५)

(२)

ए अहीरवारो! तोसों जोरि कर कोरि[5] कोरि बिनय सुनायो बलि बाँसुरी बजावै जनि।
बाँसुरी बजावै तो बजाव, मो बलाय जानै, बड़ी बड़ी आँखिन तैं एक टक लावै जनि।
लावै है तौ लाव टक "तोष" मोसों कहा काम परी नाम दौरि दौरि मेरी पौरि[6] आवै जनि।
आवै है तौ आव, हम आइबो कबूल्यो, पर मेरे गोरे गात[7] मै असित[8] गात छूवावै जनि॥

(१०६)

१. क्रोध.
२. बेर, विलम्ब.
३. मुलायम, नरम.
४. पैर.
५. कोटि कोटि.
६. बरोठा.
७. शरीर.
८. काला.

(३)

दानी भए नए मागत दान हौ, जानि है कंस, तौ बाँधन जैहो।
टूटे छरा, बछरादिक गोधन जो धन है सो सबै धन दैहो।
रोकत हौ बन मे "रसखानि" चलावत हाथ घनो दुख पैहो।
जैहै जो भूषन काहू तिया को, तो मोल छला[1] के लला न बिकैहो॥
(१०७)

८. विहृत।

संयोग समय मे लज्जादिक से अभिलाष की असन्तुष्टि को विहृत हाव कहते हैं॥

(यथा)

बोलि हारे कोकिल, बुलाय हारे केकी गन, सिखै हारीं सखी सब जुगुति[2] नई नई।
"द्विज देव" कीसौं लाज बैरिन कुसङ्ग इन अङ्गन हीं आपने अनीति इतनी ठई।
हाय! इन कुञ्जन तैं पलटि पधारे स्याम, देखन न पाई वह मूरति सुधामई।
आवन समै मै दुखदाइनि भई री लाज, चलन समै मै चल[3] पलन[4] दगा दई॥
(१०८)

(२)

सीस कहै, परि पाय रहौं, भुज यों कहै, अङ्क तैं जान न दीजै।
जीह कहै, बतियाँई कियो करौं, स्रौन[5] कहै, उनहीं की सुनीजै।
नैन कहै, छबि सिन्धु सुधारस को निसिबासर[6] पान करीजै।
पाएहूँ प्रीतम चित्त न चैन, यों भावतो! एक कहा कहा कीजै॥
(१०९)

१. छल्ला, अँगूठी. २. हिकमत. ३. चंचल. ४. पलक. ५. श्रवण, कान. ६. रातदिन.

९. कुट्टमित।

सुख के समय मे मिथ्या दुःखचेष्टा को कुट्टमित हाव कहते हैं॥

(यथा)

तेरी परतीति न परत अब सौंतुख[1]हू छयल! छबीले मेरी छुवै जनि छहियाँ।
राति सपने मैं जनु बैठी मै सदन सुनें, मदनगोपाल! तुम गहि लीन्ही बहियाँ।
कहै कबि "तोष" जब जैसो जैसो कीन्हो, अब कहत न बतियाँ वे, तैसो हम पहियाँ।
तुम न बिहारी! नेकु मानो मनुहारी, हम पाय परि हारी अरु करि हारी नहियाँ॥
(११०)

(२)

मोहि न देखो अकेलियै "दास" जू, घाटहुँ बाटहुँ लोग भरेसो।
बोलि उठौंगी बरेते[2] लै नाउँ, तौ लागि है आपनी दाँव अनैसो[3]।
कान्ह! कुबानि सँभारे रहौ निज, वैसी न हैं तुम चाहत जैसो।
आओ इतै करो लेन दही को, चलैबो कहूँ को कहूँ कर कैसो॥
(१११)

(३)

हेरो न हाय बिहारी! निकुंज[4], अँधेरी है सावन स्याम घटा की।
टेरो न बाँसुरी तान तरङ्गनि, भाग रची बिधि बिज्जुछटा[5] की।
फेरो न ये बछरा, लपटी लखौ माधुरी मञ्जु लतान तटा की।
घेरो न चूनरि भीजैगि यों सनी स्वेद[6] सुरङ्गनि पीत पटा की॥
(११२)

१०. ललित।

संयोग समय मे सर्बांग सरस श्रृंगारित करने को ललित हाव कहते हैं॥

१. प्रत्यक्ष.
२. जोर से.
३. बुरा.
४. लता गृह.
५. बिजली की चमक.
६. पसीना.

(यथा)

चन्द सो आनन, चाँदनी सो पट, तारे सि मोती कि माल बिभाति सी ।
आँखैं कुमोदिनी[1] सी हुलसीं, मनि दीपनि दीपक दान के जाति सी ।
हे "रघुनाथ" कहा कहिये ! पिय की तिय पूरन पुन्य त्रिसाति सी ।
आई जो न्हाई के देखिबे को बनि पून्यो कि राति मे पून्यो कि राति सी ॥
(११३)

(२)

अधरन दुति विद्रुम[2] करत, बंक[3] बिलोकनि गुञ्ज[4] ।
बहुरि जलज[5] को जलज ही करत हास रस पुञ्ज ॥
(११४)

११. हेला ।

संयोग समय में विविध विलास के प्रगट करने को हेला हाव कहते हैं ॥

(यथा)

फागु की भीर अभीरिन[6] मे गहि गोबिंदै लैगइ भीतर गोरी ।
भाई करी मन की "पदमाकर" ऊपर नाई अबीर की झोरी ।
छीनि पितम्बर कम्मर[7] तैं सु बिदा दई मीड़ि कपोलन रोरी ।
नैन नचाय कही मुसुकाय, "लला फिरि आइयो खेलन होरी" ॥
(११५)

१. कुँई का फूल.
२. मुगा.
३. वक्र, टेढ़ा.
४. घुमची.
५. मोती.
६. अहिरन.
७. कटि
८. मीजकर.

षष्ठ कुसुम।

विभाव।

विशेष कर जो रस को प्रगट करते, उन्हैं विभाव कहते हैं. इन्के दो भेद हैं, अर्थात् उद्दीपन और आलम्बन॥

१. उद्दीपन।

जो रस को प्रोत्तेजित[1] करते, उन्हैं उद्दीपन विभाव कहते हैं. जैसे सखा, सखी, दूती, ऋतु, पवन, वन, उपवन, चन्द्र, चाँदनी, पुष्प और परागादि॥

(यथा)

तौलौं हौं न बोली, जौलौं चातक[2] मयूर[3] बोले, मैन की मरोर नैन कोरऊ न खोली मै।
खुलि रही खूब खुसबोय की लहरि, तैसे सीतल समीर डोले, तनिकऊ न डोली मै।
सुकवि "निहाल" मैन[4] मन मै उमगि आए, फरकि उठे उरज उतङ्ग[5] जुग चोली मै।
कूकि उठी कोइल कसाइन कहाँ तैं आय, देखि घन स्याम, घनस्याम! तोसों बोली मै॥

(११६)

(२)

सोक[6] मति दीजै, लीजै एतियै बड़ाई, नाम रावरो असोक[7]! सब जानै थलु थलु है।
आजु लगि जानति हुती मै तुम्है अम्ब[8]! कहा बापुरी बियोगिनि तैं कीन्हो एतो छलु है?

१. तेज करना. ४. काम. ७. वृक्ष विशेष और शोक को दूर करने वाला.
२. पपीहा. ५ ऊँचे, ८. आम का वृक्ष और माता.
३ मोर. ६. अफ़सोस.

एहो चम्पमाल! बालपन को न मानो सुख, करुना[1]! पियारे करुना को यह थलु है।
ह्वैकै मैनसङ्ग! कत सालो अङ्ग अङ्ग प्रति! एहो करवीर[2]! बीर सींचिबे को फलु है॥
(११७)

(३)

डहडही बौरीं मञ्जु डार सहकारन[3] की, चहचही चुहिल चहूँ कित अलीन[4] की।
लहलही[5] लोनी लता लपटी तमालनसों, कहकही तापै कोकिला के काकलीन[6] की।
तहतही करि "रसखानि" के मिलन हेतु, बहबही बानि तजि मानस मलीन की।
महमही मन्द मन्द मारुत मिलनि, तैसी गहगही खिलनि गुलाब के कलीन की॥
(११८)

(४)

झुँकि रसाल[7] सौरभ[8] सने मधुर माधवी[9] गन्ध।
ठौर ठौर झूमत, झपत भौंर भौंर[10] मधु अन्ध॥
(११९)

१. सखा।

जो पुरुष सुख दुःखादि समयों मे नायक की समानता[11] को प्राप्त होते, उन्हें सखा कहते हैं. ये चार प्रकार के होते हैं. अर्थात्, पीठमर्द, विट, चेट और विदूषक॥

(यथा)

"दास" परस्पर प्रेम लख्यो गुन, छीर[12] को नीर मिले सरसातु है।
नीर बेचावत आपनो मोल जहाँ जहाँ जाइ कै छीर बिकातु है।

१. वृक्ष विशेष और दया.
२. कनइल.
३. सुगन्धित आम का वृक्ष.
४. भौंरा.
५. हरीभरी.
६. कोइल का शब्द.
७. आम का वृक्ष.
८. सुगन्ध.
९. पुष्पलता विशेष.
१०. झुण्ड.
११. बराबरी.
१२. दूध.

पावक[1] जारन छीर लगै तब नीर जरावत आपनो गातु है।
नीर बिना उफनाइ कै छीर सु आगि मै जात मिले ठहरातु है॥
(१२०)

१. पीठमर्द।

मानिनी स्त्रियों के प्रसन्न करने मे समर्थ सखा को पीठमर्द कहते हैं॥

(यथा)

घोर[2] घटा उमड़ी चहुँ ओर तैं, ऐसे मै मान न कीजै अजानी[3]!
तू तौ बिलम्बति[4] है बिन काज, बड़े बड़े बूँदन आवत पानी।
"सेख" कहै, उठि मोहन पै चलि, को सब राति कहैगो कहानी?
देखु री! ये ललिता सुलता, अब तेऊ तमालन सों लपटानी॥
(१२१)

२. विट।

सम्पूर्ण काम कला मे निपुण सखाको विट कहते हैं॥

(यथा)

आज रूप आगरी बिलोकी बृज नागरी मै, अङ्ग अङ्ग रूप की तरङ्ग उमगति है।
"कृष्ण" प्रान प्यारे! बरनत न बनत केहूँ, जोबन की जोति जगाजोति[5] सी जगति है।
को है ऐसी और तिय सुरपुर नागपुर वाके आगे? जाकी जोति दृगन पगति[6] है।
जाके लोनें[7] तन की ललित परछाँहीं आगे सरद जुन्हाई[8] परछाँहीं सी लगति है॥
(१२२)

१. अग्नि.
२. भयंकर.
३. अज्ञान स्त्री.
४. देर करती है.
५. तेजमय.
६. मिलजुल जाती है.
७. सुन्दर, लावण्ययुक्त.
८. चांदनी.

(२)

भौन अँध्यरोई चाहि अँध्यारो, चमेली के पुञ्ज के कुञ्ज बने हैं ।
बोलत मोर, करैं पिक सोर, जहाँ तहाँ गुञ्जत भौंर घने हैं ।
"दास" रच्यो अपने हीं विलास[1] को मैन जू हाथन सों अपने हैं ।
कूल कलिन्दिजा के सुख मूल लतान के विन्द[2] वितान[3] तने हैं ॥

(१२३)

३. चेट ।

नायक नायिका के एकत्र[4] करने मे चतुर सखा के चेट कहते हैं ॥

(यथा)

रूप अनूप सखा सजि कै वृषभानु दुलारी के भौन सिधायो ।
"चैन" कहै, लखि नन्दलला विलखे[5] से तबै या उपाय उपायो[6] ।
आज मिलै जौ न प्रीतम सों, फिरि सो न मिलै, यों पुराननि गायो ।
बाल तबै अकुलाय उठी, ललचाय कै प्रीतम कंठ लगायो ॥

(१२४)

४. विदूषक ।

कौतुक से नायक वा नायिका के प्रसन्न करने मे समर्थ सखा के विदूषक कहते हैं ॥

(यथा)

१. केलि.
२. समूह.
३. शामियाना.
४. एक जगह.
५. दुःखित हुए.
६. रचा.

मण्डन.

आप ही कुञ्ज के भीतर पैठि सुधारि कै सुन्दर सेज बिछाई।
बातैं बनाय सटाकेनटा[1] करि माधो सों आय कै राधा मिलाई।
आली! कहा कहौं हाँसी कि बात, बिदूषक जैसी करी निठुराई[2]।
जाइ रह्यो पिछवारे उतै, पुनि बोलि उठ्यो बृषभानु[3] की नाई॥
(१२५)

२. सखी।

जिस सहचरी से नायिका और नायक किसी वार्त्ता के। गोपन नहीं करते, उसके। सखी कहते हैं. इन्के चार कार्य्य हैं, अर्थात् मण्डन, शिक्षा, उपालम्भ और परिहास॥

(यथा)

पूरब तैं फिरि पश्चिम ओर कियो सुरआपगा[4] धारन चाहै।
तूलन[5] तोपि कै ज्यों मति मन्द हुतासन[6] दण्ड प्रहारन चाहै।
"दास" जू देखि कलानिधि[7] कालिमा[8] छूरिन सों छिलि डारन चाहै।
नीति सुनाय कै मो मन तैं नँदलाल के। नेह निवारन चाहै॥
(१२६)

१. मण्डन[9]।

(यथा)

मंजन[10] कै दृग अञ्जन दै, मृग खञ्जन[11] की गति देखत भूली।
"बेनी प्रबीन" अभूषन अम्बर[12] औरऊ अङ्गन कै अनुकूली।

१. अट्ट सट्ट.
२. निर्दयपन.
३. राधिका के पिता.
४. गङ्गा नदी.
५. रुई.
६. अग्नि.
७. चन्द्रमा.
८. स्याही, कलंक.
९. शृङ्गार करना.
१०. स्नान.
११. खँडरुच पक्षी.
१२. वस्त्र.

राधे को आजु सिँगार्‌यो सखी, न तिलोक की कोऊ तिया सम तूली[1]।
सोने कि बेलि सुगन्ध समूह, मनों मुकता मनि फूलनि फूली ॥
(१२७)

२. शिक्षा।

(यथा)

याहि मति जानो है सहज, कहै "रघुनाथ" अति ही कठिन रीति निपट कुढङ्ग की।
याहि करि काहू काहू भाँति सों न कल[3] पायो, कलपायो[2] तन मन मति बहुरङ्ग की।
और हू कहौं, सो नेंक कान दै कै सुनि लीजै, प्रगट कही है बात बेदन[4] के अङ्ग की।
तब कहूँ प्रीति कीजै, पहिले तैं सीख लीजै, बिछुरन मीन की औ मिलन पतङ्ग[5] की ॥
(१२८)

(२)

नदिन मे धँसि धँसि, फूलन मे बसि बसि बहै मन्द मारुत, गहै न चपलाई[6] है।
कहै "शिव" कवि कोऊ प्यारेसों न न्यारी रहो, रीझि रीझि देत यह कोकिल दोहाई है।
सजनी! न मान करु ऐसी समै, कैसी सोभा रजनी बसन्तकी अनन्त सरसाई है।
ब्याज करि चाँदनी को मैन मजलिस काज चन्द है फ़रास चारु चाँदनी बिछाई है ॥
(१२९)

(३)

आगे तौ कीन्ही लगालगी लोयन[7] कैसे छिपै अजहूँ जो छिपावति ?
तू अनुराग[8] को सोध[9] कियो बृज की बनिता सब यों ठहरावति।
कौन सकोच रह्यो है "नेवाज" जौ तू तरसै उन हूँ तरसावति।
बावरी! जौपै कलङ्क लग्यो, तौ निसङ्क ह्वै काहे न अङ्क लगावति ?
(१३०)

१. समान, तुल्य.
२. आराम, चैन.
३. दुःखित किया.
४. चतुर्वेद, क्लेश.
५. फतिंगा, परवाना.
६. तेजी, तिग्मता.
७. लोचन.
८. प्रीति.
९. खोज.

(४)

चन्द्रिका[1] सी कहि हास छटा, जग नाइक ही उपहास करै हौ ।
त्यों "द्विजदेव" जू नाइक ही कहि कञ्जदृगी नित वाहि लजै हौ ।
ऐसी अनोखी अनोखी घनी घनी बातैं बनाय कहा फल पै हौ ?
कै पिकबैनी उड़ाय हौ वाहि ? मयङ्कमुखी कै कलङ्क लगै हौ ॥
(१३१)

(५)

बलि! कञ्ज सो कोमल अङ्ग गोपाल को, सोऊ सबै तुम जानती हौ ।
वह नेक रुखाई धरे कुँभिलात, इतो हठ कौन पैं ठानती हौ ?
कबि "ठाकुर" यों कर जोरि कहै, इतने पै बिनै नहीं मानती हौ ।
दृगबान औ भौंहैं कमान सु तौ तुम कान लौं कौन पै तानती हौ ॥
(१३२)

(६)

बार ही गोरस बेंच री आज, तू मायके मूड़ चढ़ै मति मौड़ी[2] ।
आवत जात ही होय है साँझ, वहै जमुना भतरौंड़[3] लौं औड़ी[4] ।
ऐसे मै भेंटत ही "रसखानि" ह्वै हैं अँखियाँ बिन काज कनौड़ी[5] ।
एरी बलाय लूँ! जाय है बाज, अबै बृजराज सनेह को डौंड़ो ॥
(१३३)

(७)

और सों केतऊ बोलै हँसै, प्रिय प्रीतम की तू पियारी है प्रान की ।
केतौ चुनै चिनगीयै चकोर, पै चोप[6] है केवल चन्द्र छटान की ।
जौ लौं न तू तबही लौं अली! गति "दास" के ईसके और तियान की ।
भास तरैयन मै तब लौं, जब लौं प्रगटै नहीं दीपति भान की ॥
(१३४)

१. चाँदनी.
२. मूढ़ बालिका.
३. ग्राम विशेष.
४. उमड़ी हुई.
५. लज्जित.
६. चाह.

(८)

वारियै[1] बैस, बड़ी चतुरै हौ, बड़े गुन "देव" बड़ीयै बड़ाई ।
सुन्दरै हौ, सुघरै हौ, सलोनी हौ, सील भरी, रस रूप सनाई ।
राज बहू, बलि राज कुमारि, अहो सुकुमारि ! न मानौ मनाई ।
नेसुक[2] नाह के नेह बिना, चकचूर[3] ह्वै जै है सबै चिकनाई[4] ॥
(१३५)

(९)

कहा लरैते दृग किये ? परे लाल बेहाल ।
कहुँ मुरली, कहुँ पीतपट कहूँ लकुट, बनमाल ॥
(१३६)

३. उपालम्भ[5] ।

(यथा)

पहिले अपनाय सुजान ! सनेह सों, क्यों फिरि नेह को तोरियै जू ?
निरधार अधार दै धार मझार, दई गहि बाँह न बोरियै जू !
"घन आनद" आपने चातक को गुन बाँधि कै मोह न छोरियै जू !
रस प्याय कै ज्याय बढ़ाय कै आस, बिसास[6] मे यों बिष घोरियै जू !!
(१३७)

(२)

हार हिये टुट हीरन के सजवाए जो भूषन भाव मै गोरी ।
ऐसी न चाहिए रावरे को, कवि "देव" जू भामिनी[7] बैस की थोरी ।
वा समै आपनें अङ्ग मे लै हरि ! जो तू रची करि कै बर जोरी ।
आरसी लै अवलोकि रही अब लौं वही लागी ललाट मै रोरी ॥
(१३८)

१. थोडी, कम उमर.
२. किंचित्, तनक.
३. नष्ट, निष्फल
४. शृङ्गार, सौन्दर्य्य.
५. उलाहना.
६. विश्वास.
७. स्त्री.

४. परिहास[1]।

(यथा)

कल कञ्चनै[2] सी वह अंग कहाँ, कहाँ रंग कदम्बिनि तैं तनु कारो !
कहाँ सेजकली बिकलो वह होय, कहाँ तुम सोय रहौ गहि डारो !
नित "दास" जू ल्यावही ल्याव कहौ, कछू आपनो वाको न बीच बिचारो !
वह कौन सी कोरी किसोरी कहाँ, औ कहाँ गिरिधारन पानि[3] तिहारो !!

(१३९)

३. दूती।

नायक नायिका के मध्य मे सन्देश लेजाने वाली स्त्री को (साहित्य में) दूती कहते हैं. ये चार प्रकार की होती हैं, अर्थात् उत्तमा, मध्यमा, अधमा और स्वयम्, और प्रत्येक के दो कार्य्य हैं, अर्थात् संघट्टन[4] और विरहनिवेदन[5] ॥

(यथा)

सौंह करि कहति हौं, एहो प्यारे "रघुनाथ" आवति रखाएँ वादो उनहीं के घर सों।
जैसे बनै तैसे द्योस[6] आजको बितीत कीजै, अब अकुलाइयै ना पागे प्रेम बर सों।
जापर गुलाल मूठि डारी सो मिलैगी काल्हि, मारी पिचकारी बाल प्यारी तीन परसों[7]।
खेलत मैं होरी रावरे के करबर सों जो भीजी ही अतर[8] सों सो आय है अतरसों[9] ॥

(१४०)

हौं रीझी, लखि रीझि हौ छबिहि छबीले लाल !
सोनजुही[10] सी होति दुति[11] मिलत मालती माल ॥

(१४१)

१. दिल्लगी. ठिठोली.
२. कुन्दन.
३. हाथ.
४, मिलाना.
५. वियोग के दुखड़ों को सुनाना.
६. दिन.
७. तीसरे दिन.
८. इत्र, सुगन्धितद्रव्य.
९. चौथे दिन.
१०. पुष्पविसेष
११ चमक, शोभा

१. उत्तमा।

उत्तम रूप से दूतत्व करने वाली प्रियभाषिणी स्त्री को उत्तमा दूती* कहते हैं॥

१. संघट्टन।

(यथा)

बूड़े जलजात, कूर कदली कपूर खात, दाड़िम[1] दरकि[2] अंग उपमा न तौलै री।
तेरे स्वास सौरभ को त्रिविध समीर धीर बिबिध लतान तीर बन बन डोलै री।
पपिहा पिहूकि, कारी कोइल कुहूकि हारी बानी सुनि तेरी, मुख मानी तू न खोलै री।
"पण्डित प्रबीन" बनि हाकिम नबीन, तोहि प्यारी! चलौ कुञ्जन बिहारी बेगि बोलै[3] री॥
(१४२)

(२)

कूजत सिखण्डी[4] हैं कलिन्दनन्दिनी के तीर, वा कदम्ब खंडिन[5] कदंबनि बिहरि कै।
ताके तरे कौतुक है अदभुत "कृष्णलाल" रावरे चले तै हौं देखाऊँगी दवरि कै।
टाढ़ी हेम लतिका पैं नागिनि कुटिल कारी, पूँछ छबि छोर देख्यो छिति मैं पसरि कै।
कंज[6], केल[7], केहरी[8], सकूप[9], गिरि, कंबु[10], कीर[11], कैरव[12], कलानिधि[13] को फनसों पकरि कै॥
(१४३)

(३)

बिकसी बसन्तिका[14] सुगन्ध भरी "शिव" कबि औरै ढंग भए बन कुञ्ज के थलीन[15] के।
कोकिल के कलकल[16] कल नहीं देत पल, चारो ओर सोर सखि! सुनियै अलीन के।

१. अनार. ५. बाग. ९. कूँआ. १३. चन्द्रमा.
२. फटकार. ६. कमल, १०. शंख. १४. पुष्पविशेष
३. बोलावै. ७. केला. ११. सुग्गा. १५. परती (भूमि.)
४. मोर. ८. सिंह. १२. कूँई. १६. चँहकार.

* दूती उपमानें से उपमेयों का लक्ष्य करा नायिका का नख शिख वर्णन कर देती है. इसी को रूपकातिशयोक्ति अलंकार कहते हैं॥
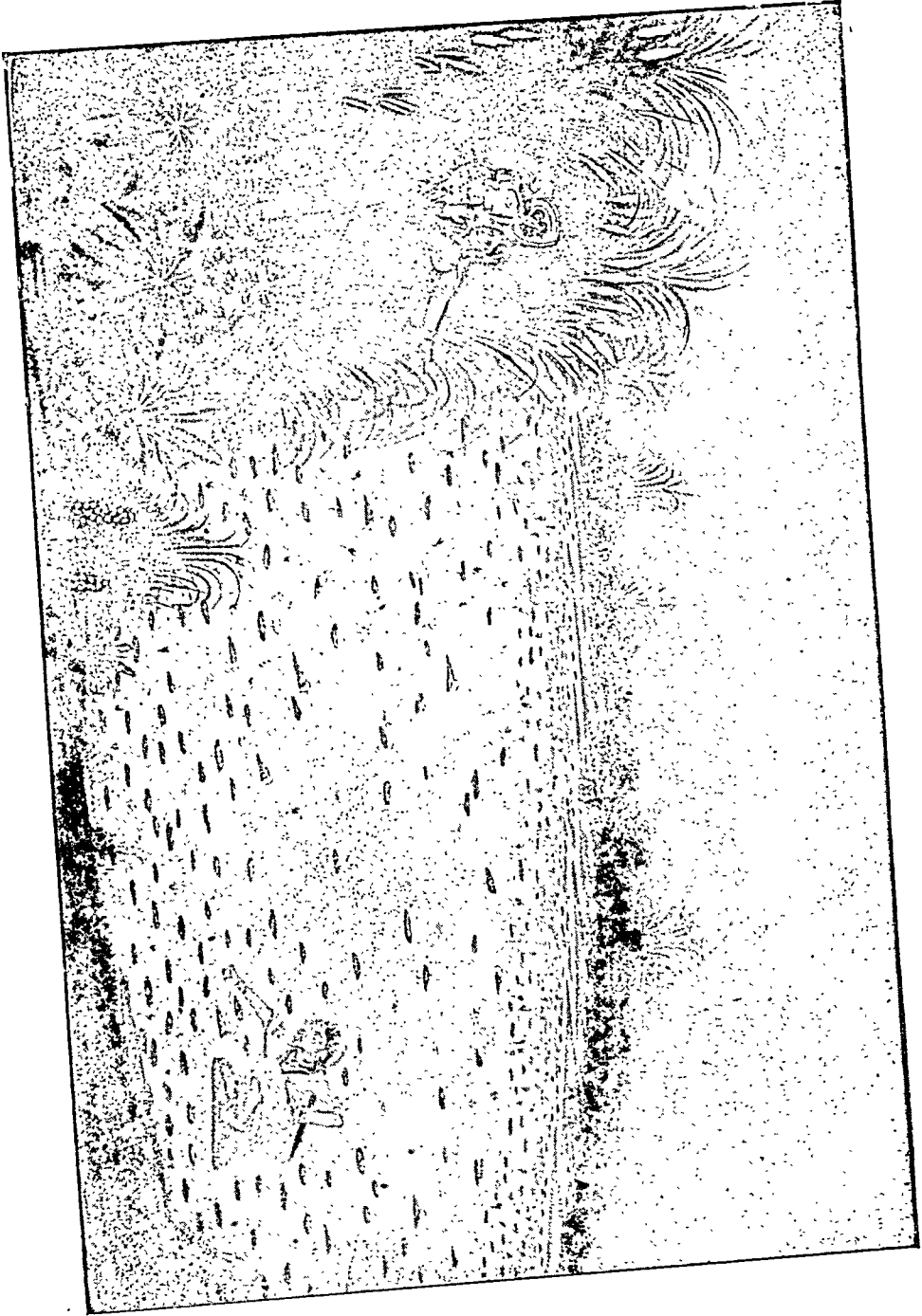
संघट्टन.

ऐसे समै मान प्रानप्यारे सों न कीजियै री, मेटिबे को मान माननी के अवलीन[1] के ।
देखो रतिराज काज ऋतुराज[2] कारीगर, गुरुज[3] बनाए हैं गुलाब की कलीन के ॥
(१४४)

(४)

आय आय बादर रहे हैं नभ छाय छाय, अधिक अँधेरी भई जैसी निसि कारी मे ।
बोलि बोलि दादुर करत घन घोर सोर, तड़िता तरपि बुन्द परत कियारी मे ।
कहै "कमलापति" बखानत बनै न मो तैं, जैसी जाय देखी अबै सोभा फुलवारी मै ।
बारी बैसवारी ! कही मानि लै हमारी, आज को न हरियारो[4] करै ऐसी हरियारी मै ॥
(१४५)

(५)

होति हरे नव अंकुर[5] की छबि छाँह कछारन[6] मे अनियारी[7] ।
त्यों "द्विजदेव" कदम्बन गुच्छ नएई नए उनए सुखकारी ।
कीजियै बेगि सनाथ उन्है, चलियै बन कुञ्जन कुञ्जबिहारी ।
पावस काल के मेघ नए, नव नेह नई बृषभानु दुलारी ॥
(१४६)

(६)

घूमि घने घुमरैं घनघोर चहूँ चढ़ि नाचत मोर अटारी ।
त्यों "द्विजदेव" नई उनई दरसाति कदम्बन की छबि न्यारी ।
चूनरी सी छिती मानो बिछी, इमि सोहति इन्द्रबधू[8] की पत्यारी[9] ।
काहि न भावति ऐसी समै, ठकुराइन ! या हरियारी तिहारी ॥
(१४७)

१. समूह, २. बसन्त. ३. गदा. ४. कृष्ण से प्रीति. ५. अंखुआ. ६. नदी का किनारा. ७. अनिर्वचनीय, श्यामता. ८. वीरबहूटी कृमि. ९. पाँति, कितार.

(७)

पूजन जौ हरिवासर[1] चाहती "बेनी प्रबीन" किये रहौ आसा ।
आई बतावन हौं तुम्हैं राधिके ! लीजियै जानि न कीजियै सासा[2] ।
साँझ ही पाइहौ मेरी भटू ! मिलि है नहीं जौ रबि के परगासा ।
कालिंदी के तट ऊँचे कराल करील कदम्ब तहाँ पियबासा[3] ॥

(१४८)

२. विरह निवेदन ॥

(यथा)

आधी लै उसास मुख आँसुन सों धोवै, कहूँ जोवै कहूँ आधे आधे पलनि पसारि कै ।
नींद, भूख, प्यास, ताहि आधी हू रही न तन, आधे हू न आखर सकत अनुसारि[4] कै ।
"द्विजदेव" की सौं, ऐसी आधि[5] अधिकानी, जासो नेकहू न तन मन राखति सँभारि कै ।
जादिन तैं जोरि मनमोहनी लला पैं डीठि राधे ! आधे नैननि तैं आई तू निहारि कै ॥

(१४९)

(२)

डारे कहूँ मथनि, बिसारे कहूँ घी को घड़ा, बिकल बगारे कहूँ माखन, मठा, मही ।
भ्रमि भ्रमि आवति चहूँघा तैं सु याही मग, प्रेम पय पूर के प्रबाहन मनौ बही ।
झरसि[6] गई धौं कहूँ काहू की बियोग झार, बार बार बिकल बिसूरति[7] यही यही ।
एहो बृजराज ! एक ग्वालिनि कहूँ की आज भोरही तैं द्वार पैं पुकारति दही दही[8] ॥

(१५०)

१. एकादशी तिथि और कृष्णसे दिन में.
२. सन्देह, असमंजस.
३. प्रिय का वासस्थान और पुष्प विशेष.
४. आरम्भ.
५. चित्त की व्यथा.
६. जल गई.
७. विकल होकर गुण कहती है.
८. जरी, जरी.

(३)

स्वेद कढ़ि आयो,बढ़ि आयो कछु कम्प, मुख हू तैं अति आखर कढ़त अरसै लगे।
"द्विजदेव" तैसे तन तपत तनूरन[1] तैं, तपन तनूर से सरीर झरसै लगे।
एते पैं तिहारी सौं तिहारे बिन स्याम! बामै[2] नैननि तैं आँसू हू सरस बरसै लगे।
एक ऋतुराज काल्हि आयो बृज माह, आज पाँचौ ऋतु प्यारी के सरीर दरसै लगे॥
(१५१)

(४)

जा दिन तैं तजी तुम, ता दिन तैं प्यारी पै कलादै[3] कैसो पेसो लियो अधम अनंग है।
रावरे को प्रेम खरो हेम निखरौहैं[4], भ्रम द्रवतै[5] उसासन रहत बिनु ढंग है।
कहा कहौं,घनस्याम! वाकी अति आँचन तैं औरहू को भूल्यो खान,पान,रस,रंग है।
काढ़िकै मनोरथ बिरह हिय भाठी[6] कियो,पद कियो लपटै[7], अंगारो कियो अंग है*॥
(१५२)

(५)

तुम्हैं देखिबे की महा चाह बाढ़ी, बिलापै, बिचारै, सराहै, स्मरै[8] जू!
रहै बैठि न्यारी, घटा देखि कारी बिहारी, बिहारी, बिहारी, ररै[9] जू!
भई काल बौरी सि दौरी फिरी, आजु बाढ़ी दसा ईस काधौं करै जू!
बिथामै ग्रसी[10] सी,भुजङ्गैं डसी सी, छरी[11] सी, मरी सी, घरी सी, भरै जू!!
(१५३)

(६)

जौ वाके तन की दशा देखन चाहत आप।
तौ बलि[12]! नेक बिलोकियै, चलि औंचक चुपचाप॥
(१५४)

१. तंदूर, चूल्हा. ५. गलता हुआ. ९. बार २ कहती.
२. स्त्री. ६. धौंकनी. १०. घिरी.
३. सोनार. ७. अग्नि की ज्वाला। ११. छली.
४. साफ़ हुए. ८. याद करती है. १२. प्रिय.

* बिरहिणी नायिका की दशा को स्वर्णकार (सोनार) के कर्म्म से तुलना किया है॥

२. मध्यमा ।

मध्यम रूप से दूतत्व करने वाली प्रियाप्रियभाषिणी स्त्री को मध्यमा दूती कहते हैं ॥

१. संघट्टन ।

(यथा)

लीन्हे लेत ज्ञान कोऊ, छीनि लेत आनबान, लूटे लेत कोऊ हठि[१] लाज के समाज को ।
'द्विजदेव' कीसौं, या अँध्यारी की अधाधुँधी[२] मैं लेत कोऊ कान्ह सुखसम्पति के साज को ।
एरी मेरी बीर ! जऊ मानि मान दोष, तऊ समय बिचारि कीजै ऐसे ऐसे काज को ।
तोहि इत मान के अनादरन घेर्‌यो उत बादरन घेर्‌यो जाय जाय बृजराज को ॥
(१९९)

(२)

कैला करी कोकिल, कुरंग बार कारे करे, कुढ़ि कुढ़ि केहरी कलङ्क लङ्क[३] हद[४] लो ।
जरि जरि जम्बू[५] नद, बिद्रुम बिरंग[६] होत, अँग फाटि दाड़िम, त्वचा[७] भुजंग बदली ।
एरी चंदमुखी ! तू कलंकी कियो चन्द, तोहिं बोलै[८] बृजचन्द कबि "केसोदास" अदली[९] ।
मूर छार[१०] डारि गजराजऊ पुकारे करैं, पुण्डरीक[११] बूड़्यो री, कपूर खायो कदली[१२] ॥
(१९६)

(३)

जैसे तब, तैसे अब, भूलि हू न कीजै रोस[१३], सुनो री सहाय और सब को सुनाई है ।
सब ही सों कहति पुकार 'सावधान[१४] रहो' सुनियत वाके संग कोकिल कसाई है ।
कहत "प्रवीन राय" आपनी न ठौर पाय, हिलि मिलि रहौ री बसन्त ऋतु आई है ।
कहत फिरत भौंर, भौंरी भौन भामिनी सों, मान करै आली, ताहि मदन दोहाई[१५] है ॥
(१९७)

१. बलात्कार.	६. बदरंग.	११. कमल.
२. अतिशय.	७. चमड़ा	१२ केला.
३. कटि.	८. बोलावैं.	१३ क्रोध.
४. मर्यादा.	९. न्यायी.	१४. हुशियार.
५. सुवर्ण.	१० धूर.	१५. शपथ.

दौरि दूर तैं मै आई कहिबे तिहारे पास, देखि मनमोहनी को मोहन! अनूप बेस[1] ।
ताकी "कमलापति" सुसील सुन्दराई वारी, समता न पावै रचै रूप रति[2] हू हमेस ।
सीरे[3] नैन कीजै चलि बलि! जमुना के तीर भूषन सों भूषित बिलोकि औरै नखतेस[4] ।
फूली फूलबेली सी नवेली बाल झूलति है फूल के हिँडोरे आजु फूलनसों गूँथे केस ॥
(१५८)

(५)

माधवी मण्डप मण्डित[5] कै महकै मधु यों मधु पान करै री ।
राती लतान बितानन तानि मनोज हू साजि रह्यो सरसै[6] री ।
धीर रसाल की बोड़िन[7] बैठि पुकारत कोकिल डौंड़िन दै री ।
भूलि हू कन्त सों ठानबी मान सो जानबी बीर बसन्त को बैरी ॥
(१५९)

२. विरह निवेदन ।

(यथा)

साँझ के औचकि औधि दै आए, बितावन चाहत याहू बिहानहिँ ।
कान्ह! जू कैसे दया के निधान हौ? जानौ न काहू के प्रेम प्रमानहिँ ।
"दास" बड़ोई बिछोह कै मानती, जाति समीप के घाट नहानहिँ ।
कोस के बीच कियो तुम डेरो, तौ को सकै राखि पियारी के प्रानहिँ ॥
(१६०)

३. अधमा ।

अधम रूप से दूतत्व करने वाली कटुवादिनी स्त्री को अधमा दूती कहते हैं ॥

१. रूप.
२. काम की स्त्री.
३. ठंढे.
४. चन्द्रमा.
५. शोभित.
६. अधिक सुन्दर.
७. बौर की कली.
८. वायदे की मियाद.

१. संघट्टन ।

(यथा)

सील भरी खरी करी आपने कहे मे आँखैं, घरी घरी घरही मैं घूँघट सँभारि लै ।
गोकुल मे बसि कुलकानिन कहाय, प्यारी ! आनन[1] छपाय दृग नीचे कै निहारि लै ।
कहै कवि "कासीराम" सीता, इन्दुमती अरु सती, पारवती कैसो पतिव्रत पारि लै ।
जौलौं तेरी डीठि न परै री नन्दलाल तौ लौं, गरबीली गूजरी ! गवाँरी गालै मारि लै ॥

(१६१)

२. विरह निवेदन ।

(यथा)

हौं तौ तकि[3] आई ताहि तरनि तनूजा[4] तीर, ताकि ताकि तारापति[5] तरफति[6] ताती[7] सी ।
कहै "पदमाकर" घरीक ही मैं घनस्याम ! काम तौ कतलबाज[8] कुञ्जन ह्वै काती[9] सी ।
याही छन वाहि जौ पै मोहन ! मिलौगे तौ पै लगनि लगाय एती अगिनि अवाती[10] सी ।
रावरी दोहाई ! तो बुझाए ना बुझैगी फेरि, नेह भरी नागरी की देह दिया बाती सी ॥

(१६२)

(२)

को कहि बाल गोपालहि बोधहिं[11] ? तो दृग बान अमान[12] लगे री !
तो हित प्यारी ! भए बदनाम, अराम बिसारि दिये घर के री !
"ठाकुर" तू न तऊ पिघिली इतने पर, लालन बार घने री !
प्रीतम की सुभई गति या, छतिया कसकी न कसाइनि तेरी !!

(६३)

१. मुख. २. सीट, डींग. ३. देख. ४. यमुना. ५. चन्द्रमा. ६. तड़फड़ाती. ७. जलती सी. ८. मारनेवाला. ९. छोटी तलवार. १०. आने वाली. ११. समझावै. १२. असह्य, बेहद.

(३)

ऐहै न फेरि गई जो निसा, तन जोबन है घन की परछाहीं।
त्यों "पदमाकर" क्यों न मिलै उठि, यों निबहैगो न नेह सदाहीं।
कौन सयानि, जो कान्ह सुजान सों ठानि गुमान रही मन माहीं?
एक जौ कञ्जकली न खिली, तौ कहा कहूँ भौंर को ठौर है नाहीं॥

(१६४)

४. स्वयंदूती।

नायक से स्वयं दूतत्व कर निज अभिप्राय को प्रगट करने वाली स्त्री को स्वयंदूती कहते हैं॥

१. संघट्टन।

(यथा)

पन्थ[1] अति कठिन, पथिक कोऊ संग नाहिँ तेज भये तारागन, छँ[2]है भयो रबि है।
खग[3] ताके[4] बिटप[5], मधुप[6] चले कलन[7] को, कंज गए सँकुचि, कुमोदिनी मैं छबि है।
जोगी है, तौ बिरह के ज्वला की जरी[8] बताव, भोगी है, तौ कहु, कामपीर कैसे दबि है?
जोतिषी जौ है, तौ कहु, पीउ घर ऐहैं कब? बरनन कीजै घटा, जौपै कोऊ कबि है॥

(१६५)

(२)

घटा घहरात, ता मैं बीजुरी न ठहरात, सीतल समीर त्योंहीं लाग्यो मेह भर है।
पौरिये[9] रतौंधी[10] आवै, सखी सबै सोय रहीं, जागत न कोऊ, परदेस मेरो बर है।
ननद नियारी[11] सास मायके सिधारी, देखि भारी अंधियारी, तामैं सूझत न कर है।
सावन की सूनी अधराति निसि जागि[12] जागि जागि, रे बटोही! इहाँ चोरन को डर है॥

(१६६)

१. रास्ता २. अस्त. ३. पक्षी. ४. चले. ५. बसेरे का वृक्ष. ६. भौंरा. ७. नवपल्लव, गोफा. ८. जड़ी, बूटी. ९. द्वारपाल. १०. नेत्ररोग विशेष. ११. अलग. १२. मास.

(३)

तूरत फूल कलीन नवीन गिर्‌यो मुदरी को कहूँ नग मेरो।
संग की हारीं हेराय गोपाल गई पछिताय डेराय अँधेरो।
साँसति[1] सासु की जाय सकौं ना, अहो! छिन एकनि गैयन फेरो[2]।
कुञ्जबिहारी! तिहारी थली यह जाति उजारी दया करि हेरो[3]॥
(१६७)

(४)

घाम घरीक निवारियै कलित[4] ललित[5] अलिपुञ्ज।
जमुना तीर तमाल[6] तरु मिलत मालती कुञ्ज॥
(१६८)

२. विरह निवेदन।

(यथा)

आपुस मैं हम को तुम को लखि जो मन आवत सो कहती हैं।
बातैं चवाव[7] भरी सुनिकै रिसि लागत पै चुप ह्वै रहती हैं।
ये घरहाँई[8] लुगाई[9] सबै निसि द्योस "नेवाज" हमै दहती[10] हैं।
प्रानपियारे! तिहारे लिये सिगरे बृज को हँसिबो सहती हैं॥
(१६९)

१. तकलीफ़.
२. रोको.
३. ढूंढो.
४. धारण किये, गुंजता हुआ.
५. शोभायुक्त.
६. वृक्ष विशेष.
७. चुगली.
८. घरफोड़नी.
९. स्त्री.
१०. जलाती.

सप्तम कुसुम।

ऋतु।

ऊष्म[1], वर्षा और शीत क्रमानुसार दो दो मास में विभक्त हुए वर्ष के खण्डों को ऋतु कहते हैं. उनके नाम ये हैं; वसन्त, ग्रीष्म, पावस, शरद, शिशिर और हेमन्त ॥

१. वसन्त।

चैत्र और वैशाख अथवा कुम्भ और मीन की संक्रान्ति को वसन्त ऋतु कहते हैं. इसी के अन्तर्गत होली भी है ॥

(यथा)

बल्ली[2] को बितान, मल्ली[3] दल को बिछौना, मंजु महल निकुञ्ज है प्रमोदबन[4] राज को।
भारी दरबार भिरी भौंरन की भीरि बैठे मदन दिवान इतिमाम[5] काम काज को।
"पंडित प्रवीन" तजि मानिनी गुमान गढ़ 'हाजिर हुजूर' सुनि कोकिल अवाज को।
चोपदार चातक बिरद बढि बोलैं 'दर दौलत दराज महराज ऋतुराज को' ॥ (१७०

(२)

गाओ किन कोकिल, बजाओ किन बेनु[6] बेनु[7], नाचो किन झूमरि[8] लतागन बने ठने।
फेंकि फेंकि मारो किन निज कर पल्लव[9] सों, ललित लवंग फूल पानन घने घने।

१. गरमी. ४. नाम विशेष. ७. बाँसुरी.
२. लता. ५. इन्तिज़ाम, प्रबन्ध. ८. झुककर नाचना.
३. बेला. ६. बाँस. ९. नवीन पत्र.

फूल माल वारो किन, सौरभ सँवारो किन, एहो परिचारक[1] समीर सुख सों सनें ।
मौर धरि बैठो किन चतुर रसाल! आजु आवत बसन्त ऋतुराज तुम्है देखनें ॥
(१७१)

(३)

पात बिन कीन्हे ऐसी भाँति गन बेलिन के परत न चीन्हे जे वै लरजत लुञ्ज[2] हैं ।
कहै "पदमाकर" बिसासी या बसन्त के सु ऐसे उतपात गात गोपिन के भुञ्ज[3] हैं ।
ऊधो! यह सूधो सो सँदेसो कहि दीजो भले हरि सों, हमारे ह्याँ न फूले बन कुञ्ज हैं ।
किंसुक, गुलाब, कचनार औ अनारन की डारन पैं डोलत अँगारन के पुञ्ज हैं ॥
(१७२)

(४)

सोंधे[4] समीरन को सरदार[5], मलिन्दन[6] को मनसा फल दायक[7] ।
किंसुक जालन[8] को कलपद्रुम[9], मानिनी बालन हू को मनायक[10] ।
कन्त अनन्त[11] अनन्त कलीन को, दीनन के मन को सुखदायक ।
साँचो मनो भवराज[12] को साज[13] सु आवत आज इतै ऋतु नायक[14] ॥
(१७३)

(५)

मिलि माधवी आदिक फूल के व्याज[15] बिनोद लवा[16] बरसायो करैं ।
रचि नाच लता गन तानि बितान सबै बिधि चित्त चुरायो करैं ।
द्विजदेव जू देखि अनोखी प्रभा[17] अलि चारन[18] कीरति गायो करैं ।
चिरजीवो बसन्त! सदा "द्विजदेव" प्रसूनन[19] की झरि[20] लायो करैं ॥
(१७४)

१. टहलुआ.　६. भौंरा.　११. नाना.　१६. लावा.
२. ठूँठ.　७. देनेवाला.　१२. काम.　१७. छटा.
३. भूँजनेवाला.　८. समूह.　१३. सामान.　१८. वन्दीजन.
४. सुगन्धित.　९. कल्प वृक्ष.　१४. स्वामी.　१९. फूल.
५. अगुआ.　१०. मनानेवाला.　१५. बहाने.　२०. वृष्टि की झड़ी

वसन्तान्तर्गत होली.

(६)

बायु बहारि बहारि रहे छिति[1], बीथी सुगन्धन जाती[2] सिँचाई।
त्यों मधुमाते मलिन्द सबै जय के करखान[3] रहे कछु गाई।
मंगल पाठ पढ़ैं "द्विजदेव" सबै विधि सों सुखमा उपजाई।
साजि रहे सब साज घने बन मै ऋतुराज की जानि अवाई।
(१७५)

(७)

ए बृजचन्द ! चलौ किन वा बृज[4], लूकैं बसन्त की ऊकन[5] लागी।
त्यों "पदमाकर" पेखौ[6] पलासन, पावक सी मनो फूँकन लागी।
वै बृजवारी बिचारी बधू बन बावरी लौं हिये हूकन[7] लागी।
कारी कुरूप कसाइनै ये सु कुहू कुहू कैलिया कूकन लागी॥
(१७६)

(बसन्तान्तर्गत)

होली।

(यथा)

लैलैकर झोरी[8] जुरि आईं इतै गोरी उतै होरी खेलिबे को ग्वालजाल हू[9] बनायो कीच।
छायगो छिनै मै यों गुलाल मेघ माल ऐसो "द्विजदेव" जासों ना जनायो परै ऊँच नीच।
ऐसीं भई धूँधरि धमार की सों ताही समै, पावस के भोरे मोर सोर कै उठे अपीच।
घन के समान ज्यों २ दौरैं घनस्याम, त्यों २ संपासी दुरति आली चम्पावनबन बीच॥

१. पृथ्वी.
२. चमेली.
३. उत्तेजक वचन.
४. तीखी गरम हवा.
५. निकलने लगीं.
६. देखो.
७. चौंकने लगी.
८. थैली.
९. और भी.

२. ग्रीष्म ।

ज्येष्ठ और आषाढ़ अथवा मेष और वृष को संक्रान्ति को ग्रीष्म ऋतु कहते हैं ॥

(यथा)

जेयें[1] विना जीरन[2] सो, जल की जिकिर जीभ जर्यो जात जगत जलाकन[3] के जोर तैं ।
कूप, सर[4], सरिता[5] सुखाय सिकता[6] मैं भई, धाई धूरि धौरनि धराधर[7] के छोर तैं ।
"बेनी कवि" कहत, अनातप चहत सब, अगिनि सो आतप प्रकास चहुँ ओर तैं ।
तवा सो तपत धरा[8] मण्डल अखण्डल औ मारतण्ड[9] मण्डल दवा[10] सो होत भोर तैं ॥
(१७८)

(२)

घोरि घनसारन[11] सों सखिन कचूर चूर लीपं तहखानें सुख दीन्हे हैं दुदंड की ।
तामें खसखानें बनें, ऊजरे बितानै, सुरभौन की समाने जे निदानै[12] ठानै ठंड की ।
वहत गुलाब के सुगन्ध के समीर सने[13] परत फुही[14] है जलयंत्रन[15] के तंड[16] की ।
बिसद[17] उसीरन[18] के फोरि परदान प्यारे ! तऊ आनि बेधत मरीचैं मारतंड की ॥
(१७९)

३. पावस ।

श्रावण और भाद्रपद अथवा मिथुन और कर्क को संक्रान्ति को बर्षा ऋतु कहते हैं. इसी के अन्तर्गत हिंडोरा भी है॥

(यथा)

लता लागी द्रुमन, लतानहूँ मैं कली लागीं कली लागीं भौंर भीर आनद मगन मैं ।
धावन धरनि धुरवान की गगन लागीं, दामिनि सघन तऊ ठन लागीं घन मैं ।

१. भोजन. ७. पर्वत. १३. मिले.
२. अजीर्ण. ८. पृथ्वी. १४. जलकणिका.
३. तेज घाम. ९. सूर्य. १५. फौवारा.
४. झील. १०. दावा. १६. नृत्य.
५. नदी. ११. कपूर. १७. स्वच्छ.
६. बालू. १२. कारण. १८. खसखस.

पावस.
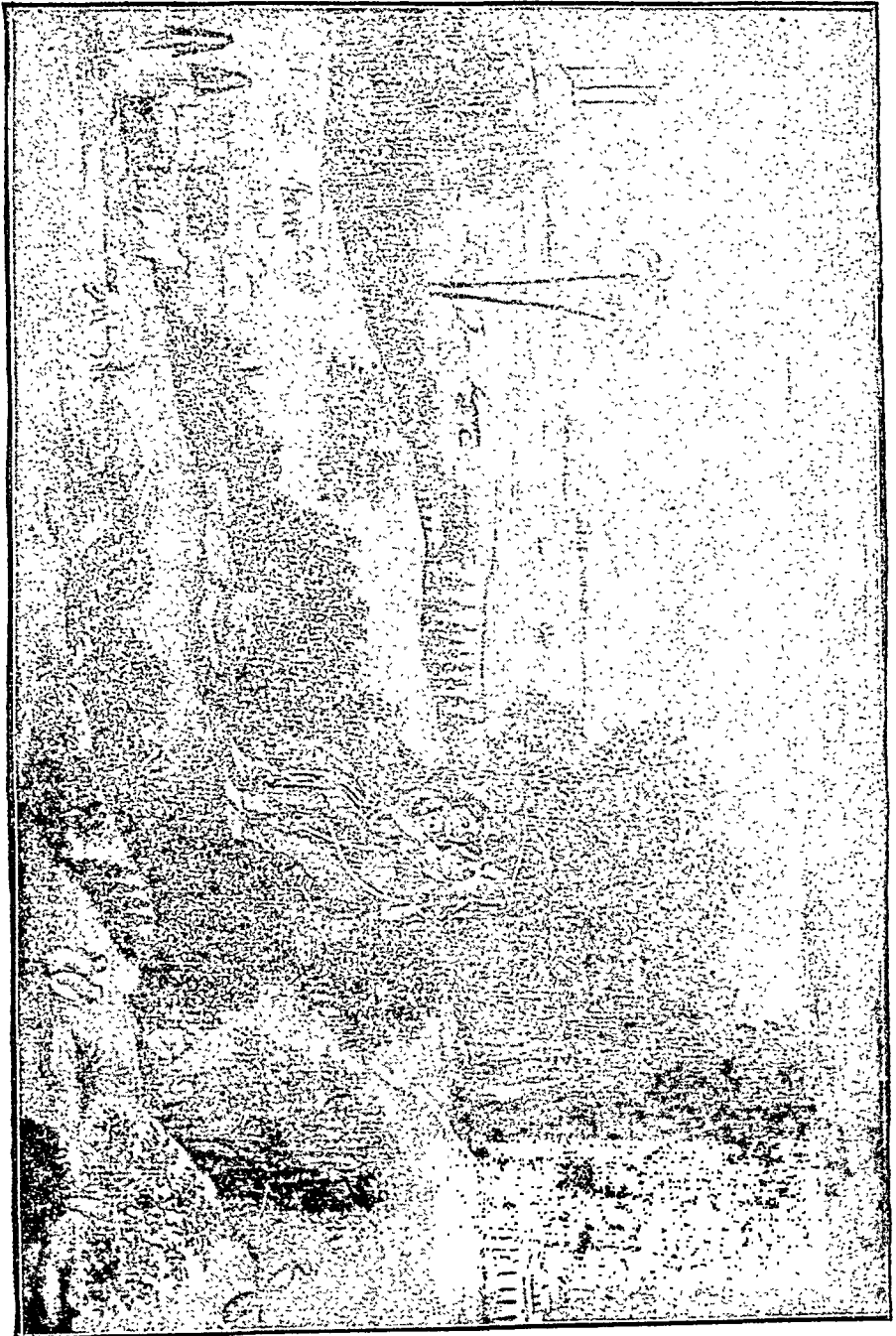
"श्रीपति"सुकबि, यों बियोगी कहरन लागे, मदन की आगि लहरन लागीं तन मै।
गहन[1] गहन लागे गात्रन मयूर माला,[2] झहन[3] झहन लागे रोम रोम छन मै॥
(१८०)

(२)

जल भरे झूमै मनो भूमै परसत[4] आनि, दस हू दिसानि घूमै दामिनि लए लए।
धूरि धार धूमरे से, धूम से धुधारे, कारे धुरवान धारे धावैं छबि सों छए[5] छए।
"श्रीपति" सु कबि कहै, घेरि घेरि घहराहिँ, तकत अतन[6] तन ताव तैं तए[7] तए
लाल बिनु कैसे लाज चादर रहै गी आज? कादर करत मोहि बादर नए नए॥
(१८१)

(३)

चंचला[8] चमाकैं चहूँ ओरन तैं चाय[9] भरी चरजि[10] गई ती, फेरि चरजन लागी री!
कहै "पदमाकर" लवंगन की लोनी लता लरजि[11] गई ती, फेरि लरजन लागी री!
कैसे धरौं धीर बीर? त्रिबिध समीरैं तन तरजि[12] गई ती, फेरि तरजन लागी री!
घुमड़ि घमण्ड घटा घन की घनेरी अबै गरजि गई ती, फेरि गरजन लागी री!!
(१८२)

(४)

बरसत मेह नेह, सरसत अंग अंग, झरसत देह जैसे जरत जवासो[13] है।
कहै "पदमाकर" कलिन्दी के कदम्बन पैं मधुपन कीन्हो आय महत मवासो[14] है।
ऊधो! यह ऊधम[15] जताय दीजो मोहन सों, बृज मै सुवासो भयो अगिनि अवासो[16] है।
पातकी[17] पपीहा जलपानको न प्यासो, काहू बीथित[18] बियोगिनिके प्राननको प्यासो है॥
(१८३)

१. उच्च स्वर से.
२. झुण्ड, पंक्ति.
३. झुनझुनी.
४. छूते हुए.
५. भरे हुए.
६. कामदेव.
७. तपाये हुए.
८. बिजली.
९. चाव, चाह.
१०. बहका गई.
११. हिल गई.
१२. डरवा गई.
१३. तृणविशेष.
१४. डेरा.
१५. उपद्रव.
१६. अवाई.
१७. पापी.
१८. दुखित.

(५)

झुगुनू[1] उतै हैं, इतै जोति है जवाहिर की, झिल्ली[2] झनकार उतै, इतै घुघुरू लरैं।
कहै कवि "तोष" उतै चाप, इतै बङ्क भौंह, उतै बगपाँति, इतै मोती माल ही[3] धरैं।
धुनि सुनि उतै सिखी[4] नाचैं, सिखी[5] नाचैं इतै, पी करैं पपीहा उतै, इतै प्यारी सी करैं।
होड़[6] सी परी है मानौ घन, घनस्याम जू सों, दामिनीको, कामिनीको एऊ अंक मैं भरैं॥
(१८४)

(६)

राजै रस मै[7] री, तैसी बरषा समै री, चढ़ी चंचला नचै री, चकचौंधा कौंधा[8] बारैं री!
व्रती[9] व्रत हारैं, हिये परत फुहारैं, कछू छोड़ैं, कछू धारैं जलधर[10] जल धारैं री!
भनत "कविन्द" कुञ्जभौन पौन सौरभ सों, काके न कँपाय प्रान परहथ[11] पारैं री?
काम के तुका[12] से फूल डोलि डोलि डारैं, मन औरैं किये डारैं ये कदम्बनकी डारैं री!!
(१८५)

(वर्षान्तर्गत)

हिँडोरा।

(यथा)

दोऊ कमबूल[13] झूलि झूलि मखतूल[14] झूला लेत सुख मूल, कहि "तोष" भरि बरसात।
झूमि झूमि अलक कपोलन पैं छहरात[15] फहरात अञ्चल, उरोजन उघरि जात।
रहौ, रहौ, नाहीं, न हीं, अब ना झुलाओ लाल! बाबा कीसौं, मेरी ये युगल[16] जंघ थहरात।
ज्यों हीं ज्यों मचत[17] त्यों त्यों लचत लचीलो लङ्क, सङ्कित[18] मयङ्कमुखी अंक मैं लपटि जात॥
(१८६)

१. कृमिविशेष.
२. कृमिविशेष.
३. हृदय.
४. मयूर.
५. सखी.
६. बाजी, हारजीत.
७. युक्त.
८. बिजली की चमक.
९. नियमी.
१०. मेघ.
११. पराये हाथ.
१२. गाँसी.
१३. कम उमर.
१४. रेशम.
१५. बिथर जाता.
१६. दोनों.
१७. झोंका झटका.
१८. डरी हुई.
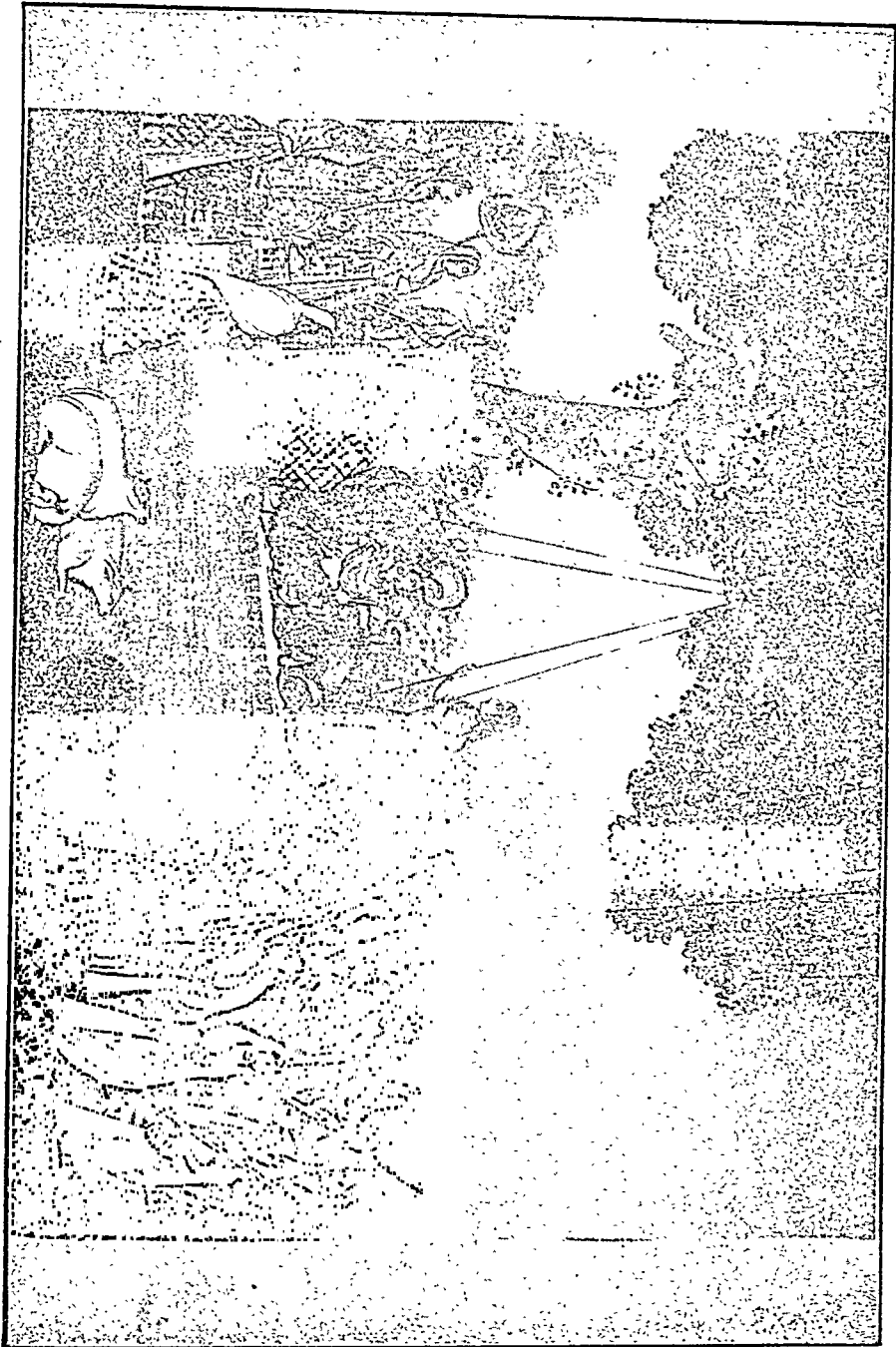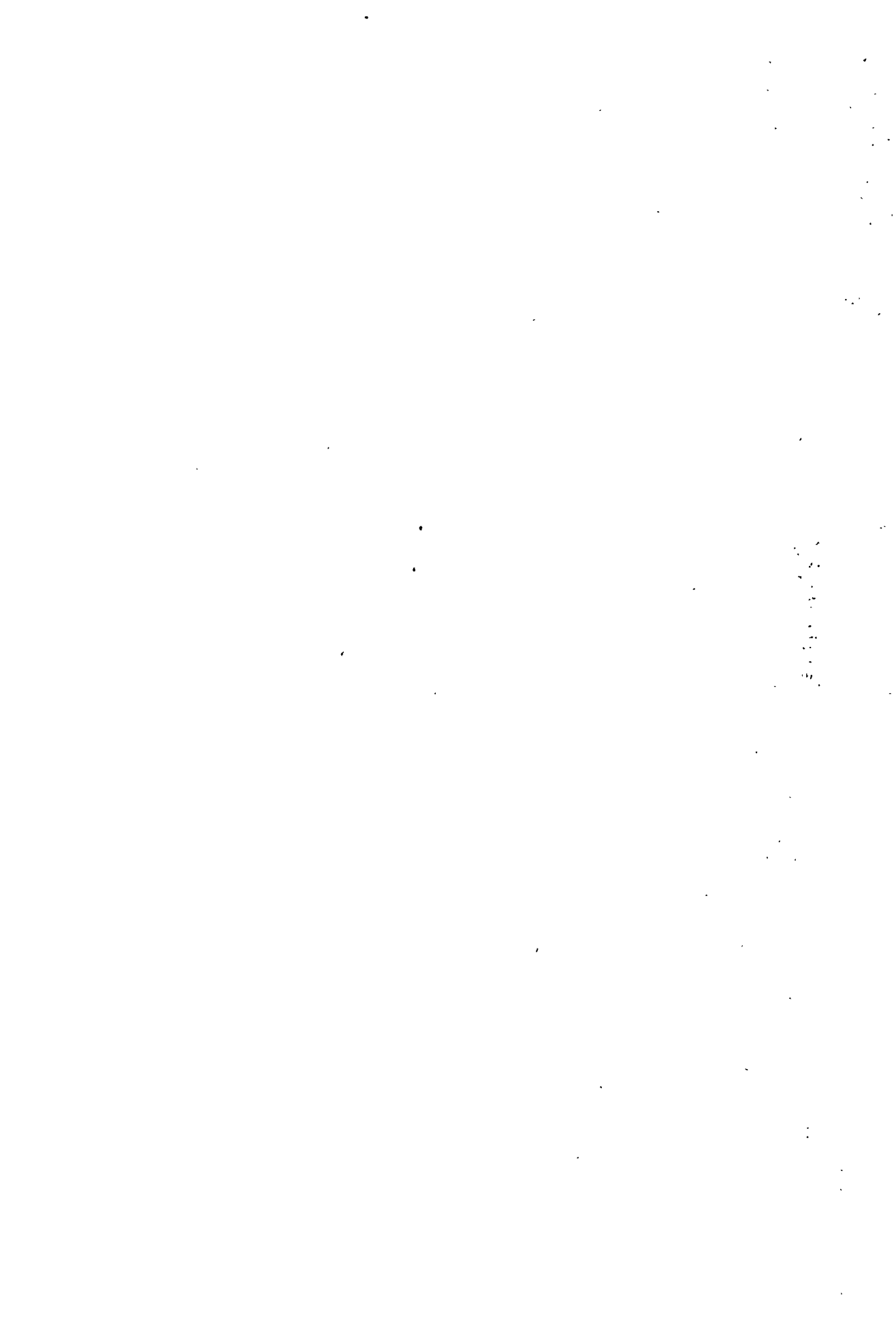
घर्मान्तर्गत हिँडोरा.

(२)

फूली फूल बेली सी नबेली[1] अलबेली[2] बधू झूलति अकेली काम केली[3] सी बढ़ति है।
कहै "पदमाकर" झमङ्क की झकोरनि सों चारौ ओर सोर किंकिनीन[4] को मढ़ति[5] है।
उर उचकाय मचकीन[6] की मचामचि में लङ्कहि लचाय चाय चौगुनी चढ़ति है।
रति बिपरीत की पुनीत[7] परिपाटी मनो हौसन[8] हिँडोरे की सु पाटी[9] में पढ़ति है॥
(१८७)

(३)

तीर पर तरनितनूजा के तमाल तरे तीज की तयारी ताकि आई तखियान[10] में।
कहै "पदमाकर" सो उमगि उमंग उठी मेंहदी सुरंग की तरंग नखियान[11] में।
प्रेम रंग बोरी गोरी नवल किसोरी भोरी[12] झूलति हिँडोरे यों सोहाई सखियान में।
काम झूलै उर में, उरोजन में दाम झूलै, स्याम झूलै प्यारी की अन्यारी[13] अँखियान में॥
(१८८)

४. शरद्।

आश्विन और कार्त्तिक अथवा सिंह और कन्या की संक्रान्ति को शरद् ऋतु कहते हैं॥

(यथा)

तालन[14] पैं, ताल[15] पैं, तमालन पैं, मालन पैं, बृन्दाबन बीथिन बहार बंसी बट पैं।
कहै "पदमाकर" अखण्ड[16] रासमण्डल पैं मण्डित उमण्डि महा कालिँदी के तट पैं।
छिति पर, छान[17] पर, छाजत छतान पर, ललित लतान पर, लाड़िली[18] के लट पैं।
छाई भले छाई यह सरद जुन्हाई, जिहिँ पाई छबि आजु ही कन्हाई के मुकुट पैं॥
(१८९)

१. युवती. २. बाँकी. ३. क्रीड़ा. ४. सशब्द करधनी. ५. ढाँकती. ६. पेंग, झोंक. ७. अच्छी. ८. लालसा. ९. तख़्ती. पटरी. १०. उस समय. ११. नखों, नाखूनों. १२. भोली, सीधी. १३. कटीली. १४. वृक्षविशेष. १५. तालाव. १६. सम्पूर्ण. १७. छाजन. १८. प्यारी.

(२)

खनक चुरीन की त्यों ठनक मृदंगन की, रुनुक झुनुक सुर नूपुर के जाल को।
कहै"पदमाकर"त्यों बाँसुरी की धुनि सुनि रह्यो बँधि सरस सनाको[1] एक ताल को।
देखतै बनत, पै न कहत बनै री कछू, बिबिध बिलास औ हुलास यह ख्याल को।
चन्द छबि रास, चाँदनी को परकास, राधिका को मन्दहास, रासमण्डल गोपाल को ॥
(११०)

(३)

बन, उपबन, निरझर[2], सर, सोभा सनै, अम्बर[3], अवनि[4], कल बल बरसावनी।
हंस जल रखित[5], खचित[6] थल बननि, तारापति, सरित, जोन्हाई सुखदावनी।
"ऋषिनाथ"मालती, मुकुन्द, कुन्द, कुसुमित कास, पारिजात[7] पारिजातावलि[8] पावनी।
मन अरुझावनी, रसिक रास रस रंग भावनी सरद रैन सरद सोहावनी ॥
(१११)

(४)

बृन्दावन बीथिन मे, सरद निसीथिन मे, फूले द्रुमजालमाल मिलित मलिन्द को।
मंजुल[9] निकुञ्ज केलि बेलि अलबेली! देखु, चलु री कलिन्दी कूल इन्दीबर[10] बृन्द को।
गोपी ग्वाल गीत, नन्दलाल को सँगीत होत"पण्डित प्रवीन"मन उमग अनन्द को।
बंसीवट बंसी बजै, रास को हुलास होत, चन्द को प्रकास री! बिलास बृजचन्द को ॥
(११२)

(५)

राजी[11] जिय करति, रसोलिनि की राजी[12] तैसी, राजी[13] मुकुलित[14] मालती की दरसातिया।
मन्दिर, निकुञ्ज, कुञ्ज, अलि पुञ्ज गुञ्जरत, मञ्जु मकरन्द, मन्द मन्द गति बाति[15] या।
कहत "किसोर"कोस[16] बड़ कमनीय[17] महा रमनीयरमन[18] बिना हू बन जाति या।
सरद समस्त सोभा ससि[19] मय व्योम, काम बस मय बिस्व[20] रंग रसमय राति या ॥
(११३)

१. एकलय.	६. स्थित.	११. प्रसन्न.	१६. गिलाफ.
२. झरना.	७. दवा देता.	१२. पंक्ति.	१७. सुन्दर.
३. आकाश.	८. स्वर्गवृक्षमाला.	१३. शोभित.	१८. नायक.
४. पृथ्वी.	९. सुन्दर.	१४. अधखुली.	१९. चन्द्रमा.
५. पाले गये.	१०. कमल.	१५. वायु.	२०. संसार.

५. हेमन्त।

मार्गशीर्ष और पौष अथवा तुला और वृश्चिक की संक्रान्ति को हेमन्त ऋतु कहते हैं॥

(यथा)

सीत को प्रबल सेनापति[1] कोपि चढ़्यो दल, निबल अनल[2] गयो सूर[3] सियराइ[4] कै।
हिम[5] के समीर तेई बरषैं बिषम तीर, रही है गरम भौन कोननि मै जाइ कै।
धूम नैन बहैं, लोग होत हैं अचैन, तऊ हिये सो लगाइ रहैं नेकु सुलगाइ कै।
मानो भीत जानि महा सीत तैं पसारि पानि, छतियाँ की छाँह राख्यो पावक छिपाइ कै॥
(११४)

६. शिशिर।

माघ और फाल्गुन अथवा धन और मकर की संक्रान्ति को शिशिर ऋतु कहते हैं॥

(यथा)

चन्द छबि पागि आगि औरैं रहे भानु भागि, सीत जागि जागि जग ऐसें गरसतु है।
रदन[6] सों बोलैं रद, बदन बिकासै कौन? नदन की गौन रौन[7] सूधो सरसतु है।
लागी जऊ झाँपैं[8] मची झर की झरापैं, तऊ "सेवक" जू कापैं न दुराव दरसतु है।
दृढ़बर सालो[9] फोरि, साल हू दुसाला फोरि, सकल मसाला फोरि पाला बरसतु है॥
(११५)

१. सेना. ४. ठंढा, कदराय. ७. शब्द.
२. अग्नि. ५. बर्फ. ८. परदे.
३. सूर्य. ६. दांत. ९. गृह.

अष्टम कुसुम।

पवन।

पवन छ प्रकार के होते हैं, अर्थात् शीतल, मन्द सुगन्धित, एवम् तप्त, तीव्र और दुर्गन्धित ॥

(यथा)

सँयोगिनि की तू हरै उर पीर, बियोगिनि के सु धरै उर पीर।
कलीन खिलाइ करै मधु पान, गलीन भरै मधुपान[1] की भीर।
नचै मिलि बेलि बधूनि अँचै[2] रस "देव" नचावत आधि अधीर।
तिहूँ गुन देखियै दोष भरो, अरे! सीतल, मन्द, सुगन्ध समीर॥

(११६)

१. शीतल।

(यथा)

तुङ्ग[3] पयोद[4] लसे गिरि सृङ्ग[5] मिल्यो चलि सीतलता सरसावत।
त्यों तरु जूहन[6] पैं बिरमाय[7] घनै सुख साजन को लहरावत।
मंजु[8] दरी निकरी जलधार धसै, पुनि सीकर संग लै धावत।
ग्रीषम हू मे कँपावत गात सु बात हिमाचल छ्वै जब आवत॥

(११७)

१. भौंरा. ५. चोटी.
२. पीकर. ६. समूह.
३. ऊँचे. ७. ठहर कर.
४. बादल. ८. मनोहर.

२. मन्द।

(यथा)

गहब गुलाब, मञ्जु मोगरे, दवन फूले, बेले अलबेले खिले चम्पक चमन मे।
भनि "भुवनेस" बिकसाने पारिजाते[1], कुन्द, रस सरसाने प्रति सुन्दर सुमन मे।
एहो कान्ह! चारुमति, बायु की बिलोकि गति, बार बार कारन बिचारौ कहा मन मे?
बाहिते[2] सुगन्ध भार, मढ़ित मरन्द धार, याही हेतु मन्द मन्द डोलै उपबन मे॥
(१९८)

(२)

सुनि सुनि सोभा बृजराज! तेरे मन्दिर की दच्छिन पवन चल्यो देखिबे को छन मे।
पहुँच्यो प्रथम आय बंसीबट कुंज, तहाँ भूलि गयो सम[3], बृत्त[4], तिर्यक[5] पथन मे।
ज्यों त्यों चढ़्यो ह्वाँ तैं चित्रसारी त्यों समीर भौन उतरो प्रमोद भरो छायो कंप तन मे।
स्रम सो थकित, पेखि सुखमा चकित, अब डोलि रह्यो मन्द मन्द सोई उपबन मे॥
(१९९)

(३)

रनित[6] भृंग[7] घण्टावली, झरत दान[8] मधु नीर।
मन्द मन्द आवत चल्यो कुञ्जर[9] कुञ्ज समीर॥
(२००)

३. सुगन्धित।

(यथा)

मौलसिरी मधु पान छक्यो[10], मकरन्द भर्यो अरबिन्द नहायो।
माधवी कुञ्ज सों खाय धका, फिरि केतकी[11], पाटल[12] को उठि धायो।

१. हरसिंगार.
२. लदा हुआ.
३. सीधी.
४. गोली.
५. टेढ़ी.
६. बजता हुआ.
७. भौंरा.
८. हाथी का मद.
९. हाथी.
१०. दृप्त हो.
११. क्योड़ा.
१२. पानड़ी.

सोनजुही मड़राय रह्यो छिन संग लिये मधुपावलि धायो।
चंपहि चूरि, गुलाबहि गाहि, समीर चमेलिहि चूमत आयो॥
(२०१)

४. तीव्र।

(यथा)

तरु गिरि गिरि जात, साखा चिरि चिरि जात, फूल फल पत्र रहि जात नहिँ तिन मैं।
भनि "भुवनेस" चहुँ चंचला चमकि जात, दौड़ि दौड़ि जात दल बद्दल को छिन मैं।
वक की जमातैं[1] मड़रातैं[2], चले जात हंस धारि उर संक मानसर के पुलिनैं[3] मैं।
धीर ना धिरात, तन कम्पि कम्पि जात, जब चलत प्रचण्ड[4] पौन भादँव के दिन मैं॥
(२०२)

५. तप्त।

(यथा)

ओबरीनैं[5], दोबरीन, तहखानैं, खसखानैं, आपके बचाइबे को फिर्यो मैं तरसि कै।
"रघुनाथ" की दोहाई! पैयत न कहूँ कल, लागत ही बिहबल होत हौं अरसि[6] कै।
आजु के पवन की व्यवस्था[7] कौन कौन कहैं? आवत है तरनि करनि को गरसि कै।
मलय के साँपन के बिष को करषि[8] कै, की दवा मैं झरसि कै, की बाड़व परसि कै॥
(२०३)

(२)

तपत तँदूरे से हैं तहखानैं, खसखानैं, धधकि धधकि धरा होति है अनल भौन।
पावक प्रगट "भुवनेस" साखा चन्दन सों, दावा लगि लगि जात बन मैं बचावै कौन?
व्याकुल ह्वै जात जल थल के त्यों जीव जन्तु, ज्वाला सों जुबान मुख बाहिर करति गौन।
तापित प्रचण्ड ताप मारतण्ड मण्डल सों ग्रीषम मैं भीषम ह्वै डोलै जबै तप्त पौन॥
(२०४)

१. समूह.
२. घूमकर उड़ते.
३. नदी का तट.
४. प्रबल.
५. भुइनसा.
६. आलस्ययुक्त.
७. हाल.
८ खींच कर.

६. दुर्गन्धित।

(यथा)

किंसुक अलग कचनारन बिलग करि सोनित[1] की लालिमा प्रसारित सघन है।
लतिका फटकि अन्त्रि[2] तन्त्रिका[3] लपटि रहीं, सारिका[4] निकारि घूमै गिद्धन के गन है।
ऋतुराज देत है दोहाई, अवधेस! दल तेरो अरिदल दलि दलि डारो बन है।
फूलन के देस मेद[5] मज्जा[6] को प्रवेस, त्यों सुगन्धन निवेस दुरगन्धित पवन है॥

(२०५)

(२)

देखत हौ सुचि[7] चंपक चारु बिकासित ह्वै दमकैं निज दापन[8]।
त्यों "भुवनेस" सुगन्ध समूह गुलाब प्रसून प्रसारत[9] आपन।
कारन याको प्रसिद्ध बसन्त, सु छायो कहा मति मै सिसुतापन[10]?
डोलै न क्यों दुरगन्धित पौन? जरै बिरहीगन को तन तापन॥

(२०६)

वन।

(यथा)

सीतल समीर मन्द हरत मरन्द बुन्द, परिमल[11] लीन्हे अलि कलै[12] छबि छहरत[13]।
काम बन नन्दन[14] की उपमा न देत बनै, देखि कै बिभव जाको सुरतरु हहरत[15]।
त्यागि भयभाव चहूँ घूमत अनन्द भरे, बिपिन बिहारिन पैं सुख साज लहरत[16]।
कोकिल, चकोर, मोर करत चहूँघा[17] सोर, केसरीकिसोर[18] बन चारौ ओर बिहरत॥

(२०७)

१. रुधिर.
२. अँतड़ी.
३. ताँत.
४. मैना पक्षी.
५. चर्ब्बी.
६. हड्डी का गूदा.
७. पवित्र.
८. कान्ति, गर्व्व.
९. फैलाते हुए.
१० लड़कपन.
११. सुगन्ध.
१२. सुन्दर.
१३. फैलता है.
१४. इन्द्र का बाग.
१५. डाह करते हैं.
१६. बढ़ता है.
१७. चारो ओर.
१८. सिंह का बच्चा.

उपवन ।

(यथा)

मल्ली द्रुम वलित[1], ललित पारिजात पुञ्ज, मंजु बन बेलिन, चमेलिन महमहात ।
राची भूमि हरित हरित तृणजालन सों, बिच बिच खातें[2] त्यों फुहारन सों छहरात ।
जित तित माधवी निकुञ्ज छई बीथिन मैं, फटिक सिलानि साजी अवनी लहलहात ।
आली! बनमाली उपवन चतुराई देखि त्यागि गिरि कानन बसन्त नित लहरात ॥

(२०८)

(२)

नहर नदी सी त्यों सरोपमा तड़ाग राजै, अन्य जल थल सें बनाए बापी[3] कूपगन ।
सुखद सुमन वारे द्रुम की पत्यारी क्यारी, बीथिन से रौसैं[4] बृच्छ बृन्द के बने चमनें[5] ।
बनको समग्र सोभा भ्राजै 'भुवनेस' जामैं कोकिल कपोत पोख्यो[6] छाजित निकुञ्ज घन ।
साँचो दुख द्वन्दहर, नन्दन अनन्दकर, दीप्तिमान[7] दीसै[8] बृजराज! तेरा उपवन ॥

(२०९)

चन्द्र

(यथा)

साँझ ही तें आवत हिलावत कटारी कर, पाय कै कुसंगति कृसानु[9] दुखदाई को ।
निपट निसंक ह्वै तजी तैं कुलकानि, खानि औगुन को नेकऊ तुलै न बाप भाई को ।
एरे मतिमन्द चन्द! आवत न लाज तोंहि, देत दुख बापुरे बियोगी समुदाई को ।
ह्वै कै सुधाधाम, काम विष को बगारै[10] मूढ़! ह्वै कै द्विजराज, काज करत कसाई को ॥

(२१०)

१. शोभित.
२. हौज.
३. बावली.
४. रविश.
५. पुष्पवाटिका.
६. पाले हुए.
७. प्रकाशमान.
८. देख पड़ता है,
९. अग्नि.
१०. फैलाता है.

उपवन.
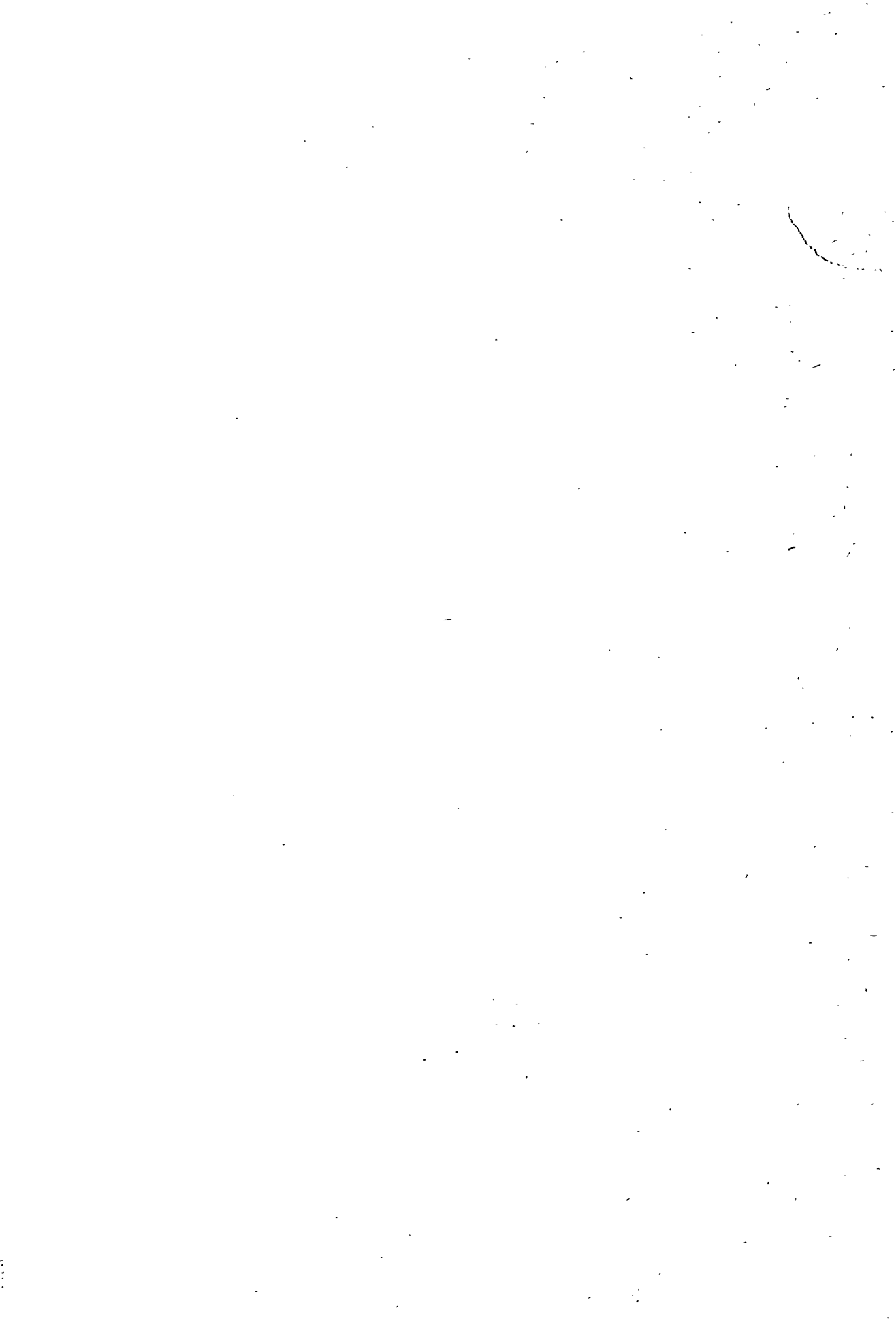
चाँदनी ।

(यथा)

परम उदार महाराज ऋतुराज आज बिमल जहान करिबे की रुचि ठाई[1] है ।
सीतकर[2] रजक[3] रजाय[4] पाय ताही समै अंबर[5] की सोभा करि उज्वल देखाई है ।
छटा[6] जनि जानौ,तरु अटा[7] औ देवारनि मै ब्योंत करि आछी बिधि वाही सों मढ़ाई है ।
चहूँ ओर अवनि बिराजै अबदात[8], देखो कैसी अदभुत यह चाँदनी[9] बिछाई है ॥
(२११)

पुष्प ।

आब[10] छिरकाय दै गुलाब कुन्द केवड़ा के चन्दन, चमेली, गुलदावदी, नेवारी मै ।
जूही, सोनजूही माल, चम्पक,कदम्ब,अम्ब,सेवती समेत बेला,मालती पियारी मै ।
'रघुनाथ'बाग को बिलोकिबो न भावै मोहि,कन्त बिन आयो है बसन्त फुलवारी मै ।
भागि चलो भीतरैं, अनार कचनारन तैं आगि उठी,बावरी ! गुलाला की कियारी मै ॥
(२१२)

पराग ।

देखत हीं बन फूले पलास, बिलोकत हीं कछु भौंर की भीरन ।
बावरी सी मति मेरी भई लखि बावरी[11] कंज खिले घटे नीरन ।
भाजि गयो कढ़ि ज्ञान हिये तैं न जानि पर्‌यो कब छोड़ि के धीरन ।
अंध न कौन के लोचन होहिं पराग सनै सरसात[12] समीरन ॥
(२१३)

१. ठानी.
२. चन्द्रमा, भीगे हाथवाला.
३. धोबी.
४. आज्ञा.
५. वस्त्र, आकाश.
६. शोभा.
७. अटारी.
८. शुक्ल.
९. चन्द्रिका, फर्श.
१०. जल.
११. बाउली.
१२. शोभित होता है.

नवम कुसुम।

आलम्बन विभाव।

जिस के आश्रय से रस की स्थिति होती, उस को आलम्बन विभाव कहते हैं. जैसे नायिका और नायक वा स्त्री पुरुषादि ॥

(यथा)

अरविन्द[1] प्रफुल्लित देखि कै भौंर अचानक जाइ अरैं[2] पै अरैं।
बनमाल थली लखि कै मृगसावक[3] दौरि बिहार करैं पै करैं।
सरसी[4] ढिग आइ कै व्याकुल मीन बिलास तैं कूदि परैं पै परैं।
अवलोकि[5] गोपाल को "दास" जू, ये अँखियाँ तजि लाज ढरैं पै ढरैं॥

(२१४)

(२)

लोग लुगाइन होरी लगाय मिला मिली चारु न मेटत ही बन्यो।
"देव" जू चन्दन, चूर, कपूर लिलारन[6] लै लै लपेटत ही बन्यो।
वे इहि औसर आए इहाँ, समुहाइ हियो न समेटत ही बन्यो।
कीन्ही अनाकनी यों मुख मोरि, पै जोरि भुजा भटू! भेटत ही बन्यो॥

(२१५)

१. कमल.
२. अड़ते हैं.
३. बच्चे.
४. झील.
५. देखकर.
६. ललाट, मस्था.

(२)

सोने सो रंग भयो तौ कहा, अरु जौ विधिना कटि खीन[1] सँवारी ?
दार्‌यो[2] से दन्त भए तौ कहा, जु कहा भयो लाँबी लटैं सटकारी[3] ?
रूप की रासि भई तौ कहा, नहीं प्रेम की रासि हिये अवधारी[4] ?
नैन बड़े जौ भए तौ कहा, पर आखिर गोरस बेचन हारी !!

(२१६)

नायिका ।

रूपवती स्त्री को नायिका कहते हैं. इन्के भेद प्रकृत्य-नुसार तीन हैं, अर्थात् उत्तमा, मध्यमा और अधमा; एवम् धर्म्मानुसार तीन हैं,अर्थात् स्वकीया, परकीया और सामान्या तथा वयःक्रमानुसार भी तीन हैं, अर्थात् मुग्धा, मध्या और प्रौढा, और अवस्थानुसार दश हैं, अर्थात् प्रोषितपतिका, खण्डिता, कलहान्तरिता, विप्रलब्धा,उत्कण्ठिता, वासकसज्जा, स्वाधीनपतिका, अभिसारिका, प्रवत्स्यत्पतिका और आगतपतिका. इन समस्त भेदों का क्रमानुसार वर्णन किया जाता है ॥

(यथा)

अलक पैं अलिबृन्द, भाल[5] पैं अरधचन्द, भौं पैं धनु, नैननि पैं वारौं कंज दल मै ।
नासा कीर, मुकुर[6] कपोल, बिंब[7] अधरनि, दार्‌यो वारौं दसनर्नि, ठोढ़ी अम्ब फल मै ।

१. पतली.
२. अनार.
३. चिकनी.
४. धारण किया.
५. ललाट.
६. दर्पन.
७. कुनुरू फल.
८. दाँत.

कंबु कंठ, भुजनि मृड़ाल[1] 'दास' कुच[2] कोक[3], त्रिवली तरंग वारौं, भौंर नाभीथल मैं।
अचल[4] नितम्बनि पैं, जंघन कदलिखंभ, बाल पगतल[5] वारौं लाल मखमल मैं॥
(२१७)

(२)

परम परव पाय जमुना अन्हैवे जाय, पाछिले पहर की रजनि घरी द्वै रही।
'श्रीपति' गोपाल लाल बीथिन मै जावक[6] की, केसरिके रंग की छबीली छबि छ्वै रही।
अंग अंगरागनि[7] की, सौंधे सौंधे बागन[8] की, परम जराव जरकस जोति वै रही।
मालती थलिन तजि, नलिन[9] मलिन[10] तजि, गलिन गलिन भीर अलिन की ह्वै रही॥
(२१८)

(३)

जावक के भार पग परत धरा पैं मन्द, गन्ध भार कुचन परी हैं छुटि अलकैं।
"द्विजदेव" तैसियै बिचित्र बरुनी[11] के भार आधे आधे दृगन परी हैं अध पलकैं।
ऐसी छबि देखि अंग अंग की अपार, बार बार लोल[12] लोचन सु कौन के न ललकैं[13]?
पानिप[14] के भारन सँभारति न गात, लङ्क लचि लचि जात कचभारन के हलकैं[15]॥
(२१९)

(४)

कातिकी के द्यौस कहूँ आय न्हाइबे को वह, गोपिन के संग जऊ नेसुक लुकी[16] रही।
'द्विजदेव' दीह[17] द्वार ही तैं घाट बाट लगि खासी चन्द्रिका सी तऊ फैली बिधु[18] की रही।
घेरि वारपार लौं तमासे हित ताही समै भारी भीर लोगन की ऐसियै झुकी रही।
आली! उत आजु बृषभानुजा बिलोकिबे को भानुतनयाऊ[19] घरी द्वैकलौं रुकी रही॥
(२२०)

(५)

मन अवगाहे[20] तैं जु होत गति यामैं, तन, मन, धन हू तैं गति वामै अनहोनी[21] सों।
वाके ईस[22] माधव[23] बखानै सब वेद, ते तो छबि अभिलाषी सदा याही छबि सेनी[24] सों।

१. कमल की डाँड़ी. २. स्तन. ३. चकई चकवा. ४. पर्व्वत. ५. पैर की तलवे. ६. महावर. ७. सुगन्धित उबटन. ८. वस्त्र. ९. कमल. १०. उदास. ११. बरौनी. १२. चंचल. १३. ललचाते. १४. शोभा. १५. हिलने से. १६. छिपी. १७. चौखट. १८. चन्द्रमा. १९. यमुना भी. २०. स्नान से. २१. असम्भव. २२. स्वामी. २३. विष्णु. २४. पंक्ति.

"द्विजदेव" की सौं, तिल एकौ ना तुलत, बहु भाँतिन बिचारि देखो अति मति पैनी[1] सों।
तेऊ कवि कबि कहवाय हैं दुनी[2] मैं, जे वै समता करत वाकी बेनी औ त्रिबेनी सों॥

(२२१)

(६)

हेरि हारी भारती[3] चहूँघा चारिदस मध्य प्राकृत[4] नवेलिन की सुखमा तलास मैं।
फेरि रुचि[5] रञ्चक न पाई है प्रपञ्चविधि[6] ढूँढ़ि थकि बैठी सुरबालनि बिलास मैं।
"रसरंग" सुखमा अभूत गति देखी जौन राधे मुख इन्दु मुसुकानि मृदु हास मैं।
हीरा खानि खास मैं, न दामिनी आकास मैं, न चन्द के प्रकास मैं, न बारिज बिकास मैं॥

(२२२)

(७)

चोथते[7] चकोर चहूँ ओर जानि चन्द मुखी, जौ न होती डरनि दसन दुति दम्पा[8] की।
लीलि जाते बरही बिलोकि बेनी बनिता की, जौ न होती गूथनि कुसुमसर[9] कम्पा[10] की।
"पूखी" कबि कहै, ढिग भौंहैं ना धनुष होतीं, कीर कैसे छोड़ते अधर बिम्ब झंपा[11] की।
दाखैं[12] कै सी झौंरी[13] झलकति जोति जोबन[14] की चाटि जाते भौंर जौन होती रंग चंपा की॥

(२२३)

(८)

ग्रहन मैं कीन्हो गेह, सुरन दै देखी देह, हरि सों कियो सनेह, जाग्यो जुग चार्यो है।
तरनि मै तप्योतप, जलधि[15] मैं जप्योजप, "केशोदास" बपु[16] मासमास प्रति गार्यो[17] है।
उरगन[18] ईस, द्विज ईस, औषधीस भयो, यदपि जगत ईस सुधा[19] सो सुधार्यो है।
सुनि नदनन्दप्यारी! तेरे मुखचन्द सम चन्द पै न आयो कोटि छन्दै[20] करि हार्यो है॥

(२२४)

१. चोखी. ६. ब्रह्माकीसृष्टि. ११. झपसा. १६. शरीर.
२. संसार. ७. नोचते. १२. मुनक्का. १७. क्षीणक्रिया.
३. सरस्वती. ८. बिजली. १३. मुरझाया. १८. तारागण.
४. साधारण. ९. कामदेव. १४. स्तन. १९. अमृत.
५. पसंद. १०. बहेलिये का काँपा. १५. समुद्र. २०. उपाय.

(९)

कैधौं रूप रासि मे सिँगार रस अंकुरित, कैधौं तम[1] कन[2] सो है तड़ित जोन्हाई मे।
कहे "पदमाकर" जु कैधौं काम कारीगर नुकता[3] दियो है हेम फरद[4] सोहाई मे।
कैधौं अरविन्द मे मलिन्द सुत सोयो आय, ऐसो तिल सोहत कपोल की लोनाई मे।
कैधौं फस्यो इन्दु मे कलिन्दि जल बिन्दु, अरु गरक[5] गोबिन्द कैधौं गोरी[6] की गोराई मे॥

(२२५)

(१०)

बिद्या वर बानी,[7] दमयन्ती की सयानी,[8] मञ्जुघोषा*मधुराई, प्रीति रति की मिलाई मै।
चख चित्ररेखा के, तिलोतमा*के तिल लै, सुकेसी*के सुकेस, सची[9] साहेबो[10] सोहाई मै।
इन्दिरा उदारता औ माद्री[11] की मनोहराई "दास" इन्दुमती[12] की लै सुकुमारताई मै।
राधे के गुमान सो समान बनितान ताके हेत या बिधान एक ठान[13] ठहराई मै॥

(२२६)

(११)

आनन हैं अरविन्द न फूले, अलीगन भूले कहा मड़रात हौ?
कीर तुम्हें कहा बायु लगी, भ्रम बिंब से ओठन को ललचात हौ?
'दास' जू ब्याली[14] न बेनी रच्यो तुम पापी कलापी![15] कहा इतरात[16] हौ?
बोलती बाल, न बाजती बीन, कहा सिगरे मृग घेरत जात हौ॥

(२२७)

(१२)

बानिक[17] तानि को मण्डल की उन गोल कपोलन आपु लह्यो है।
त्यों "द्विजदेव" जू जोन्ह[18] छटानि हँसी ही हँसी मुखचन्द गह्यो है।
ए मनरंजन अंजन रावरे, नाहक लाह की चाह मह्यो है।
छोड़ि कलङ्क कहौ अब या द्विजराज निलाज सो लाभ कहा है॥

(२२८)

१. अंधेरा. २. कना. ३. बिन्दु. ४. कागज़. ५ डुबा. ६. नायिका. ७. सरस्वती. ८. चतुराई. ९. इन्द्राणी. १०. प्रभुताई. ११. पाण्डुपत्नी. १२. अजपत्नी. १३. निश्चय. १४. नागिन. १५. मयूर. १६. इठलात. १७. गोलाई. १८. चन्द्रिका. १९. प्रसन्नकारी. * अप्सरा विशेष.

(१३)

वा मग आवत जोई सोई है उदास तजै जग जाल बखेड़ो।
मोहन हूँ के बिलोचन या मग आवत ही लहैं मैन उमेड़ो[१]।
या समता को कहा "द्विजदेव" जू नाहक जात मनै मन ऐंड़ो।
भाग सोहाग भरी यह माँग, सो क्यों तुलि है वह सात्विकी[२] पैंड़ो[३]॥
(२२९)

(१४)

लखि ठोढ़ी रसाल रसालन को फल पीरो परो लरको[४] तौ कहा?
"द्विजदेव" जू आछे कटाच्छ चितै छन जोन्हैं[५] हियो थरको[६] तौ कहा?
दुति दन्तन की एकबार लखे उर दाड़िम को दरको तौ कहा?
अँग अंग की ऐसी प्रभा अवलोकि अनंग फिरै फरको तौ कहा॥
(२३०)

(१५)

आरसी की उपमा जो हुती, सु तो वा मुख की छवि देखतै लाजी।
सो तौ सदा विकसोई रहै, कब्र सारसी ता समता कहँ छाजी।
ए "द्विजदेव" कहौ किन आजु, रहे उपमान जुपै हिय साजी।
तासों लहैगो प्रभा द्विजराज, बिराजै जहाँ द्विजराज[७] की राजी॥
(२३१)

(१६)

है रजनी[८] रजै[९] मै रुचि केती, कहा रुचि रोचक रंक[१०] रसाल मै।
त्यों करहाट[११] मै, केसरि मै "द्विजदेव" न है दुति दामिनी जाल मै।
चंपक मै रुचि रंचकऊ नहिँ, केतकि है रुचि केतकी माल मै।
ती तन को तनको लखियै, तौ कहा दुति कुन्दन[१२], चन्द, मसाल मै॥
(२३२)

१. मरोर.
२. सतोगुणयुक्त.
३. रास्ता.
४. नीचा हुआ.
५. बिजली.
६. काँप उठा.
७. दाँत.
८. हरदी.
९. चूर्ण.
१०. दरिद्र.
११. कमल की जड़.
१२. शुद्ध सुवर्णपत्र

(१७)

होत मृगा[1]दिक तैं बड़े बारन[2] बारनवृन्द पहारन हेरे।
सिन्धु मै केते पहार परे, धरती मै बिराजत सिन्धु घनेरे।
लोकनि मै धरती हू कितो, हरि ओदर मै बहु लोक बसेरे।
सो "हरिदास" बसे इनमै, सब चाहि बड़े दृग राधिका तेरे॥

(२३३)

१. उत्तमा।

प्रिय के अहितकारी होने पर भी हितकारिणी स्त्री को उत्तमा कहते हैं॥

(यथा)

लाओ हमे भोग, कै सिखाओ कछु जोग, कला लीन्हे अंगराग, कै परागनि घने रहौ।
बिनती इतीक पै हमारी प्रिय प्रीतम सों, कहिवे को ऊधो! उर आपने गने रहौ।
अब उर अन्तर इतीयै अभिलाष रही, बसहु जहाँइँ तहाँ आनद सने रहौ।
याही तैं हमारे सुख पगनि[4] लगैगो, तुम लगनि[5] लगे हू पिय मगन बने रहौ॥

(२३४)

२. मध्यमा।

प्रिय के हिताहितकारी होने पर हिताहितकारिणी स्त्री को मध्यमा कहते हैं॥

(यथा)

मन्द मन्द उर पैं अनन्द ही के आँसुन की बरषैं सुबुन्दैं मुकुतान हीं के दाने सी।
कहै "पदमाकर" प्रपञ्ची पञ्चबान[6] के सु कानन के मान पैं परी ज्यों घोर घाने सी।

१. सावज. ४. पैर.
२. हाथी ५. प्रीति.
३. बहुत. ६. काम.

ता जी त्रिबलीन मे बिराजी, छबि छाजी, सबै राजी रोमराजी[1] करि अमित[2] उठाने सी।
सौंहैं[3] पेखि पी को बिहसौंहैं भए दोऊ दृग, सैांहैं[4] सुनि भैांहैं गईं उतरि कमाने सी ॥

(२३५)

३. अधमा।

प्रिय के हितकारी होने पर भी अहितकारिणी स्त्री को अधमा कहते हैं. इसी को दुष्टा और कर्कशा भी कहते हैं ॥

(यथा)

दबक्यो रहै नाह गुनाहैं[5] बिना, गुन गावै सदा मुख आखर मे।
अति सज्जन, साधु, महामन को जु बिना अपराध धरै भरमे।
सपने हू न आन तिया सुमिरै, तब हूँ नहिँ सेज मे नीके रमै[6]।
तरपै जिमि बिज्जुल सी पिय पैं, झरपै झननाइ सबै घर मे ॥

(२३६)

स्वकीया।

अपने ही पति में अनुराग रखनेवाली स्त्री को स्वकीया कहते हैं. इन्के दो भेद हैं, अर्थात् ज्येष्ठा और कनिष्ठा जिन्के लक्षण और उदाहरण इस कुसुम के अन्त मे दिये गये हैं. सम्प्रति[7] स्वकीया के वयःक्रमानुसार भेद, अर्थात् मुग्धा, मध्या और प्रौढा तथाच इन तीनो के भी अवान्तरभेद[8] वर्णन किये जाते हैं ॥

१. रोमावली.
२. बेहद.
३. सन्मुख.
४. शपथ.
५. कसूर
६. क्रीड़ा करती.
७. इस समय.
८. भेदों के भेद.

☞ कोई कवि स्वकीया और पतिव्रता को पर्य्यायवाची[1] शब्द मानते हैं, परन्तु मेरी समझ मे पतिव्रता उत्तमा स्वकीया के अर्थ उपयुक्त[2] है, न कि मध्यमा और अधमा के, इस्सेकि पतिव्रता शब्द उत्तम स्वभावादि गुणों की अपेक्षा करता है, कि जिन गुणों से मध्यमा और अधमा रहित हैं ॥

(यथा)

नैनन को तरसैये कहाँ लौं, कहाँ लौं हियो बिरहागिनि तैये[3]।
एको घरी न कहूँ कल पैये, कहाँ लगि प्राननि को कलपैये।
आवै यही अब जी मै बिचार, सखी! चलि सौति हू के घर जैये।
मान[4] घटे तै कहा घटि है, जु पै प्रान पियारे को देखन पैये ॥
(२३७)

१. मुग्धा।

कामचेष्टा रहित अंकुरितयौवना को मुग्धा कहते हैं. इन्के दो भेद हैं, अर्थात् अज्ञातयौवना और ज्ञातयौवना ॥

(यथा)

लोगन को वह घाट है, लाल! लुगाइन की यह घाट थली है।
जैये चले बलवीर! उतै, जहँ न्हाति अहीरन की अवली है।
"संभु" सखीन के ओट दुरे, जल पैठे लजाति हमारी अली है।
कान्ह! अन्हान इहाँ मति आओ, अन्हाति इहाँ बृषभानु लली है ॥
(२३८)

(२)

कौन को प्रान हरैं हम, यों दृग कानन[5] लागि मतो[6] चहैं बूझन।
त्यों कछु आपुस ही मै उरोज कसाकसी कैके चहैं बढ़ि जूझन ॥

१. एकार्थवाची.
२. ठीक.
३. तपायें
४. प्रतिष्ठा.
५. कानों से.
६. राय.

ऐसे दुराजै[1] दुहूँ बयै[2] के सब ही को लग्यो अब चौचँदै[3] सूझन।
लूटन लागी प्रभा कढ़ि कै, बढ़ि केस छवान[4] सों लागे अरूझन॥

(२३९)

(३)

आनन मैं मुसुक्यान सुहावनी, बंकुरता[5] अँखियानि छई है।
बैन खुले, मुकुले[6] उरजात, जकी[7] तिय की गति ठौनि ठई है।
"दास" प्रभा उछलै सब अंग, सुरंग सुबासता केलि मई है।
चन्दमुखी तन पाय नबीनो भई तरुनाई अनन्द मई है॥

(२४०)

१. अज्ञातयौवना।

जिस मुग्धा को अपने यौवन का ज्ञान नहीं है, उसको अज्ञातयौवना कहते हैं॥

(यथा)

कारे चीकने ह्वै कछू काहे केस आपु ही तैं बढ़ि बढ़ि बिथुरि छवा लौं लगे छलकन।
बार बार बदन बिलोकन लगी हैं सौति, औरै तौर सौरभ समूह लाग्यो हलकन।
कौन धौं बलाय बसी अंग मे हमारे ? हमैं हेरिबे को कान्ह "हनुमान" लागे ललकन।
जंघ लागी सटन, घटन लागी लंक री, बढ़न लागी आँखें औ नितंब लागे दलकन॥

(२४१)

(२)

सखि तैहूँ हुती निसि देखत ही, जिन पै वै भई हीं निछावरियाँ।
जिन पानि गह्यो हुतो मेरो तबै सब गाय उठीं बृज डावरियाँ[8]।

१. दुअमला.
२. उमर.
३. दून की.
४. एँड़ी.
५. टेढ़ाई.
६. अधखुले.
७. स्तब्ध.
८. लड़कियाँ.

अंसुवा भरि आवत मेरे अजों सुमिरे उनकी पद पावरियाँ[1]।
कहि, को हैं? हमरि वै कौन लगैं? जिनके संग खेलि ही भावरियाँ॥
(२४२)

(३)

पूँछे हूँ तू ना बतावती है, लखि लालन क्यों अँखियाँ करैं खूँदन[2]।
रोकति केतिकौ पै न रुकैं, बढ़ि चाहति हैं सब सौतियै रूँदन[3]।
लागतई "कमलापति" के कर, ये बरषैं अबै बारि की बूँदन।
कान्ह! कहौ, दिन द्वैक तै क्यों छतियाँ कर दै अँखियाँ लगे मूदन॥
(२४३)

२. ज्ञातयौवना।

जिस मुग्धा के अपने यौवन का ज्ञान है, उसको ज्ञातयौवना कहते हैं. इनके दो भेद हैं, अर्थात् नवोढा और विस्रब्धनवोढा॥

(यथा)

बिसरन लागो बालपन को अयानपै[4], सखीन सों सयानपै[5] की बतियाँ गढ़ै लगी।
दृग लागे तिरछे चलन, पग मन्द लागे, उर मे कछूक उकसनि[6] सी कढ़ै[7] लगी।
अंगनि मे आई तरुनाई यों झलकि, लरिकाई अब देह तैं हरे हरे कढ़ै लगी।
होनलागी कटि अब छटि[8] की छला सी, द्वैज चन्द की कलासी तन दीपति बढ़ै लगी॥
(२४४)

१. नवोढा।

लज्जा और भय की अधिकता से जो पतिसंभोग की इच्छा नहीं करती, उसको नवोढा कहते हैं॥

१. खड़ाऊँ, पादुका.
२. विकलता.
३. अवरोध करना.
४. अज्ञानता.
५. चतुराई.
६. ददोरा.
७. निकलने.
८. बिजुली.

(यथा)

स्याम को बास निते सुनि कै या कितेक दिना तैं हुतो बन छूटैं।
पै कहि पी है, कहा सठ! तैं ही बई[1] उर मेरे बिस्वास की बूटैं[2]।
ता तैं इतैं डगरी[3] "द्विजदेव" न जानती कान्ह अजौं मग लूटैं।
एरे बिस्वास के घातक चातक! तो बतियान पैं गाज[4] न टूटैं॥
(२४५)

(२)

आली सबै जुरि लै बनमाली को कीन्ही तिया की मिलाप सलाहै।
ह्वै गई देखतै पीरी, तहाँ "बलदेव" जू दौरि गही[5] ज्यों लला है।
धाय अचानक हो दुरी भौन मै, देखत नीकी नई नबला[6] है।
कम्पित स्वेद भरी छुटि कै लजि भाजी मनौ घन तैं चपला है॥
(२४६)

२. विस्रब्धनवोढा।

जिस नवोढा का किञ्चित् अनुराग और विश्वास पति पर होता है उसको विस्रब्धनवोढा कहते हैं॥

(यथा)

झाँझरिया झनकैगी खरी, खनकैगी चुरी तनको तन तोरे।
"दास" जू जागतीं पास अली परिहास करैंगी सबै उठि भोरे।
सौंह तिहारी, हौं भाजि न जाहुँगी, आई हौं लाल! तिहारे ही धोरे[7]।
केलि को रैनि परी है, घरीक गई[8] करि जाहु दई के निहोरे॥
(२४७)

१. बोया.
२. पौधे.
३. धीरे २ चली.
४. वज्र.
५. पकड़ी.
६. नवीन स्त्री.
७. पास.
८. ठहर जाव.

(यथा)

चंचल न हूजै नाथ! अंचल न खैंचो हाथ, सोवै नेक सारिकाऊ, सुकतो सोवायो जू ।
मन्द करो दीप, दुति चन्दमुख देखियत, दौरि कै दुराय आऊँ द्वार तो दिखायो जू ।
मृगज[1], मरालबाल बाहिरै बिडारि[2] आऊँ, भावै तोहि "केसव" सु मोहू मन भायो जू ।
छलके निवास ऐसे वचन विलास सुने सौगुनो सुरति हू तें स्याम सुख पायो जू ॥
(२४८)

२. मध्या ।

जिस नायिका की अवस्था मे लज्जा और मदन[3] की समानता होती, उसको मध्या कहते हैं. यह अवस्था बहुत सूक्ष्म और अचिरस्थायी[4] होती है; अतः मध्या और मुग्धा भेद केवल स्वकीया ही मे माने गये हैं ॥

(यथा)

लाज विलोकन देति नहीं, रतिराज बिलोकन हीं की दई मति ।
लाज कहै मिलिये न कहूँ, रतिराज कहै हित सों मिलिये पति ।
लाजहु की रतिराजहु की, कहै "तोष" कछू कहि जाति नहीं गति ।
लाल! तिहारीयै सौंह करौं, वह बाल भई है दुराज की रैयति ॥
(२४९)

३. प्रौढा ।

संपूर्ण कामकलादि संपन्न नायिका को प्रौढा कहते हैं. क्रियानुसार इन्के दो भेद हैं, अर्थात् रतिप्रीता और आनन्दसम्मोहिता, एवम् मानभेदानुसार इसके और मध्या के

१. मृग का बच्चा.
२. हाँक.
३. काम.
४. थोड़े दिन ठहरनेवाली.

तीन भेद हैं, अर्थात् धीरा, अधीरा और धीराधीरा; तथा स्वभावानुसार तीन भेद हैं, अर्थात् अन्यसुरतदुःखिता, वक्रोक्तिगर्ब्बिता और मानवती. इस्से कि प्रौढा का भेद परकीया और सामान्या मे भी माना गया है, अतएव इस्के अन्तर्गत जो स्वभावानुसार भेद हैं, उन्का वर्णन अगले कुसुम मे होगा ॥

(यथा)

कुञ्ज गृह मंजु, मधु मधुप अमन्द राजैं, तामे काल्हि स्यामै बिपरीत रति राची री।
"द्विजदेव" कीर कलकंठन की धुनि जैसी, तैसियै अभूत भाई सूत धुनि माची री।
लाजबस बाम छाम छाती पैं छली के, मानो नाभि त्रिबली तैं दूजी नलिनि उमाची री।
उपमा हुती पै मानी देवतन साँची, यातैं बिधिहि सतावै अजौं सकुचि पिसाची री* ॥
(२५०)

(२)

जोग जुगुति सिखए सबै मनौ महा मुनि मैन।
चाहत पिय अद्वैतता[1] कानन सेवत नैन † ॥
(२५१)

१. रतिप्रीता।

[नाम ही से लक्षण स्पष्ट है ॥]

(यथा)

कूर कुरकुट कोटि कोठरी निवारि राखौं, चुनि दै चिरैयन को मूदि राखौं जलियो।
सारँग[2] मै सारँग[3] मिलाऊँ हो, "प्रवीन राव" सारँग[4] दै सारँग[5] की जोति करौं थलियो।
तारापति ! तुम सों कहत कर जोरि जोरि, भोर मति करियो, औ सरोज ! मुद कलियो।
मोहिँ मिल्यो इन्द्रजीत, धीरज नरिन्द्रराज, एहो चन्द ! आज नेक मन्दगति चलियो ॥
(२५२)

१. एकता. २. राग विशेष. ३. वाद्यविशेष. ४. कपूर. ५. दीपक.

* एवम् स्थित संकुचित राधिका को संकुचित (सम्पुटित) कमलिनी सी देख मानो ब्रह्मा को प्रतिद्वन्द्वी के उत्पन्न होने की चिन्ता सता रही है ॥

† अभिधामूलक व्यंग्य द्वारा अष्टांग योग के ब्याज से नायिका का दृढ़ प्रेम लक्षित है ॥

२. आनन्दसम्मोहिता।

[नाम ही से लक्षण स्पष्ट है॥]

(यथा)

कुन्दन की छरी आबनूस की छरी सों मिली, सोनजुहीमाल किधौं कुबलय[1] हार सों।
कैधौं चन्द चन्द्रिका कलंक सों कलित भई, कैधौं रति ललित बलित भई मार[2] सों।
'कालिदास' मेघ माहिँ दामिनी मिली है कैधौं, अनल की ज्वाल मिली कैधौं धूमधार सों।
केलि समै कामिनी कन्हैया सों लपटि रही, कैधौं लपटानी है जुन्हैया अंधकार सों॥
(२९३)

१. धीरा।

नारीविलाससूचक साधारण चिन्ह[3] दर्शन से धैर्य सहित सादर कोप प्रकाश करनेवाली स्त्री को धीरा कहते हैं. इन्के वयःक्रमानुसार दो भेद हैं, अर्थात् मध्याधीरा और प्रौढाधीरा॥

☞ कतिपय कवियों के मत से धीरादि भेद का नियम स्वकीया, परकीया, सामान्या, तीनो मे होना चाहिये, केवल स्वकीया ही में नहीं; किन्तु मेरी समझ मे प्राचीननियमानुसार धीरादि भेद स्वकीया ही मे होना समीचीन है; क्योंकि परकीया और उपपति तथा सामान्या और वैसिक का सूक्ष्म परस्पर व्यवहार क्रमानुसार केवल प्रेम और धन के आधार पर निर्भर है. ऐसी अवस्था मे यदि वे साधारण चिह्नों पर भी (जैसे स्वेद, कम्प, निःश्वास और नेत्रलालिमादि, जिन्का अन्य कारणों से भी प्रगट होना सहज सुलभ[4] है) तर्जन ताड़नादि द्वारा अपने कोप को प्रकाश करने लगें, तो ऐसे सूक्ष्म और गुप्त प्रेम के निर्वाह होने मे कठिनता आन पड़े॥

१. नील कमल.
२. काम.
३. निशान.
४. मुमकिन.

१. मध्या धीरा।

मान से सादर व्यंग्यवचन द्वारा कोप प्रकाश करने वाली स्त्री को मध्या धीरा कहते हैं॥

(यथा)

चहचही सेज चहूँ चहक चमेलिन सों, बेलिन सों मंजु मंजु गुञ्जत मलिन्दजाल।
तैसेई मरीचिका[1] दरीचिन[2] के दीबे ही मे छपा[3] की छबीली छबि छहरति ततकाल।
कबि "द्विजदेव" सुनो सारस[4] नयन स्याम! डीठि चकचौंधि जै हैं देखत मुकुरमाल।
ह्वैहैं यह सुखद सदा हीं रावरे को अब मनिमय मन्दिर को चलिबो चतुरलाल॥

(२९४)

(२)

झिलि झिलि बृन्दन गुलाब, अरबिन्दन के, कुन्दन, कुमोदिनी के मोद अनुकूले हौ।
कहूँ अनुकूले, कहूँ डोले हौ सुबस बसि, कहूँ रसलोभ के सुभाय लगि झूले हौ।
सौरभ सुजाति अधराति मालतीन[5] मिलि सरस सोहाग अनुरागि अंग फूले हौ।
कैसे वह सेवन सुगन्ध तजि सेवती को, कौन बन बेलिन भँवर! आजु भूले हौ॥

(२९५)

(३)

राचे पितंबर[6] ज्यों चहुँघा, कछु तैसियै लाली दिगन्तन[7] छाई।
यों मुसुकात प्रभात समै सजि आए जु कन्त! बसन्त निकाई।
तातें सबै "द्विजदेव[8]" मनाय बिनोद सों वारती लोन औ राई।
को न बिकात लखे बिन दाम, सखी! यह स्याम की सुन्दरताई॥

(२९६)

१. किरण. ५. पुष्प विशेष और उत्तम स्त्री.
२. छोटी खिड़की. ६. पीला वस्त्र और पीला आकाश.
३. रात. ७. दिशा के अन्त और आँखों के कोर मे.
४. कमल, अलसाने. ८. कबि का नाम और ब्राह्मण, देवता.

(४)

लाज, गरब, आलस, उमग भरे नैन मुसुकात ।
राति रमी रति देत कहि औरै प्रभा प्रभात ॥

(२५७)

२. प्रौढा धीरा ।

मान से संयोग समय मे उदासीनतावलम्बन करनेवाली स्त्री को प्रौढा धीरा कहते हैं ॥

(यथा)

वैसी मृदु बोलनि, बिलोकनि मधुर वैसी, कोकनि कथारस मै वैसियै फसति जाति ।
वैसेई सुधा से सीधे सुन्दर सुभाय सब, वैसे हाव भावनि मै रस बरसति जाति ।
वैसियै सु हिलिमिलि, वैसी पिय संग अंग, मिलत न केहूँ मिसि[1] पीछे उससति[2] जाति ।
वैसियै लसति जाति, वैसो हुलसति जाति, बिहँसति जाति प्यारी, कंचुकी कसति जाति ॥

(२५८)

(२)

जगर मगर[3] दुति दूनी केलि मन्दिर मै, बगर[4] बगर धूप अगर[5] बगार्‌यो तू ।
कहै "पदमाकर" त्यों चन्द तैं चटकदार, चुम्बन मै चारु मुखचन्द अनुसार्‌यो तू ।
नैननि मै, बैननि मै, सखी! और सैननि मै, जहाँ देखे तहाँ प्रेम पूरन पसार्‌यो तू ।
छपत छपाए तऊ छल न छबीली ! अब उर लगिबे की बार हार न उतार्‌यो तू ॥

(२५९)

(३)

भौंर कहा भ्रम भूलि रह्यो, मतवारे महा मकरन्द न पीवै ?
भोर ही तैं मड़रात फिरै, नहिँ जानत प्रेम पयोधि की सीवै[6] ?

१. व्याज.
२. खिसकती जाती.
३. जगमग.
४. मार्ग.
५. सुगन्धित द्रव्य.
६. हद.

अधीरा.

चंचल कारे रचौ हित बंचक[1] ! तोहिँ पसायँ[2] जु कौन को जीवै ?
और लतान के धोखे, अहो ! जनि माधवी मंजु लतान को छीवै[3] ॥
(२६०)

२. अधीरा।

नारीविलाससूचक साधारण चिह्नदर्शन से अधीर होकर प्रत्यक्ष कोप करनेवाली स्त्री को अधीरा कहते हैं. इनके भी वयःक्रमानुसार दो भेद हैं, अर्थात् मध्या अधीरा और प्रौढा अधीरा ॥

१. मध्या अधीरा।

मान से कटुभाषण सहित कोप प्रकाश करनेवाली स्त्री को मध्या अधीरा कहते हैं ॥

(यथा)

ताए हुतासन मे न घरी भरि, ना मनि मानिक के जरवाए।
खैंचि खराद चढ़ाए नहीं, न सुढार के ढारनि मध्य ढराए।
ए "सरदार" कहै किन या छिन, स्याम सुजान कहाँ इन पाए।
ए कलधौतन के ककनाँ[4], कहौ कौन सुनारि गँवारि बनाए* ॥
(२६१)

(२)

कोऊ नहीं बरजै "मतिराम" रहौ तित हीं जित हीं मन भायो।
काहे को सौंहैं हजार करौ, तुम तो कबहूँ अपराध न ठायो।

१. धोखा देने वाला. २. प्रसन्न कर. ३. छुओ. ४. आभूषण विशेष.

* कंकण के अंक की तुलना स्वर्णकार के कर्म्म से किया है॥

सोवन दीजै, न दीजै हमै दुख, यौंहीं कहा रसवाद[1] बढ़ायो ?
मान रह्योई नहीं मनमोहन ! मानिनी होय सो मानै मनायो ॥
(२६२)

(३)

साँची कहौ, जाकी मानत सौंह, जु कौन के नेह रहे सरसे हौ ?
रैनि जगी अँखियाँ तरजी, बिरुझी अँग अंगन सों परसे हौ !
जैहौ जहाँ मिलि आए तहाँ, हम को इन बातन सों परसे हौ ।
चन्द ह्वै कै कित हूँ दरसे, हम को रबि ह्वै करि कै दरसे हौ ॥
(२६३)

२. प्रौढा अधीरा।

मान से तर्जन[2], ताड़न[3] और वेपनादि[4] द्वारा कोप प्रकाश करनेवाली स्त्री को प्रौढा अधीरा कहते हैं ॥

(यथा)

नील सरोज से अंग के संग, यहै उपजी छबि नील दुकूल सों ।
तेरे ही अंग की झाईं लला के लिलार मै सोहति और ही सूल सों ।
काहे को भौंह चढ़ावति चाहि ? अचानक चूक परी कहुँ भूल सों ।
बूझिये तोहि जु ऐसेन हूँ डरपावत मारि गुलाब के फूल सों ॥
(२६४)

३. धीराधीरा।

नारीविलाससूचक साधारण चिह्नदर्शन से कुछ गुप्त और कुछ प्रकट कोप प्रकाश करनेवाली स्त्री को धीराधीरा

१. बकवाद.
२. धमकाना.
३. मारना.
४. चमकाना, मटकाना.

कहते हैं. वयःक्रमानुसार इन्के भी दो भेद हैं, अर्थात् मध्या धीराधीरा और प्रौढा धीराधीरा ॥

१. मध्या धीराधीरा।

मान से रोदन[1] सहित व्यंग्य वचन द्वारा कोप प्रकाश करनेवाली स्त्री को मध्या धीराधीरा कहते हैं ॥

(यथा)

आँखिन के जल की जु है रीति, सदा तुम साँझ हू भोर निहारत।
तो "द्विजदेव" जू क्यों कहि जाइ, परे छत[2] जे हिय को करैं आरत[3]।
बात बिचारिबे की यह लाल! कहा बकवाद कै मो तन जारत?
मान रहैगो किते बलि जाउँ, सो मानिनी मानिनी काहि पुकारत ॥

(२६५)

(२)

आजु कहा तजि बैठी हौ? भूषन ऐसे ही अंग कछू अरसीले!
बोलति बोल रुखाई लिये "मतिराम" सनेह सुने ते सुसीले[4]!
क्यों न कहो दुख प्रान प्रिया! अँसुवानि रहे भरि नैन लजीले!
कौन तिन्हैं दुख हैं जिन के तुम से मनभावन छैल छबीले!!

(२६६)

२. प्रौढा धीराधीरा।

मानपूर्वक रति से उदासीन होकर तर्जन, ताड़न और वेपनादि द्वारा कोप प्रकाश करनेवाली स्त्री को प्रौढा धीरा धीरा कहते हैं ॥

१. रोना.
२. घाव.
३. दुखी.
४. अच्छे स्वभाववाली.

(यथा)

छवि छलकन[1] भरी पीक[2] पलकन, त्योंहीं स्रम जलकन अलकन अधिकानै च्वै ।
कहै "पदमाकर" सुजान रूपखानि तिया, ताकि ताकि रही ताहि आपुहि अजानै ह्वै ।
परसत गात मनभावन को भावती की, गई चढ़ि भौंहैं, रही ऐसे उपमानै छ्वै ।
मानौ अरविन्दन पैं चन्द को चढ़ाय दीन्हो मान कमनैत विन रोदा[3] की कमानै द्वै ॥
(२६७)

ज्येष्ठा और कनिष्ठा।

अनेक विवाहिता स्त्रियों मे जो पति को परम प्रिया हो उसको (साहित्य मे) ज्येष्ठा और अन्य को कनिष्ठा कहते हैं ॥

(यथा)

तीज परब सौतिन सजे भूषन बसन सरीर ।
सबै मरगजे[4] मुहँ करी वहै मरगजी[5] चीर[6] ॥
(२६८)

१. अतिशय प्रगट.
२. पान का रस.
३. प्रत्यंचा.
४. मर्दित अर्थात् गर्वध्वंस.
५. मर्दित अतएव संयोगसूचक.
६. साड़ी.

दशम कुसुम।

परकीया।

गुप्तपरपुरुषानुरागिणी स्त्री को परकीया कहते हैं. इन्के दो भेद हैं, अर्थात् ऊढा और अनूढा तथा इन दोनो के दो दो भेद हैं, अर्थात् उद्बुद्धा और उद्बोधिता एवम् इन सब के छ छ भेद हैं, अर्थात् गुप्ता, विदग्धा, लक्षिता, कुलटा, अनुशयाना और मुदिता ॥

(यथा)

क्यों हँसि हेरि हर्यो हियरा, अरु क्यों हित कै चित चाह बढ़ाई ?
काहे को बोले सुधा सने बैननि, नैननि मैन सलाक[1] चढ़ाई ?
...धि मो हिय तैं "घन आनद" सालति[2] क्यों हूँ कढ़ै न कढ़ाई ?
क्यों ...ान! अनीत की पाटी[3] इतै पै, न जानियै, कौन पढ़ाई ??
कौन (२६१)

१. ऊढा।

...रपुरुषरता विवाहिता स्त्री को ऊढा कहते हैं ॥

(यथा)

वेपन...त मन्द भई, फन्द मे फसी हौं आय, द्वन्द[4] नन्द[5] ठानै जीरे, [6]जोरे जुग पानि दै।
धीर...सतरै है, जेठ पतनी रिसै है, बंक बचन सुनै है, छाडि़ ...गर की भुजानि दै।

१. सलाई.
२. चुभती हैं.
३. पाठ.
४. झगड़ा.
५. पति की बहिन.
६. जी को.

विनती करति रही, गिनती कहाँ लौं "देव" हाहा करि हारी रे ! रहन कुलकानि दै।
दान दै रे जिय को, नदान निरदई कान्ह ! बसी सब रैनि, मोहिँ अब घर जान दै॥
(२७०)

(२)

क्यों इन आँखिन सों निरसंक ह्वै मोहन को तन पानिप पीजै ?
नेकु निहारे कलङ्क लगै, यहि गाँव बसे कहौ कैसे कै जीजै ?
होत रहै मन यों "मति राम" कहूँ बन जाय बड़ो तप कीजै।
ह्वै बनमाल हिये लगियै, अरु ह्वै मुरली अधरा रस लीजै॥
(२७१)

२. अनूढा।

परपुरुषरता अविवाहिता स्त्री को अनूढा कहते हैं॥

(यथा)

गोपसुता कहै, गौरि ! गुसाँइनि[1], पाँय परौं, विनती सुनि लीजै।
दीनदयानिधि दासी के ऊपर नेसुक चित्त दया रस भीजै।
देहि जौ व्याहि उछाह सों मोहनै, मात पिता हू के सो मन कीजै।
सुन्दर साँवरो नन्दकुमार, बसै उर जो वरु,[2] सो वरु[3] दीजै॥
(२७२)

(२)

अति सूधो सनेह को मारग है, जहाँ नेकौ सयानप बाँक[4] नहीं।
तहाँ साँचे चलैं तजि आपुनपौ,[5] झिझकैं[6] कपटी जो निसाँक नहीं।

१. स्वामिनी. २. वर, दुलहा. ३. बरदान. ४. टेढ़ापन. ५. ममत्व. ६. चौंकते हैं.

"घन आनद" प्यारे सुजान ! सुनो, इत एक तैं दूसरो आँक नहीं ।
तुम कौन धौं पाटी पढे हौ, लला ! मन[१] लेहु, पै देहु छटाँक नहीं ॥
(२७३)

१. उद्बुद्धा ।

स्वेच्छापूर्वक उपपति से प्रेम करनेवाली परकीया को उद्बुद्धा कहते हैं ॥

(यथा)

बिलखि बिसूरै छन मौन ह्वै छली सी, बलि चौंकत चहूँघा हेरि ऐसी चोप चटकी ।
कालिह हीं तैं कलपै[२] समान पल बीत्यो, रहि बान सी हिये मै तान बाँसुरी की खटकी ।
कबि "लछिराम" कल कनक लता लौं लफि[३] लोटति अटारी पैं नबेली बङ्क लटकी ।
झँझरी[४] सों औचक निहारी फहरानि आजु, रसिक सिरोमनि[५] ! तिहारे पीत पटकी ।
(२७४)

२. उद्बोधिता ।

उपपति की चातुरी प्रेरित[६] प्रीति करनेवाली परकीया को उद्बोधिता कहते हैं ॥

(यथा)

पहिले हम जाइ दयो कर मै, तिय खेलति ही घर मै फरजी[७] ।
बुधिवन्त एकन्त पढ़ो तब हीं, रतिकन्त के बानन लै लरजी ।
बरजी हमै औरै सुनाइबे को, कहि "तोष" लख्यो सिगरी मरजी ।
गरजी ह्वै दियो उन पान हमै, पढ़ि साँवरे ! रावरे की अरजी[८] ॥
(२७५)

१. चित्त और ४० सेर.
२. ब्रह्मा का दिन.
३. झुक कर.
४. झरोखे की जाली.
५. सरताज.
६. उभाड़ी गई.
७. शतरंज वा प्रसन्न हो.
८. विनय पत्री.

१. गुप्ता ।

परपुरुषसम्बन्धी प्रीतिक्रिया को गोपन[1] करनेवाली स्त्री को गुप्ता कहते हैं. इनके तीन भेद हैं, अर्थात् भूत सुरत-गोपना, भविष्य सुरतगोपना और वर्त्तमान सुरतगोपना ॥

१. भूत सुरतगोपना ।

[नाम हीं से लक्षण स्पष्ट है ॥]

(यथा)

आली ! हौं गई ही आजु भूलि बरसाने[2] कहूँ, तापैं तू परै है "पदमाकर" तनेनी[3] क्यों ?
बृजबनिता वै बनितान पैं रचै हैं फाग, तिन मे जो ऊधमिनि राधा मृगनैनी यों ।
घोरि डारी केसरि, सुबेसरि बिलोरि डारी, बोरि डारी चूँदरि चुचात[4] रँग रेनी[5] ज्यों ।
मोहिँ झकझोरि डारी, कंचुकी मरोरि डारी, तोरि डारी कसनि[6], बिथोरि डारी बेनी त्यों ॥

(२) (२७६)

औघट अकेली नीर तीर यमुना के भरि जौ लौं कढ़ी कहर कराल मग हाली[7] तें ।
कवि "लछिराम" तौ लौं तीखन[8] फनाली[9] फन्दवार पार फैली फूलि फुफुकार लाली तें ।
गिरि गई गागरि, बिगरि गई बेंदी सिर, फिरि गई पूतरी प्रकास परमाली तें ।
बूझि बनमाली सों, लुटाव मुकताली, बड़े भागन बची मै भाजि बिषधर काली[10] तें ॥

२. वर्त्तमान सुरतगोपना । (२७७)

[नाम हीं से लक्षण स्पष्ट है ॥]

(यथा)

ज्यों दुरि देखि सदा बन मै गहि एक को एक भुजान सों ठेलति ।
त्यों मनमोहन संग सदा हीं हियो हुती हौं हूँ हुलासन मेलति ।

१. छिपाना.
२. ग्राम विशेष.
३. क्रुद्ध.
४. चूता हुआ.
५. सनी हुई.
६. कंचुकी के बन्द.
७. जल्दी से.
८. चोखी, तेज.
९. सर्पमुख पंक्ति.
१०. सर्प विशेष.

मोहिँ न भावति ऐसी हँसी, "द्विजदेव" सबै तुम नाहक हेलति[1]।
आजु भयो धौं नयो कछु ख्याल, गोपाल सों चोर मिहीचनी[2] खेलति ॥
(२७८)

(२)

रहै मायके मै निसि द्यौस सदा, कबहूँ तन देत पिरानो नहीं।
सुनि पायो कछूक मो पीड़ित देह, तौ गेह मै नेकु थिरानो नहीं।
करि सौंह कहौं "कमलापति" की, यहि के बिनु रोग तो जानो नहीं।
मन मानो सबै विधि स्यानो, सखी! यह बापुरो बैद बिरानो[3] नहीं।
(२७९)

३. भविष्य सुरतगोपना।

[नाम हीं से लक्षण स्पष्ट है॥]

(यथा)

ल्यावती ती तिन सों न मगावती, मालती फूल तुम्हैं चहने हैं।
हौं सपने हूँ लख्यो बन है, तन कंटक[4] जालन सों गहने[5] हैं।
सासु की आयसु सीस पै लै करने हैं, हमै घर मै रहने हैं।
भाग मै हैं जो कछू लहने[6], सो तुम्हैं कहने हैं, हमै सहने हैं॥
(२८०)

२. विदग्धा।

चतुराई से परपुरुषसम्बन्धी प्रीतिकार्य्यसाधन करने वाली स्त्री को विदग्धा कहते हैं. इन्के दो भेद हैं, अर्थात् वचन विदग्धा और क्रिया विदग्धा॥

१. दिल्लगी करती.
२. आँखमुदौवल.
३. बेगाना.
४. काँटा.
५. पकड़ने
६. पावना.

१. वचनविदग्धा।

वचनचातुरी से परपुरुषसंबन्धी प्रीतिकार्यसाधन करने-वाली स्त्री को वचनविदग्धा कहते हैं॥

(यथा)

पास परिचारिका[1] न कोऊ जो करै बयारि, महल टहलै[2] मेरी कहल मिटाव रे!
"राव" कहै, बातन सोहाती तैं उहाँती करी, छाती तैं छुवाय अति आनद बढ़ाव रे!
एरे मीत पौन! तू परसि अंग मेरो आय, तेरे इतै आयबे की मेरे चित चाव रे!
राखे बड़ी बेर तैं किवार खोलि तेरे काज, एरे मेरे मन्दिर मै मन्द मन्द आव रे!!
(२८१)

(२)

धाय[3] रिसाय गई घर आपने, तीरथ न्हान गए पितु भैया!
स्यामै सुनाय कहै, को दुहैगो, लगै निसि आधिक मै यह गैया?
दासियौ रूसि गई कित हूँ, सजनी! यह कौन सुनै दुख, दैया!
दै पट[4] पौढ़ि रहौंगी भटू! पलँगा पर, मेरिऊ जानै बलैया!!
(२८२)

(३)

भयो अपत[5], कै कोप[6] युत, कै बौरो[7] यहि काल?
मालिनि! आजु कहै न क्यों, वा रसाल[8] को हाल॥
(२८३)

२. क्रिया विदग्धा।

क्रियाचातुरी से परपुरुषसम्बन्धी प्रीतिकार्यसाधन करने-वाली स्त्री को क्रियाविदग्धा कहते हैं॥

१. दासी.
२. कार्य्य.
३. दूधपिलानेवाली.
४. केवाड़.
५. पत्र रहित और मर्य्यादारहित.
६. कली और क्रोध.
७. बौर लगा और सिड़ी.
८. आम वृक्ष और नायक.

(यथा)

जाति हुती गुरु लोगन मे, कहूँ आय गए हरि कुञ्ज गली सों।
लाज सो सैंहैं चितै न सकी, फिरि ठाढ़ी भई लगि आली! अली सों।
आरसी ऊँची करी कर की, कहि "तोष" लख्यो छबि भाँति भली सों।
चारुता चातुरता पर लाल गयो बिकि श्री बृषभानु लली सों॥

(२८४)

(२)

यमुना तट भोर हीं न्हायबे को गई सासु ननन्द हू तैं छपि कै।
"कमलापति" को लख्यो सामुहे न्हात, रही हिय माहिँ कछू कँपि कै।
पुनि नीर मे पैठि कै ऐसी करी गुरु लाजन ही तैं बड़ी चपि कै।
कियो सूर प्रनाम निखोट अली चख चंचल अंचल सों ढँपि कै॥

(२८५)

३. लक्षिता।

जिस स्त्री की परपुरुषसम्बन्धी प्रीति लक्षणादिक से जानी जाती, उसको लक्षिता कहते हैं॥

(यथा)

कौन जानै, कहा भयो सुन्दर सबल स्याम! टूटे गुन[1] धनुष तुनीर[2] तीर झरिगो।
हालत न चंप लता, डोलत समीरन के, बानी कल कोकिल कलित कंठ परिगो।
छोटे छोटे छौना नीके नीके कलहंसन के, तिन के रुदन तैं स्रवन मेरो भरिगो।
नीलकंज मुद्रित[3] निहारि बिद्यमान भानु, सिंधु मकरन्दहिँ अलिन्द पान करिगो*॥

१. रोदा.　　२. तर्कस.　　३. मुदे हुए.

* रूपकातिशयोक्ति से सखी नायिका की सुरतान्त दशा को लक्षित कराती है. यथा "अतिशयोक्ति रूपक जहाँ केवल ही उपमान। कनकलता पर चन्द्रमा धरे धनुष द्वै बान॥"

(२)

भौंर तजि कचन कहत मखतूल, वै कपोलन को कंबु कै मधू[1] की भाँति भाँति है।
विद्रुम विहाय सुधा अधरन भाषैं, कंज बरजैं कुचनि करैं श्रीफल की ख्याति है।
कंचन निदरि गनै चंपक के पात गात, कान्ह मति फिरिगई काल्हि ही की राति है।
"दास" यों सहेली सों सहेली बतराति सुनि सुनि उत लाजन नबेली गड़ी जाति है*॥
(२८७)

(३)

कहि दै मन हूँ की अपूरब बात, जो काल्हि प्रभात एकन्त भई ?
हम तौ न रही तेहि ठाँव, कहौ तुम कीन्ही कितेक उपाय दई ?
"कमलापति" मोते छिपावती क्यों, हम हूँ लखी या चतुराई नई ?
मनि मन्दिर मोहनै देखि लली ! भली कीन्ही जो पीठि दै बैठि गई !!
(२८८)

(४)

आई हौ पाँय दिवाय महावर, कुञ्जन तैं करि कै सुख सेनी।
साँवरे आजु सँवार्यो है अंजन, नैननि को लखि लाजति एनी।
बात के बूझत ही "मतिराम" कहा करती अब भौहैं तनेनी।
मूदी न राखति प्रीति अली ! यह गूँधी गोपाल के हाथ की बेनी॥
(२८९)

(५)

मेरे बूझत बात, तू कत बहरावति बाल ?
जग जानी विपरीत रति लखि बिंदुली पिय भाल॥
(२९०)

(६)

नटैन, सीस साबित भई, लुटी सुखन की मोट[3]।
चुप करिए चारी[4] करति सारी परी सरोट[5]॥
(२९१)

१. महुआ का फूल. २. नहकारो. ३. समूह. ४. चुगली ५. सिकुड़न.
* प्रेमोन्मत्त नायक के दर्शनसम्बन्धी उपमाओं को तिरस्कृत कर नवीन स्पर्शसम्बन्धी उपमाओं के देने से नायिकास्पर्शसुखानुभव व्यंग्य द्वारा लक्षित हुआ. यह उत्तम व्यंग्य का उदाहरण हो सकता है॥

४. कुलटा ।

जार[1] पुरुषों के संभोगादिक से असन्तुष्टा स्त्री को कुलटा कहते हैं ॥

(यथा)

जेते सब तरुबर तरलै[2] बिलोकियत, बाटिका बिटप लता जेती सुखकारी है ।
करतो दई जो दया करिकै हमारे हेत रचना नबीन करौं बिनय पुकारी है ।
मेटती हिये को ताप लपटि लपटि आप, कहै "शिवराज" सखी ! सपथ तिहारी है ।
फरते पुरुष जे निकरते सुमन सब, होती तौ सुफल मन कामनाँ[3] हमारी है ॥
(२१२)

(२)

यों अलबेली अकेली कहूँ सुकुमारि सिँगारनि कै चलै कै चलै ।
त्यों "पदमाकर" एकन के उर मै रस बीजनि बै[4] चलै बै चलै ।
एकन सों बतराय कछू, छिन एकन को मन लै चलै लै चलै ।
एकन को तकि घूँघट मै मुख मोरि कनैखिनि[5] दै चलै दै चलै ॥
(२१३) तथा

५. अनुशयाना ।

संकेत नष्ट होने से सन्तापित[6] स्त्री को अनुशयाना कहते हैं. इनके तीन भेद हैं, अर्थात् संकेतविघट्टना, भाविसंकेत-नष्टा और रमणगमना ॥

१. परस्त्रीरत.
२. चंचल.
३. इच्छा.
४. बोना.
५. आँखों के कोर से देखना.
६. दुःखित.

१. संकेतविघट्टना ॥

वर्त्तमान संकेत नष्ट होने से सन्तापित स्त्री को संकेतविघट्टना कहते हैं ॥

(यथा)

जरि जाती उजारत ऊखन के, गिरि जाती सुने सन[1] की गतियाँ।
हरियारी[2] सु क्यों रहती, "द्विजदेव" सुने तृन सूखन की बतियाँ।
रहि जाती सु क्यों वह प्रीति लता, सहि जाती बिथा कब धौं छतियाँ।
पति[3] राखतीं जौ न दया करि कै पति[4] पूरी पलासन की पतियाँ[5] ॥

(२९४)

२. भाविसंकेतनष्टा।

भावि संकेत नष्ट होने की सम्भावना से दुःखित स्त्री को भाविसंकेतनष्टा कहते हैं ॥

(यथा)

विचकिलवल्लिकाकी,माधवीकी,मल्लिकाकी,एलाकी,लवंगकी,ललितन्यारीक्यारी हैं।
चम्पककी,चन्दनकी,मौलसिरी वृन्दनकी,वलित लतान सों मिलित साख सारी हैं।
भनत "कविन्द" मति खेद करै मृगनैनी! तेरे हेत लीन्ही हम खबरि अगारी हैं।
गहगहे गुलवारी, सुन्दर सु गुलवारी, तेरे सासुरे मैं सुनी कैयो फुलवारी हैं॥

(२९५)

(२)

चालो[6] सुनि चन्दमुखी चित मैं सुचैन करि, तित बन बागन घनेरे अलि घूमि रहे।
कहै "पदमाकर" मयूर मंजु नाचत हैं, चाय सों चकोरिनी चकोर चूमि चूमि रहे।

१. एक प्रकार का पौधा.
२. सब्ज़ी और कृष्ण से प्रीति.
३. इज्ज़त.
४. पत्र और मर्य्याद.
५. कतार.
६. द्विरागमन, गौना.

कदम, अनार, आम, अगर, असोक थोक[1], लतनि समेत लोने लोने लगि भूमि रहे ।
फूलि रहे, फलि रहे, फबि रहे, फैलि रहे, झपि रहे, झलि रहे, झुकि रहे, झूमि रहे ॥
(२१६)

(३)

छाय रहो बहु फूलन की रज, मानो मनोज बितान तने हैं ।
सीरे समीर सुधा हू तें सैागुने डोलत मन्द सुगन्ध सने हैं ।
गुञ्जत पुञ्ज हैं भौंरन के तहाँ, होत कपोतं[2] के घोस[3] घने हैं ।
सोच कहा जौ न ज्वार जमी, ये तमाल के कुञ्ज तौ वेई बने हैं ॥
(२१७)

३. रमणागमना ।

संकेत मे प्रियगमन के अनुमान से अपनी अनुपस्थिति पर सन्तापित स्त्री को रमणगमना कहते हैं ॥

(यथा)

लपटैं सुगन्धन की आवैं गन्ध बन्धन मे, भ्रमत मदन्ध भौंर सरस बिराव के ।
परत पराग पुञ्ज साँवरे बदन पर, मंजु छबि छैलने छबीले भूरि भाव के ।
समय की चूक हूक सालति प्रवीनन को, मौसर[4] न आवै बैन औसर जवाब के ।
चखन चुवन लाग्यो प्यारी के गुलाब नीर देखि बलबीर सीस सुमन गुलाब के ॥
(२१८)

(२)

छरी सपल्लव लाल कर लखि तमाल की हाल ।
कुँभिलानी उर साल धरि फूल माल ज्यों बाल ॥
(२१९)

१. समूह.
२. कबूतर.
३. शब्द.
४. मयस्सर.

(३)

तेरे बिन दरस बिकल हौं मै प्रान प्यारी! जब ही तैं मोहन बजाई या उकति[1] है।
तब ही तैं वाको घर आँगन सोहात नाहिँ, बार बार धाय कुञ्ज ओर ही तकति है।
कहै "हनुमान" पूँछे वेदन बतावै नाहिँ, बावरी लौं और ही की और ही बकति है।
साँसुरी न आवत, पै आँसुरी बहत, तान वाही बाँसुरी की पाँसुरी[2] मे कसकति है॥
(३००)

६. मुदिता।

परपुरुषप्रीतिसंबन्धी वाञ्छित[3] की अकस्मात् प्राप्ति से प्रसन्न होनेवाली स्त्री को मुदिता कहते हैं॥

(यथा)

न्योते गए घर के सिगरे, सु बेरामी[4] को ब्याज कै आजु रही मै।
"ठाकुर" है बहिरी[5] एक दासी, सो राखी बरोठे[6] बिचारि कै जी मै।
आए भले खिरकी मग ह्वै, यह आइबो चाहतई हुती ही मै।
आजु निसा[7] भरि, प्यारे! निसा भरि कीजियै कान्हर केलि खुसी मै॥
(३०१)

सामान्या।

केवल धनार्थ प्रेमकारिणी स्त्री को सामान्या कहते हैं॥

☞ इसका विशेष विस्तार रसहीन होने की सम्भावना से नहीं किया; क्योंकि हिन्दी कविसिरमौर श्री केशव दास जी का बहुत यथार्थ कथन है. यथा "और जो तरुनी तीसरी क्यों बरनौ यहि ठौर। रस मै निरस न बरनियै कहत रसिक सिरमौर"॥

१. नवीनगान.
२. पँसली.
३. इच्छा.
४. बीमारी.
५. बधिर.
६. पौरि.
७. इच्छा.
८. फैलाव.

सामान्या.

(यथा)

नाचति है, गावति है, रीझति, रिझावति है, लीबे ही की घात[1] बात सुनति न बियं[2] की।
तन को सिँगारै, नैन कज्जल सुधारै, अति बार बार वारै[3] प्रान, ऐसी रीति तिय की।
"गूँधर" सुकबि हेतु धन हीं के बारबधू[4] और न बिचारै कछू, यहै बात जिय की।
लाल चाहै जिय सों कै बाल मेरे हिय लागै, बाल चाहै हिय सों कै माल लीजै पिय की॥
(३०२)

(२)

ढिग आय कै बैठी सिँगार सजे नख तैं सिख लौं मुकता लरियाँ।
मुसक्याय कै नैन नचाय कै गाय कियो बस बैन गुवालरियाँ।
दरसावति लाल को बाल नई सु सजे सिर भूषन झालरियाँ।
छबि होती भली गजमोती के बीच जौ होतीं बड़ी बड़ी लालरियाँ॥
(३०३)

(३)

ओंठगी चनन केवरियाँ जोहौं बाट।
उड़िगै सोन चिरैया, पिञ्जर हाथ॥
(३०४)

१. अन्यसुरतदुःखिता*।

प्रियसम्भोगचिह्नित स्त्री पर दुःख प्रगट करनेवाली स्त्री को अन्यसुरतदुःखिता कहते हैं॥

१. तार.
२. दूसरे की.
३. निछावर करती.
४. वेश्या, रंडी.

* इन भेदों के इस स्थान पर वर्णन करने का कारण पृष्ठ १७ पंक्ति ३ मे लिख दिया गया है॥

(यथा)

स्वेदकन जाली अंसुमाली[1] की तपनि आली! सुकी जानि खंडे[2] तौ अधरबिम्ब बूझे हैं।
वेनी जानि साँपिनी सो चूँथी है कलापिनी[3] ने, बापुरी चकोरी को कपोलै चन्द सूझे हैं।
"रामजी" सुकवि, हौं पठाई तू जहाँ न गई, वन्द कंचुकी के काहू झारन अरूझे हैं।
उरज उचौ हैं ये स्वयंभू जानि किंसुक सो कुञ्जन के कोने आजु कौनें इन्हैं पूजे हैं॥
(३०५)

(२)

आई अनमनी ह्वै, वदन पियराई छाई, सुधि न रही है कहूँ आपने परारे की।
कहति कछू है, मुख कढ़त कछू को कछू, देखति हौं आज तेरी गति मतवारे की।
नेकु थिर ह्वै कै बैठु, राई लोन वारौं तोपैं, तू तौ "हनुमान" मेरी साथिनि है बारे की।
वजर परो री मो पैं, पठई कहाँ तैं तहाँ, नजर लगी री तोहि जुलफनवारे की॥
(३०६)

(३)

धोय गई केसरि कपोल कुच गोलन की, पीक लीक अधर अमोलन लगाई है।
कहै "पदमाकर" त्यों नैन हूँ निरंजन[4] भे, तजत न कंप देह पुलकनि छाई है।
वाद मति ठानै, झूँठ वादिनि भई री अब, दूतपनो छोड़ि धूतपनै[5] मै सोहाई है।
आई तोहि पीर न पराई, महा पापिनि तू, पापी लौं गई न कहूँ बापी न्हाय आई है॥
(३०७)

(४)

कंटक तैं अटकि अटकि सब आपुही तैं फटिगे वसन, तिन्है नीके कै बनाय लै।
वेनी के विचित्र बार हारन मै आय आय अरुझें अनोखे, ते तौ बैठि सुरझाय लै।
कहै "शिव" कवि दवि काहे को रही है, वाम! घाम तैं पसीना भयो ताको सियराय लै।
बात कहिबे मे नदलाल की उतालै[6] कहा? हालै[7] तौ हरिननैनी! हफनि[8] मिटाय लै॥
(३०८)

१. सूर्य.
२. काटै.
३. मुरैली.
४. अंजन रहित.
५. धूर्तता, चालाकी.
६. जल्दी.
७. इस समय.
८. हाँफना.

(५)

आई छल छन्द सों गोबिन्द संग खेलि फागु, केसरि के रंग की सुअंग छबि छ्वै रही।
कहै कबि "दूलह" न जानि परी कौतुक मैं, पाछिले पहर की रजनि घरी द्वै रही।
धाय घर जाय न्हाय नूतन[1] बसन साजि आरसी लै हेरै मुख दूनी दुति ज्वै रही।
बेसरि के मोती बीच रीह है गुलाल लाली, आली! वह लाली सो हमारी सौति ह्वै रही॥

(३०९)

(६)

गुन एक अपूरब तोमैं लख्यो, सुतो सीखिबे की अभिलाष करौं।
"कमलापति" तोसी हितू है तुही, लखि कै सब भाँति अनन्द भरौं।
यहि हेत कहौं यह बात, बलाय ल्यौं, दूजी उपाय न चित्त धरौं।
चित और को हाथ मैं लीबो बताय दै, पाहुनी[2]! पायन तेरे परौं॥

(३१०)

२. गर्विता।

जो स्त्री अपने रूप वा प्रिय के प्रेम का अभिमान करती है, उसको गर्विता कहते हैं. इन्के दो भेद हैं, अर्थात् रूपगर्विता और प्रेमगर्विता॥

१. रूपगर्विता।

[नाम हीं से लक्षण स्पष्ट है॥]

(यथा)

मन्द भये दीपक बिलोकि क्यों अनन्द होते, भोरे चारु चन्द के चकोर चित चोखे तैं।
होती समताई[3] देखवारन के भाखे कब, चिन्तामनि[4] आरसी की आनन अनोखे तैं।

१. नया.　　३. बराबरी.
२. मेहमानिन.　　४. मणि विशेष.

"द्विजदेव" की सौं, होतो एतो उपहास[1] कब, मानसर हू के अरबिन्द अति ओखे तैं ।
आलिनिकेसंग दीपमाली[2] के बिलोकिबेकोऔझकिउझकिजौन झाँकतीझरोखे तैं ॥
(३११)

(२)

ये अँग दीपति पुञ्ज भरे, तिनकी उपमा छन जोन्ह सों दीजत ?
आरसी की छवि त्यों "द्विजदेव" सु गोल कपोल समान कहीजत ?
चातुर स्याम ! कहाय कहौ, उर अन्तर लाज कछूक तौ लीजत ?
रागमयी अधराधर[3] की समता, कहा कैसे प्रबाल[4] सों कीजत ??
(३१२)

(३)

ये दिन रैन प्रभा मे भरे रहैं, वै द्युति हीन ह्वै प्रात सुहावत ।
स्वच्छता सोहि रही इन मे, उन अंक मै स्यामलतौ[5] सरसावत ।
भेद सबै मुख के औ मयङ्क के जेते हुते "भुवनेस" बतावत ।
ताहू पै भूलिकै, एहो चकोर ! कहा मम आनन पैं टक लावत ॥
(३१३)

२. प्रेमगर्विता ।

[नाम हीं से लक्षण स्पष्ट है ॥]

(यथा)

आँखिन मे पुतरी ह्वै रहैं, हियरा मैं हरा ह्वै सबै रस लूटैं ।
अंगन संग बसैं अँगराग ह्वै, जीव तैं जीवन मूरि[6] न टूटैं ।
"देव" जू प्यारे के न्यारे सबै गुन, मो मन मानिक तैं नहिँ छूटैं ।
और तियान तैं तौ बतियाँ करैं, मो छतियाँ तैं छिनौ जब छूटैं ॥
(३१४)

१. हँसी.
२. दिवाली.
३. ओठ.
४. मूगा, पल्लव.
५. कालापन.
६. मूल.

(२)

हौं गई भेंट भई न सहेट[1] मै, तातैं रुखाहट मो मन छाय गो ।
कालिंदी के तट भाँवते[2] पाँय हौं, आयो तहाँ लखि रूखे सुभाय गो ।
भीर मै बीर ! न बोलन को समै, न्है बे बहानहिँ तीरहिँ आय गो ।
मो पगै कै सिर छाँह घरीक लौं,मूंदे[3] सु मोहन मोहिँ मनाय गो ॥
(३१५)

३. मानवती ।

प्रियापराधसूचकचेष्टाधारिणी स्त्री को मानवती कहते हैं॥

(यथा)

करत कलोलकीर,कोकिला,कपोत,केकी,चन्द के बधाई बाजी, जाने जिनछिन धुनि ।
सुकबि "सुमेर" मीन, मृगन, मराल, मन मुदित मयूर न्योते मेनका सकल मुनि ।
केहरी,कँदूरी,कोक,कदली,कदम्ब फूले, चायन सों सौतिन रचे हैं चीर चुनि चुनि ।
कहापटतानिप्यारीपौढ़ीहौ,बिलोकोआनि,चारौ ओरचौचँदमच्योहैतुम्हैरूसीसुनि ॥
(३१६)

(२)

चाँदनी के आँगन बिछौना बिछे चाँदनी के,फैलि रही चाँदनी सोहाई "देव" भूमि भूमि ।
तोहिँ बिनु फीकोई लगत, चलु चन्दमुखी! तेरेई चरन चरचत मुख चूमि चूमि ।
देखि चलि आली! कैसो राख्यो है चँदोवा[4] तानि,तामैसुखदान तो बिरहगिरै घूमि घूमि ।
झीनीझीनीझाँईयेजुन्हाई की झलक तैसीझिलिमिलिझालरैंरहीं हैंझुकिझूमिझूमि ॥
(३१७)

१. संकेत.
२. रगड़ २ कर धोना.
३. गुप्त.
४. बितान.

(३)

मान कृसोदरि[1]! क्यों न करै? कृस है, कृस होत निसा अवसान[2] मे।
क्यों न तजो व्रतमौन मरू[3] सुनि कै धुनि ताम्रसिखा[4] कृत कान मे।
आनि बसी तुव आनन मे रुचि "पण्डित" जो रही चन्द्र कलान मे।
जान दै, मान की औधि गई अब, प्रानप्रिया! बसु तू मेरे प्रान मे॥

(३१८)

(४)

गुञ्जैं गे भौंर विरागै[5] भरे, बन बोलैंगे चातक औ पिक गाय कै।
फूलैं गे टेसू, कुसुम्भ जहाँ लगि, दौरैंगे काम कमान चढ़ाय कै।
वायु बहैगी सुगन्ध, "मुबारक" लागि है नैन विसोर्क[6] सो आय कै।
मेरे मनाए न मानौ, बबा कि सौं, ऐहै बसन्त, लेजै है मनाय कै॥

(३१९)

(५)

मान करत बरजति न हौं उलटि दिवावति सौंह।
करी रिसौंहीं जाँयगी सहज हँसौंहीं भौंह॥

(३२०)

(६)

कहा लेहुगे खेल मैं, तजौ सटपटी बात।
नेक हँसौंहीं हैं भई भौंहैं सौंहैं खात॥

(३२१)

(७)

गई अैंठि तिय भुव धनुष, नवति न यतन अनेक।
लाल! जाय सीधी करौ हृदय आँच की सेंक॥

(३२२)

१. पतली कमरवाली.
२. अन्त.
३. नायिका.
४. कुक्कुट, मुर्गा.
५. विशेष राग से.
६. बाण.

(७)

ये घन घोर उठे चहुँ ओर, इन्हैं लखि का करि है रिसि[1] ह्वै तू।
सौति पैं जाय है, जौ "कमलापति" पाय है छाँह छिनेक न छ्वै तू।
जानि लई अब ही सिगरी, कलपै है सुहाथ के हीरे[2] को ख्वै[3] तू।
पाँय परे हूँ न मानती री! अब जा जनि ऐसी मिजाजिनि[4] ह्वै तू॥

(३२३)

१. क्रोध.
२. हीरा.
३. खोकर.
४. गर्व्व से भरी.

एकादश कुसुम।

दशविध नायिका।

अवस्थानुसार नायिकाओं के दश भेद हैं; अर्थात् प्रोषितपतिका, खण्डिता, कलहान्तरिता, विप्रलब्धा, उत्कण्ठिता, वासकसज्जा, स्वाधीनपतिका, अभिसारिका, प्रवत्स्यत्पतिका और आगतपतिका; और फिर इन प्रत्येक नायिकाओं के भेद, वयःक्रम सहित, स्वकीया और परकीया में दिखाये गये हैं; परन्तु सामान्या के भेद रसहीन समझ कर छोड़ दिये गये॥

१. प्रोषितपतिका।

प्रिय के देशान्तरगमन से सन्तापित स्त्री को प्रोषितपतिका कहते हैं॥

मुग्धा प्रोषितपतिका।

(यथा)

पति प्रीति के भारन जाती उनै,[१] मति ख्वै दुख भारन साले[२] परी।
मुख बातें[३] तें होती मलीन सदा, सोई मूरति पौन के पाले[४] परी।

१. नय जाती. ३. साँस.
२. दुखी. ४. हवाले.

"द्विजदेव" अहो करतार! कछू करतूति न रावरी आले[1] परी।
वह नाहक गोरी गुलाब कली सी मनोज के हाय हवाले परी॥

(३२४)

मध्या प्रोषितपतिका।

(यथा)

आवति चली ही यह बिषम बयारि देखि, दबे दबे पाँयन किवारन लरजि[2] दै।
कैलिया कलङ्किनि को दे री समुझाय, मधुमाती मधुपालिनि कुचालनि तरजि दै।
आज बृजरानी के वियोग को दिवस, तातैं हरे हरे कीर बकवादिन हरजि[3] दै।
पी पी कै पुकारिबे की खोलैं ज्यों न जीहन पपीहन के जहन त्यों बावरी! बरजि दै॥

(३२५)

(२)

चारु चारु चन्दन लै घसो घसो आछी बिधि, लाओ री कपूर धूर धरो आनि घर मै।
सेवती, गुलाब औ उसीर नीर नए नए, लाओ नलिनी के दल नीके नए नरमै।
देहुरी किवार, द्वार द्वार मै झरोखे झाँपि, "जगतसिंह" परदे त्यों खींचोखींचो दर मै।
ऋतुराज जू की जोर जाहिर अवाई, सूल हूल सी मची है बिरहीन के नगर मै॥

(३२६)

(३)

बाँचत न कोऊ अब वैसियै रहति खाम[4], युवती सकल जानिगई गति याकी है।
झूठ लिखिबे की उन्हैं उपजै न लाज कछू, जाय कुबजा के बसे, निलज तियाकी है।
दूसरी अवधि "द्विजदेव" राधिका के आगे बाँचै कौन नारि जौन पोढ़[5] छतिया की है।
ऐसही मुखाखर[6] कहो सो कहो, ऊधो! इहाँ उठि गई बृज तैं प्रतीत पतिया की है॥

(३२७)

१ उत्तम.
२. धीरे २ बन्द करो.
३. रोक दो.
४. बन्द लिफाफा.
५. मजबूत, कठोर.
६. मुखाक्षर, ज़बानी.

(४)

भ्रमे भूले मलिन्दन देखि नितै तन भूलि रहैं किन भामिनियाँ।
"द्विजदेव"जू डोली लतानि चितै हिय धीर धरै किमि कामिनियाँ।
हरि हाय विदेस मै जाय बसे तजि ऐसे समै गज गामिनियाँ।
मन बौरै न क्यों सजनी! अब तौ बन बौरी बिसासिनि आमिनियाँ॥

(३२८)

(५)

लखे सुखदानि[१] पखान सो जानि मयूरन देती भगाय भगाय।
मना कै दियो पियरे पहिराव को गाँव मै प्यादे लगाय लगाय।
भुलावती वाके हिये तैं हरेहीं कथानि मै "दास" पगाय पगाय।
कहा कहिए, पिय बोलि पपीहा वृथा जिय देतो जगाय जगाय॥

(३२९)

प्रौढा प्रोषितपतिका।

(यथा)

कूकि कूकि केकी हिय हूकनि बढ़ावैं क्यों न, बिषधर[२] भोजन के अतिउतपाती री!
साजि दल बादर डरावनें डरावैं क्यों न, एतो घनस्याम जूके परम सँघाती[३] री!
अजगुति एक तोहिँ बूझन चहति आली"द्विजदेव"की सैां, कछु बूझति सकाती री!
अबला अबल जानि सूनी परी सेज मोहिँ, कैसे छन जोन्ह की न दरकति छाती री!!

(३३०)

(२)

तमकि झमकि बक पाँति की चमकि, जोति जीगन जमकि, चमकनि चपलान की।
बेहरि[४] झकोरैं, चहू ओरैं मोरैं सोरैं करि, प्रेम के हलोरैं बोरैं धौरैं धुरवान की।

१. सुख के देनेवाले.
२. सॉंप.
३. साथी.
४. प्रचंड बात.

रतिया जमकि आई, छतिया उमगि आई, पतिया न आई प्यारे "श्रीपति" सुजान की।
नेह तरजनि, बिरहागि सरजनि[1], सुनि मान मरजनि[2] गरजनि बदरान की ॥
(३३१)

(३)

भूले भूले भौंर बन भाँवरैं भरैंगे चहूँ, फूलि फूलि किंसुक जके से रहि जाय हैं।
"द्विजदेव" की सौं, वह कूजनि[3] बिसारि कूर कोकिल कलंकी ठौर ठौर पछिताय हैं।
आवत बसन्त के न ऐहैं जौ पै स्याम, तौपै बावरी! बलाय सों, हमारे हू उपाय हैं।
पीहैं पहिलेही तैं हलाहल[4] मगाय, या कलानिधि की एकौ कलौ[5] चलन न पाय हैं॥
(३३२)

(४)

घेरि घेरि घहरि घहरि घन आए घोर, तापैं महा मारुत झकोरत झरपै[6] सो।
सुनि सुनि कूकनि मयूरन की, बीर! मैं तौ राख्यो निज प्रान यमराज हि अरपै[7] सो।
भीति भरी भौन तैं कढ़ों न "कमलापति" जू तऊ बेधि डारै हियो तड़िता तरपै[8] सो।
गावन मलार को सोहावन लगै न, भयो भावन बिना री! मोहिं सावन सरप सो॥
(३३३)

(५)

फूलैंगे अनार, कचनार, नहसुत, आम, फूलैंगे सिरिस औ पनस फूल सूलैंगो।
फूलैगी सु पाँडरी औ मालती, अमिलतास, सेमर, पलास फूलि आगि रूप तूलैंगो।
फूलैगो कनैर, माधवी, चमेली, "रघुनाथ" फूलैगो गुलाब, जिन्है देखे चेत भूलैगो।
बिरह को बिरवा लगायो जौन कन्त, सखी! आवत बसन्त कहौ वहौ अब फूलैगो॥
(३३४)

(६)

फूले घने तरु जाल बिलोकि हुते कछु सूधे सुभाय ससेरी[9]।
आगिसी लागी पलासन देखि तऊ भय सों कहूँ भागि बचेरी।

१. सिरजना. ४. बिष. ७. अर्पण, नज्र.
२. भंग करने वाला. ५. षोडशांश. ८. चमक.
३. शब्द. ६. बेग. ९. सहमिजाना.

छूटे सचानै[1] से ये अब तो "द्विजदेव" चहूँ दिसि कोकिल बैरी ।
ह्वै है कहा, सजनी! अबधौं? बचिहैं केहिँ भाँति सों प्रान पखेरी[2] ॥
(३३५)

(७)

उमडै नभ मण्डल मण्डित मेघ अखण्डित धारन सों मचि हैं ।
चमकैगी चहूँ दिसि तैं चपला, अबला करि कौन कला बचि हैं ।
अकुलाय मरैंगी बलाय "मुबारक" आजु उपाय यही रचि हैं ।
पहिले अँचवैंगी हलाहल को फिरि केकी कोलाहल कै नचि हैं ॥
(३३६)

(८)

कूकती कैलिया कानन लौं व सह्यो नहिँ जातिन की सु अवाजैं ।
भूमि तैं लैके अकास लौं फूले पलास दवानल की छबि छाजैं ।
आए बसन्त, नहीं घर कन्त, लगीं सब अन्त की होने इलाजैं ।
बैठि रहीं हम हूँ हिय हारि, कहाँ लगि टारिये हाथन गाजैं[3] ॥
(३३७)

(९)

कहा भयो जो बीछुरे, मो मन तो मन साथ ।
उड़ी जाति कित हूँ गुड़ी[4] तऊ उड़ायक हाथ ॥
(३३८)

परकीया प्रोषितपतिका ।

(यथा)

पावस मैं नीरदै[5] न छोड़ै छन दामिनी हू, कामिनी रसिक मनमोहन को क्यों तजै ?
अचला[6] पुरानी पुलकावलि को आनी, उरधाय रजवती[7] सरि[8] सिंधु साज को सजै ।

१. बाज.
२. पच्छी.
३. वज्र.
४. कनकव्वा, पतंग.
५. मेघ और दन्तरहित.
६. पृथ्वी.
७. धूलियुक्ता और ऋतुमती.
८. नदी.

नीर को नपुंसक[1] कहत कबि "धीर" तेऊ धरि कै अधीर गति नारी[2] नारी को भजै[3]।
कुसुमित लता लखो लपटी तमालन सों, लालन सों कहो, ऊधो! क्यों न अजहूँ लजै॥
(३३९)

(२)

जोग[4] की न कहियो, बियोग कहियो न कछू, लोग की न कहियो, न सोक सरसाइयो।
हित की न कहियो, अहित की न भाषियो जू, चित की न कहियो, नहीं चेत की चेताइयो।
पूछैं जौ "प्रबीनबेनी" रसिक गोपाल लाल, गोपिन को हाल तौ बिहाल[5] इमि गाइयो।
ऊधो! मनभावन सों सहज सुभावन सों सावन सुहावन को आवन सुनाइयो॥
(३४०)

२. खण्डिता।

अन्यनारीसंभोगजनित असाधारणचिह्नयुक्त नायक के प्रातरागमन से कुपित स्त्री को खण्डिता कहते हैं॥

☞ खण्डिता नायिका मे नारीसम्भोगसूचक कज्जल, सिन्दूरादि सरीखे असाधारण चिह्न (जिसपर सामान्य लोग भी शङ्का करसकते, न कि उसकी प्रिया) एवम् प्रतीक्षा[6] परमावधि द्योतक[7] प्रियप्रातरागमन का होना इस लिये परमावश्यक नियम है, कि यदि परकीया और सामान्या प्रियतम के नेत्रलालिमादि साधारण चिह्न होने और तनक विलम्ब करने से कुपित होने लगें तो इनके सूक्ष्म प्रेम का निर्वाह होना कठिन हो जाय; और स्वकीया जो ईषद्[8] विलम्ब और साधारण चिह्नों पर रुष्ट होती हैं, तो विशेष चिह्न और प्रातरागमन की क्या कथा है॥

१. नपुंसक लिंग और पुंसत्व हीन पुरुष. ५. विह्वल.
२. स्त्री और बरहा. ६. बाट जोहना.
३. स्मरण करता और भागता. ७. सूचक.
४. संयोग. ८. थोड़ा.

मुग्धा खण्डिता।

(यथा)

रति रंग रागे, प्रीति पागे, रैनि जागे नैन, आवत लगेई घूमि झूमि छवि सों छके।
सहज विलोल परे केलि की कलोलनि मै, कबहूँ उमंगि रहे, कबहूँ ज़के थके।
नीकी पलकनि पीक लीक झलकनि सोहै, रस बलकनि[1] उन मदन कहूँ सके।
सुखद सुजान"घन आनद"सुपोखैं प्रान, अचरज खानि उघरे हूँ लाज सों ढके॥

(३४१)

(२)

लाहु[2] कहा खरो बेंदी दिये, औ कहा है तर्‌यौना के बाँह गहाए ?
कंकन पीठि, हिये ससिरेख की बात बनै, वलि ! मोहिँ बताए ?
"दास" कहा गुन ओठ मै अंजन, भाल मै जावक लीक लगाए ?
कान्ह ! सुभाय[3] हीं बूझति हैं मै, कहा फल नैननि पान खवाए ??

(३४२)

(३)

लै सुखसिन्धु सुधामुख सौति के, आए इतै रुचि ओठ अमी की।
त्यों हीं निसंक लई भरि अंक, मयंकमुखी सु ससंकित जी की।
जानि गई पहिचानि सुगन्ध, कछू घिन मानि भई मुख फीकी।
ओछे[4] उरोज अँगोछि[5] अँगोछनि[6], पोंछति पीक कपोलनि पी की॥

(३४३)

मध्या खण्डिता।

(यथा)

आए उठि प्रात, अँगिरात हैं, जम्हात जात, पङ्कज से नीद भरे लोचन झपकि रहे।
मरगजे वागे, लागो अंजन अधर भाल, जावक सुमन हार हियरे चपकि रहे।

१. उबलना.
२. लाभ.
३. योंहीं.
४. छोटे.
५. पोंछ कर.
६. रूमाल.

"गोकुल" सनेह भरे हिये नेह तपनि के आखर फुलिंगे[1] ऐसे ओठन लपकि रहे।
देखि छबि बोलति न लाज भरी घूँघुट मै, बड़ी बड़ी आँखिन तैं आँसुवा टपकि[2] रहे।
(३४४)

(२)

ख्याल मन भाए कहूँ करि कै गोपाल घरैं, आए अति आलस मढ़ेई बड़े तरके[3]।
कहै "पदमाकर" निहारि गजगामिनी के गज मुकतानि के हिये पैं हार दरके।
एते पैं न आनन ह्वै निकसे बधू के बैन, अधर ओराहनै सु दीबे काज फरके।
कंधन तैं कंचुकी, भुजानि तैं सु बाजूबन्द[4], पौंचन तै कंकन हरेई हरे सरके॥
(३४५)

(३)

मरकत भाजनै[5] सलिलगत इन्दुकला के बेष।
भीनै[6] भगी[7] मै भलमलैं स्याम गात नख रेष॥
(३४६)

प्रौढा खण्डिता।

(यथा)

खाए पान बीरा से बिलोचन बिराजैं आजु, अंजन अँजाएँ[8] अध अधरा अमी के हैं।
कहै "पदमाकर" गोविन्द देखो आरसी लै, अमल कपोलन पै किन पान पीके[9] हैं।
ऐसो अवलोकिबेई लायक मुखारबिन्द, जाहि लखि चन्दैं अरबिन्द होत फीके हैं।
प्रेम रस पागि जागि आए अनुरागि, यातैं अब हम जानी कै हमारे भाग नीके हैं॥
(३४७)

(२)

मेरे नैन अंजन तिहारे अधरनि पर सोभा देखि गुमरै[10] बढ़ायो सब सखियाँ।
मेरे अधरनि पै ललाई पीक, लाल! तैसे रावरो कपोल गोल नोखी लीक लखियाँ।

१. चिनगारी, अग्निकण.
२. गिर रहे.
३. प्रभात.
४. आभूषण विशेष.
५. बरतन.
६. महीन.
७. अँगरखा.
८. अंजन लगाए.
९. पीक थुके हुए.
१०. कानाफूँसी.

कवि "हरिजन" मेरे उर गुन माल, तेरे बिन गुन माल रेख सेख देखि झखियाँ[1]।
देखो ले मुकुर, द्युति कौन की अधिक, लाल! मेरी लाल चूनरी तिहारी लाल अँखियाँ॥
(३४८)

(३)

आजु लौं मौन गह्योई हुतो सुनि कै सिगरो गुन ग्राम तिहारो।
पै "द्विज देव" जू साँची कहौ, अब जोवत हू जिय जाय न जारो।
बूझती तातैं बिहारी! तुम्है, किन सौंहैं कपोल करो कजरारो[2]।
पीहै घटी[3] रस कौलौं, लला! अरु घाय सहैगो घर्यार[4] बिचारो॥
(३४९)

(४)

वन्दन[5] फैलि पराग रह्यो, कल केसरि केसर बिन्दु दियो है।
किंसुक जाल, गोपाल! नखच्छत[6], स्वास समीर सिरात हियो है।
अंजन रंजित या अलि आनन अंबुज को मकरन्द पियो है।
साँची कहौ, बृजराज! तुम्है रतिराज कितै ऋतुराज कियो है*॥
(३५०)

(५)

भोर ही न्योति गईती तुम्है वह गोकुल गाँव की ग्वालिनी गोरी।
आधिक राति लौं "बेनी प्रबीन" कहा ढिग राखि करी बरजोरी।
आवे हँसी हमै देखत, लालन! भाल मै दीनी महावर घोरी।
एते बड़े बृज मगडल मै न मिली कहूँ मागे हू रंचक रोरी॥
(३५१)

(६)

आए कहा अब मेरे ढिगाँ, उठि भोर ही कै मुख जोति मलीनी।
लागती हैं पलकैं ये अजौं, जिहिँ ऊपर पीक की लीक नवीनी।

१. पश्चात्ताप करती हू. ४. घड़ियाल, बजाने का घंटा.
२. कज्जलयुक्त. ५. रोरी.
३. जलघड़ी का कटोरा. ६. नख का दाग.
* कलंकित नायक की समता वसन्त से दिखलाई है.

सौहैं हजार करौ "कमलापति" मै तुम तैं बिनती बहु कीनी।
वासों न हाल यों पूँछो, लला! जेहिँ काल्हि महावर भाल मै दीनी॥

(३५२)

(७)

ऐसीयै जानी परति झगा ऊजरे माह।
मृगनैनी लपटी हिये, बेनी उपटी[1] बाँह॥

(३५३)

परकीया खण्डिता।

(यथा)

बाँके संकहीने राते,[2] कंज छबिछीने माते, झुकि झुकि झूमि झूमि काहू को कछू गनै न।
"द्विजदेव" की सों, ऐसी बनक बनाइ बहु भाँतिन बगारे, चित चाह न चहूँघा चैन।
पेखि परे पात जौ पैं गातन उछाह भरे, बार बार तातैं तुम्हैं बूझती कछूक बैन।
एहो ब्रजराज! मेरे प्रेम धन लूटिबे को, बीरो[3] खाइ आए कितै आप के अनोखे नैन॥

(३५४)

३. कलहान्तरिता।

स्वयं प्रिय का अपमान कर पश्चात्ताप करने वाली स्त्री को कलहान्तरिता कहते हैं॥

मुग्धा कलहान्तरिता।

(यथा).

सखी के सकोचे गुरु सोच, मृग लोचनि रिसानी पिय सों जु उन नेकु हँसि छुवो गात।
'देव' वै सुभाय मुसुक्याय उठीं गएँ इहिँ, सिसिकि[4] सिसिकि निसि खोय रोय पायो प्रात।

१. छाप.
२. लाल, सुरुख.
३. पान और बीमा.
४. मन्द रोदन.

को जाने वीर! विन विरही विरह विथा, हाय हाय करि पछिताति न कछू सोहात।
बड़े बड़े नैननि तैं आँसू भरि भरि ढरि, गोरो गोरो मुख आज ओरो[1] सो बिलानो[2] जात॥
(३५५)

मध्या कलहान्तरिता।

(यथा)

सुरति के चिन्ह भावते के भाल उर लखे, कोप भरे जोबन के ओप[3] भरे तन मैं।
केलि के महल सों बहाने करि बैठी आय, एहो "रघुनाथ" ह्वै उदास गुरजन मैं।
कहा कहौं, भटू! उठी इतनें मैं घन घटा, बकन की पाँति सो देखाई दीन्ही घन मैं।
तब तो अयानबस कीन्हे मान गुन गौरि, अब सुखदानि पछितान लागी मन मैं॥
(३५६)

प्रौढा कलहान्तरिता।

(यथा)

दीन्ही मन रंचऊ न चीठिन बसीठिनें[4] पैं, कीन्ही कानि कान्ह की न दीन अरजनि मैं।
"द्विजदेव" की सों, जऊ हारीं वे सिखाय, तऊ सुमुखि सखीन की सुनी न बरजनि मैं।
एरी मेरी वीर! धीर का विधि धरैगो हियो, चातकी चवाइनि की चोखी चरजनि मैं।
मेचक[5] रजनि मै, कदम्ब लरजनि मै, सुमेघ गरजनि मै, तड़ित तरजनि मै॥
(३५७)

(२)

ए अलि! एकन्त कन्त पाँयन परे हे आइ, हौं न जदे[6] हेरी या गुमान बजमारे[7] सों।
कहै "पदमाकर" वे रूसिगे सु ऐसी भई, नैन तैं नींद गई दाह के दवारे[8] सों।
रैन दिन चैन है न, मैन है हमारे बस, ऐन मुख सूखत उसास अनुसारे सों।
मानन की हानिसी दिखानिसी लगीहै, हाय कौन गुन जानिमानकीन्होप्रान प्यारे सों॥
(३५८)

१. ओला, बनौरी.
२. क्षीण, हीन.
३. शोभा.
४. दूत, संदेशहर.
५. काला.
६. यदि.
७. वज्रमारा.
८. दावानल.

(३)

मेरो पग झाँवतो हो भावतो सलोनो, हौं हँसत कही, 'बालम! बिताई कित रतियाँ'?
इतनो सुनत हँसि जात भयो, पीछे पछिताइ हौं मिलन चली गोए[1] भेष बतियाँ।
"दास" बिन भेट हौं दुखित भई आय सेज, सजनी! बनाय बूझी आयबे की बतियाँ।
बार लागी, लगी मग जोहैं हौं किवार लागी, हाय अब उनकी सँदेसऊ न पतियाँ॥
(३५९)

(४)

रसना[2], मति[3], इन नयना[4] निज गुन लीन।
कर[5]! तै पिय झिझिकारि, अजगुति कीन॥
(३६०)

परकीया कलहान्तरिता।

(यथा)

बहि हारे सीतल सुगन्ध समीर धीर, कहि हारे कोकिल सँदेसो पंचबान के।
साधन अगाधन बिसानी ना कछूक जापैं, कौन गनै भेद पग सीस दान मान के?
"द्विजदेव" की सौं, कछु मित्र[6] के बिछोह काल, देखि सकुचाने[7] दिग अंबुज अयान के।
भाज्योई भभरिसो तो मान मधुकर, आली! आज ब्याज कज्जल कलित अँसुवान के॥
(३६१)

(२)

उन्हें ना जनायो मैं बिलोकि प्रति अंगन मैं सुरति के चिन्ह जे प्रगट रहे लसि कै।
मोसों गए रूसि दूसि[8] प्रीति रीति मेरी, मेरी ओर प्यारे "रघुनाथ" हेरि भौंहैं कसि कै।
तोसों ना छिपावति हौं एरी भटू! अपराध, इतनो तो कीन्हो जो मैं ऐसे कह्यो हँसि कै।
'भोरही भई है भेट, भावते! गली मैं आज, अलसाने आवत कहाँ ते राति बसि कै'॥
(३६२)

१. छिपाये.
२. जिव्हा और रसहीन.
३. बुद्धि और नहीं.
४. नेत्र और नम्रतारहित.
५. हाथ और कार्य्यकारी.
६. प्रिय और सूर्य्य.
७. लज्जित और सम्पुटित.
८. दूषण कर.

४. विप्रलब्धा।

संकेत मे प्रिय की अप्राप्ति से व्याकुल स्त्री को विप्रलब्धा कहते हैं॥

मुग्धा विप्रलब्धा।

(यथा)

साजि कै सिँगार ससिमुखी काज, सजनी! वै ल्याई केलि मन्दिर सिखापन[1] निधानै[2] सी।
कान्ह बिनु कानन सँकेत सूनो देखि भई आनन की औरै दुति, अंग दुति आनै सी।
भनत "कविन्द" बोलै लाज तैं न कछू बाल, बीच खिली कलिका लगन लागी बानै सी।
बिथा मृगनैनी के हिये मै बढ़ी मान सी, वै चढ़ी चढ़ी भौंहैं गईं उतरि कमानै सी॥
(३६३)

मध्या विप्रलब्धा।

(यथा)

आई कामकामिनी[3] सी कन्तपैं एकन्तत हाँ ताहि न बिलोक्यो अति ब्याकुल ह्वै गौन[4] की।
ता समै तिया को तन ताप तेज तातो, छुवै हातो[5] सब सीतलता सरिता के पौन की।
स्वास के समीरन उसास भौंर भीर नहीं, तीर रहै ठाढ़ी मति धीर ऐसी कौन की।
डरपि डरपि चली साथ की सहेली सब, झरपि झरपि गईं बेली[6] रंग भौन की॥
(३६४)

प्रौढा विप्रलब्धा।

(यथा)

उरज उतंग अभिलाषी सेत कंचुकी है, राखी ना कछूक चित चोप रंग रेजे मै।
मोतिन की माल मलमल वारी सारी सजे, झलमल जोति होति चाँदनी अमेजे मै।

१. शिक्षा.
२. खजाना.
३. रति.
४. गमन.
५. नसागई.
६. लता.

विप्रलब्धा.

विहँसि बदन बिमला सी सो अटा पैं गई, देखे ना "प्रबीन बेनी" पिय सुख सेजे मै।
गरदे[1] भई है वह, दरद बतावै कौन ? सरद मयङ्क मारी करद करेजे मै॥
(३६९)

(२)

उज्जल सरद चंद चन्द्रिका अमन्द द्युति, सीतल सुगन्ध मन्द मन्द पौन फहरैं।
मुकता अमन्द मकरन्द कैसे बिन्दु चारु, बदनारबिन्दे[2] की छबीली छटा छहरैं।
साजि रंग रंगनि के अंगनि सिँगार प्यारी गई रति भौन दूजे यामिनी के पहरैं।
पेखि परजंक नदनन्द बिनु "सोमनाथ" लागीं अंग उठन भुजंग की सी लहरैं॥
(३६६)

परकीया विप्रलब्धा।

(यथा)

भादवैं की राति अँधियारी घेरे घन घटा, बरसै मुसलधार मोद भरे मन मै।
ऐसी समै भीजत कुँवर कान्ह जू के लीन्हे कुँवरि नबेली गई पागी प्रेम पन मैं।
जौन थल मिलन बतायो, तहाँ पायो नाहिँ "रघुनाथ" मदन सतायो ताही छन मै।
जेई बूदैं नीर की सुखद लागे धीर छूटे, तेई बूदैं तीर सी तिया के लागीं तन मै॥
(३६७)

५. उत्कण्ठिता।

संकेत मे प्रिय के अप्राप्तिकारण को वितर्क करनेवाली स्त्री को उत्कण्ठिता अथवा उत्का कहते हैं॥

मुग्धा उत्कण्ठिता।

(यथा)

ज्यों ज्यों चलैं सजनी अपने घर, त्यों त्यों मनो सुख सिंधु[3] मे पैठै।
ज्यों ज्यों बितीतति है रजनी, उठि त्यों त्यों उनीदे[4] से अंगनि ऐंठै।

१. शिथिल.
२. मुखकमल.
३. समुद्र.
४. निद्रा से भरे.

आवत बात न कोऊ हिये, चित कैसे तजै कुल कानि अकैठै[1]।
ज्यों ज्यों सुनै मग पायन की धुनि, सेज पैं त्यों त्यों लली उठि बैठै॥
(३६८)

मध्या उत्कण्ठिता।

(यथा)

जौ कहौ काहू के रूप रिझैये, तौ और के रूप रिझावनवारी।
जौ कहौ काहू के प्रेम पगे हैं, तौ और के प्रेम पगावनवारी।
"दास" जू दूसरी बात न और, इती बड़ी बेर बितावनवारी।
जानती हौं, गई भूलि गोपालै गली यहि ओर की आवनवारी॥
(३६९)

प्रौढा उत्कण्ठिता।

(यथा)

कान्ह रूपवती में रमे हैं लोभी लालची ह्वै,ललकतैं[2] डोलैं बोलैं तजत सुभाए ना।
काहू संग सखिन के रंग मढ़ि रहे कैधौं? कैधौं उर उड़ि कै अनङ्ग बान लाए ना।
कौन असमंजस[3] "प्रवीनबेनी" यातैं और,भोर होत,आली! नभलाली तैं बताए ना।
अथवतैं[4] इन्दु,अरविन्द बनैं[5] विकसत,गुञ्जत मलिन्द हैं, गोविन्द गेह आए ना॥
(३७०)

(२)

कौन धौं लियो है हेरि हिय को सोहाग मेरो,कौन के भई है भाग[6] बड़ी बरकति[7] है?
"कालिदास" कौन धौं भई है सौति सहजेहीं, देखी ना सुनी है,यातैं छाती दरकति है?
मोसों बनमाली सों वियोग ह्वै है,आली! अब एकई हिये मैं या खरक[8] खरकति है!
मेरी आँखि दाहिनी लगी है फरकन आजु,कौन बाम की धौं बाम[9] आँखि फरकति है!!
(३७१)

१. एकहा. ४. अस्त होते हैं. ७. बरकत.
२. चाह से भरे. ५. समूह. ८. फैंच, खटका.
३. द्विविधा. ६. भाग्य, अंश. ९. बाँई.

(३)

"देव" पुरैनि के पात निचानं[1] तें है जुग चक्र[2] सचान गहे री !
चीते के चंगुल मै परि कै करसायल[3] घायल ह्वै निबहे री !
मीजि कै मंजु दली[4] कदली, लरि केहरि कुञ्जर लुञ्ज लहे री !
हेरी[5] सिकार रहे री कहूँ बृजराज अहेरी[6] ह्वै आजु अहे री !!

(३७२)

(४)

नभ लाली, चाली निसा, चटकाली[7] धुनि कीन।
रति पाली,[8] आली ! अनत,[9] आवत बनमाली न ॥

(३७३)

परकीया उत्कण्ठिता।

(यथा)

डर भो नगर कैधों, काहू सों झगर कैधौं, बीच ही बगर आन बधू बिरमायो है।
"लीलाधर" गैल मै, कि भूल्यो तम रेल मै, किधौं सु काहू खेल मै सखान अरुझायो है।
दूती ही सों दोष भो, कि मोहीं सों सरोष भो, कि कलह परोस भो, सुघर हरि धायो है।
केलि की न चाह धौं, हिये न कै उछाह धौं, सु कौन हेत नाह धौं सहेट नहिँ आयो है ॥

(३७४)

(२)

यमुना के तीर बहै सीतल समीर, जहाँ मधुकर मधुर करत मन्द सोर हैं।
कवि "मतिराम" तहाँ छबि सों छबीली बैठी, अंगनि तैं फैलत सुगन्ध के झकोर हैं।
प्रीतम बिहारी के निहारिबे को बाट ऐसी चहूँ ओर दीरघ दृगनि करि दौर हैं।
एक ओर मीन मानो, एक ओर कंज पुञ्ज, एक ओर खञ्जन, चकोर एक ओर हैं ॥

(३७५)

१. एकमात्र. ४. नसाया. ७. गौरैया पक्षियों का झुण्ड.
२. चकई चकवा. ५. खोजते हैं. ८. पोषण किया.
३. मृग. ६. शिकारी. ९. अन्यत्र.

६. वासकसज्जा ।

प्रियमिलाप के निश्चय से केलिसामग्री सज्जित करने वाली स्त्री का वासकसज्जा कहते हैं ॥

मुग्धा वासकसज्जा ।

(यथा)

छूट्यो डर भावती को जानि पर्य्यो, एरी भटू! देखु चोराचोरी आजु लागी है टहल मे ।
मायके की सखी सों मगाय फूल मालती के, चादर सों ढाँपे छाये[1] तोसक पहल[2] मे ।
"रघुनाथ" भावते को पानदान[3] भरि बीरी[4] भरी, धरी पोथी कोऊ कथा की रहल[5] मे ।
अतर गुलाब को छिरिकि हेत सौरभ के चहल पहल कीन्हे रति के महल मे ॥
(३७६)

(२)

तन राते अभूपन साजि सबै कचराती[6] कलीन सो बीन रही ।
"द्विजदेव" जू तैसियै केस छटा कछु ओढ़नी ऊपर भीन रही ।
लहिहौ केहिँ भाँति सों लालन! आजु, न जोग तिहारे अधीन रही ।
दुरि दीपसिखानि[7] मे बैठी सु तो, छबि दीपसिखान की छीन रही ॥
(३७७)

मध्या वासकसज्जा ।

(यथा)

सौंधे न्हाय बैठी सीस सोभित सुगन्धी सारी, सोने सो बरन सोहै माला सोनजाय की ।
तरल तर्य्योना कान, गोरे मुख खाए पान, सुन्दर सुबैन मान चाहनि सुभाय की ।
जोबन की जोति जगमगत "प्रसिद्ध" कवि, मैन मन बात लाल मिलन के चाय की ।
केसरि की आड़ भाल, बेसरि को मोती नासा, किंकिनी सुकटि, पाय जेहरि[8] जराय की ॥
(३७८)

१. बिछाकर.　४. लगे हुए पान.　७. दीया की टेम.
२. तह.　५. पुस्तक धरने की चौकी.　८. बेंड़ा तिलक.
३. पनडब्बा.　६. थोड़ी खिलती हुई.　९. पायज़ेब, नूपुर.
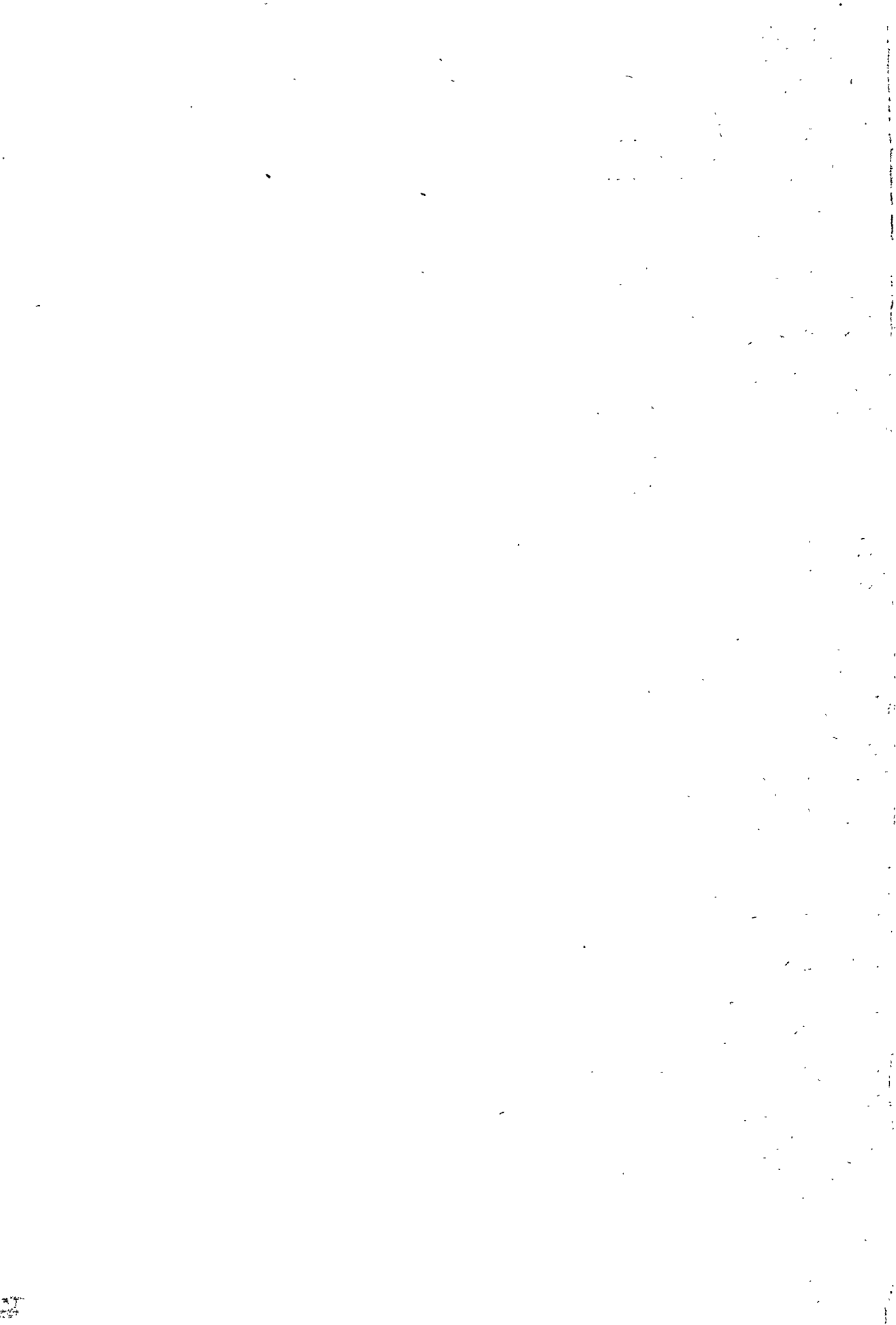
वासकसज्जा.

(२)

फटिक सिलानि सों सुधार्यो सुधामन्दिर,उदधि[1] दधि कैसो अधिकाई उमगै अमन्द ।
बाहर तें भीतर लौं भीँति न दिखैये "देव" दूध कैसो फेनु फैल्यो आँगन फरसबन्द[2] ।
तारा सी तरुनि तामें ठाढ़ी झिलमिल होति मोतिन की जोति मिल्यो मल्लिका को मकरन्द ।
आरसी से अंबर में आभासी उज्यारी लागै,प्यारी राधिका को प्रतिबिंब सो लगत चन्द ।।
(३७९)

प्रौढा वासकसज्जा ।

(यथा)

पवरनि[3] पाँवड़े परे हैं पुर पौरि लगि, धाम धाम धूपन की धूम[4] धुनियत[5] है ।
कस्तूरी, अतर सार, चोवा रस, घनसार[6], दीपक हजारन अँध्यार लुनियत[7] है ।
मधुर मृदंग राग रंग की तरंगनि में अंग अंग गोपिन के गुन गुनियत[8] है ।
"देव" सुखसाज महाराज बृजराज आज राधा जू के सदन सिधारे सुनियत है ।।
(३८०)

(२)

एकै दर परदा, दिवार पोस छतैं एकै, साजती हैं जरफ जवाहिर यों न्यारी को ।
सेज ही सुधारैं एकै, रोसनी उज्यारैं एकै, बाँधती बदनवारैं, झारैं फूल क्यारी को ।
कबि "राम" भूषन सँवारि कै सुगन्ध लावैं, पट पहिरावैं एकै कलित किनारी को ।
आगमन प्यारे को न होहु कोऊ न्यारी,आजू प्यारी को हुकुम भयो महल तयारी को ।।
(३८१)

(३)

बिछवाए पौरि लौं बिछौना जरीबाफन[10] के, खिँचवाए चाँदनी सुगन्ध सब आरी में ।
बरवाए दीपक, कलस धरवाए, रस भरवाए मादक[11] मनिन मई झारी[12] में ।

१. समुद्र.
२. मीर फर्श.
३. बरौठा.
४. धूँआ.
५. फैलता है.
६. कपूर.
७. काटता है.
८. अनुमान होता.
९. बरतन.
१०. ज़रबफ्त.
११. नशीला.
१२. गेडुआ.

रावरे सो मिलिबे को, एहो कवि "रघुनाथ" आवति हैां देखे चोप ऐसी औधवारी मे।
आँगन लैं आय आय फेरि फिरि फिरिजाय, फिरि आय, फिरि जाय बैठे चित्रसारी मे॥

(३८२)

परकीया वासकसज्जा।

(यथा)

खेल मिस मोहिनी सहेलिन सों दुरि चोस आई कुञ्ज बन परिहरि कै नगर को।
"लछिराम" सैारभित सकल सिंगार सेज, सुमन संवार्यो छैल आनद बगर[1] को।
मंजुल मजेजदार[2] बंजुल[3] झरोखनि तैं झरैं झूमि गुञ्जरत भौंर की रगर को।
झेलि बेलि गुञ्जन मे, मालती निकुञ्जन मे, नौल तरुपुञ्जन मे परखै डगर को॥

(३८३)

७. स्वाधीनपतिका।

प्रिय के वशीभूत करनेवाली स्त्री के स्वाधीनपतिका कहते हैं॥

मुग्धा स्वाधीनपतिका।

(यथा)

कंज के संपुट हैं, पै खरे हिय मे गड़िजात ज्यों कुन्त[4] के कोर हैं।
मेरु हैं, पै हरि हाथ मे आवत, चक्रवती,[5] पै बड़ेई कठोर हैं।
भावती! तेरे उरोजनि मे गुन "दास" लखे सब ओर ही और हैं।
संभु हैं, पै उपजावैं मनोज, सुवृत्त[6] हैं, पै परचित्त के चोर हैं॥

(३८४)

१. फैलाना.
२. मज़ेदार.
३. बेंत.
४. बर्छी.
५. चकई और चक्रवर्ती राजा.
६. ख़ूब गोल और उत्तम वृत्त वाले.

स्वाधीनपतिका.

मध्या स्वाधीनपतिका।

(यथा)

सोई तिया अरसाय कै सेज मै, सो छबिजाल बिचारत ही रहे।
पोंछि रुमालन सों स्रमसीकर, भौंर की भीर निवारत ही रहे।
त्यों मुख इन्दु बिलोकिबे को अलकैं "हरिचन्द" जू टारत ही रहे।
द्वैक घरी लौं जके से रहे, बृषभानुकुमारि निहारत ही रहे॥
(३८५)

प्रौढा स्वाधीनपतिका।

(यथा)

प्यारी परभात मन्द मन्द मुसक्यात, आज आरस बलित चली उतरि अटारी तैं।
कबि "लछिराम" कल कञ्चुकी मै बङ्क लट, बँधि गई रैनि ऐन सम गुन टारी तैं।
करन दुहूँ सों हँसि बाहिरै करन लागी, छैल छरकीलो छक्यो छलकि छटारी तैं।
जादूगरी खेल के जलूस हित मानो कढ़ैं कुण्डलित[1] नाग नटै मदन पिटारी तैं॥
(३८६)

(२)

फूलन सों बाल की बनाय गुही "बेनीलाल" भाल दई बेंदी मृगमद[3] की असित है।
भाँति भाँति भूषन बनाय बृजभूषन, सु बीरी निज कर सों खवाई करि हित है।
ह्वैकै रस बस लाल लई है महावरि को, दीबे को निहारि रहे चरन[4] ललित है।
चूमि हाथ नाहके लगाइ रही आँखिन सों, 'एहो प्राननाथ! यह अति अनुचित है॥
(३८७)

परकीया स्वाधीनपतिका।

(यथा)

उझकि झरोखा ह्वै झमकि झुकि झाँकी बाम, स्याम को बिसरि गई खबरि तमासा की।
कहै "पदमाकर" चहूँघा चैत चाँदनी सी फैलि रही तैसियै सुगन्ध सुभ स्वासा की।

१. गेंडुरिआया हुआ.
२. मवारी.
३. कस्तूरी.
४. पैर के तलवे.

जैसी छवि तकत तमोर की, तर्‌यौनन की, वैसी छवि वसन की, वारन की, वासा की।
मोतिनकी, माँगकीमुखौकी, मुसक्यानहूँकी, नथकी, निहारिबेकी, नैननकी, नासा[1] की॥
(३८८)

(२)

भादौं की भारी अँध्यारी निसा झुँकि बादर मन्द फुही बरसावै।
राधिका आपनी ऊँची अटा पैं चढ़ी रस मत्त मलार हिँ गावै।
ता समै मोहन के दृग दूरि तैं आतुर रूप की भीख यों पावै।
पौन मयौ[2] करि घूँघट टारै, दया करि दामिनी दीप दिखावै॥
(३८९)

(३)

चौचँदहाँई[3] लगीं चहुँ ओर, लख्यो करैं नैननि ओर तुम्हारे।
ऐसे सुभायन सों निरखो, कि उन्हैं लगो रूखे, हमें रसवारे।
कीजिये कैसी दई! निदई, न दई है दई कर मौत हमारे।
देखे बिना हू रह्यो नहीं जात, कह्यो नहीं जात 'न आइये प्यारे'॥
(३९०)

(४)

चढ़ि ऊँची अटा पर बाँसुरी लै, अब नाम हमारो बजाइये ना।
सुनि चौचँदहाँईं चवाव करैं, यह बात कबौं बिसराइये ना।
"कमलापति" साँची कहौं, इतनी सुनि कोह[4] कछू मन लाइये ना।
बिनती परि पाँय तिहारी करौं, कुल कानि हमारी गँवाइये ना॥
(३९१)

८. अभिसारिका।

प्रियसंगमार्थ सङ्केतस्थल में जानेवाली वा उसको बुलानेवाली स्त्री को अभिसारिका कहते हैं॥

१. नासिका. ३. मुफ़सिदा.
२. स्नेह. ४. क्रोध.

अभिसारिका.

मुग्धा अभिसारिका ।

(यथा)

दाबि दाबि दन्तन अधर छतवन्तै[1] करै, आपने ही पायन की आहट सुनत सौन ।
"द्विजदेव" लेति भरि गातन प्रसेद, अलि पातहू की खरक जु होती कहूँ काहू भौन ।
कंटकितै[2] होति अति उससि उसासनि तैं, सहज सुबासन सरीर मंजु लागे पौन ।
पंथही मैं कन्तके जौ होत यह हाल, तौ पैं लालकी मिलनि ह्वै हैं बालकी दसा धौं कौन ॥
(३१२)

मध्या अभिसारिका ।

(यथा)

घेर घाँघरे की झुकि झमकि उठाय घूमै, ढूमै[3] कटि किंकिनी कलित कृत घनकार ।
हुमसि हुमसि रहि रहि जात कुम्भ[4] कुच, झनन झनन होत नूपुरन झनकार ।
उमगि उमंग "भुवनेस" भ्रुव भंग राजै, झमझकत अंग अंग भूषननि खनकार ।
बासित सुबास इमि जाति बृजचन्द पास, छाए आस पास दीसै भौंर भृतै[5] भनकार ॥
(३१३)

(२)

ऐंड़ति, अड़ति पैंड़ि मध्य मत्त मैगलै[6] सी, खाय करि द्वै बल सी लचति लचाक लङ्क ।
उमड़्यो सुरति नाह, फर्कित फबित बाँह, उरज उमाह मढ़ि नेकु न अमात अङ्क ।
सुनि सुनि आहट प्रगट पग पातन की, झटपट कंटकित होति उर धारि सङ्क ।
ब्रजति[7] ब्रजेस के निबेसै[8] "भुवनेस" बेस, चच्छुकृत चकृत बिब्रकृत[9] भृकुटि बङ्क ॥
(३१४)

(३)

पायलनि डारै, कटि किंकिनी उतारै, कहूँ हाथन तैं झारि भीर टारति मलिन्द की ।
भूषन चमक तैं चमकि लगै पायन मैं "द्विजदेव" आँखिन बचाय अलि बृन्द की ।

१. काटती है.
२. रोमांचित.
३. हिलती है.
४. कलश.
५. कृत.
६. मस्त हाथी.
७. जाती है.
८. घर.
९. टेढ़ा किया हुआ.

भौन तें दमकि दामिनी लौं दुरै दूजे भौन, त्यागि गरबीली गति गौरव[1] गयन्द की।
या विधि तैं जाति चली साँवरी उमाहैं[2], सखी! आजु भई चाहैं भाग उदित गोबिन्द की॥
(३१५)

प्रौढा अभिसारिका।

(यथा)

सौंधे करि मंजन सुधारि केसपास, धूप अगर धुपाय गोरो अंग छबि छ्वै रह्यो।
चन्द्रमुखहाँसी चन्द्रिकासी चाँदनीसी चारु, चारो ओर चाहिकै चकोर चित च्वै रह्यो।
तेरे बाल! पेखि अभिसार के समाज पर आजु उपमान की डगनि[3] डग द्वै रह्यो।
छत्रपति[4] छत्र[5] लै चढ्यो है मनमथ संग, निरखि नछत्रपति[6] छत्र[7] छबि ह्वै रह्यो॥
(३१६)

(२)

गहब गुलाब गुल मिलित मरन्द, मन्द, सीतल, सुगन्ध, बह्यो मारुत मलय[8] को।
फैली चैत चाँदनी पिहूकत पपीहा, लता डोलत लवंग को कलोल किसलय[9] को।
'पण्डित प्रवीन' खोज मान को मनोज कियो आगम बसन्त कन्त कामिनि मिलय को।
चौंकि उठी प्यारी परजङ्क तैं लचकि लङ्क, उन्नत उरोज चली प्रीतम निलय[10] को॥
(३१७)

(३)

अधखुले नैन कंज खंजन अचैन करैं, सैन करैं छन्दन छरा को छोर छरकत।
कवि "भुवनेस" छबि केस की कहाँ लौ कहै, माखि माखि मोरि मन मारैं मनि मरकत।
ओजित[11] मनोज ओज उरज सरोज सोहैं, पग मग परत मजीठ माठ ढरकत।
मुख मंजु चन्द भास[12], उदित अमन्द हास, जाति नदनन्द पास बन्द बन्द फरकत॥
(३१८)

१. गाम्भीर्य्य.
२. उमंग.
३. कसी.
४. राजा.
५. अनुयायिवर्ग.
६. चन्द्रमा.
७. छाता.
८. पर्व्वत विशेष.
९. पल्लव.
१०. घर.
११. बलवान.
१२. प्रकाश.

परकीया अभिसारिका।

इन्के तीन भेद हैं, अर्थात् कृष्णाभिसारिका, शुक्लाभिसारिका और दिवाभिसारिका ॥

(यथा)

सोर सुनि सावन, झकोर सुनि बूँदन की, मोर कुहुकत, दमकत दुरी दामिनी।
तामै घटा घहरात, झंझापौन[1] झहरात, हहरात बिटप, अँधेरी अति जामिनी।
भारी भेक[2] भरकत, परे साँप सरकत, खर खरकत, कमनीय गज गामिनी।
छाती मै न छनक तनक, भनै "नीलकंठ" आतुर अनंग तैं अकेली जाति कामिनी ॥
(३९९)

(२)

पावसकी अधिक अँधेरी अधराति समै कान्ह हेतु कामिनी यों कीन्हो अभिसार को।
"राम" कहै, चकित चुरैलैं चहु[3] अलैं, त्यों खबीस करिभलैं, चौहैं[4] चकित मसान[5] को।
बीछू, बिसखापरहिँ चाँपत[6] चरन बीच, लपटैं फनीजैं[7] गहि पटकै पछार को।
मृतक मसान जेते मुराडन सकेलि करि तुम्बन[8] की तरनि[9] गई त्यों नद पार को ॥
(४००)

(३)

सोए लोग घर के, बगर के केवार खोलि, जानि मन माह निज गई जुग जामिनी।
चुपचाप, चोराचोरी, चौंकत, चकित चली पीतम के पास चित चाह भरी भामिनी।
पहुँची सँकेत के निकेत "संभु" सोभा देत, ऐसी बनबीथिन बिराजि रही कामिनी।
चामीकर[10] चोरजान्यो, चंपलताभौंरजान्यो, चन्द्रमाचकोरजान्यो, मोरजान्योदामिनी ॥
(४०१)

१. प्रचंड पवन.
२. मेढ़क.
३. चिल्लाती.
४. चारो तरफ.
५. स्मशान, मरघट.
६. दबाती है.
७. साँप के बच्चे.
८. तैरने की तुम्बी.
९. नौका.
१०. सुवर्ण.

१. कृष्णाभिसारिका।

तमिस्रा[1]नुकूल वेष धारण कर प्रियसंगमार्थ संकेतस्थल को जानेवाली वा उसे बुलानेवाली परकीया स्त्री को कृष्णाभिसारिका कहते हैं॥

(यथा)

घूमि घूमि वनघटा लेती भूमि चूमि चूमि, झूमि झूमि लता उठैं झंझापौन झारी मे।
मोरन को सोर, झींगुरन की झनक जोर, ठौर ठौर दादुर रटत निसि कारी मे।
"सिव" कवि, ऐसे समै असित सिंगार साजि, चली प्रानप्यारी प्रान दीन्हे बनवारी मे।
चीरत चुरैल की अनीन[2] को वनीन[3] बीच, जाति है फनीन[4] की मनीन की उँज्यारी मे॥
(४०२)

(२)

कारो नभ, कारी निसि, कारियै डरारी घटा, झूकन बहत पौन आनद को कन्द[5] री!
"द्विजदेव" साँवरी सलोनी सजी स्याम जू पै कीन्हो अभिसार लखि पावस अनन्द री!
नागरी गुनागरी[6] सु कैसे डरै रैनि डर? जाके संग सोहैं ये सहायक अमन्द री!
वाहन[7] मनोरथ, उमाहैं संगवारी सखी, मैन मद सुभट, मसाल मुख चन्द री!!
(४०३)

२. शुक्लाभिसारिका।

ज्योत्स्न्यनुकूल[8] वेष धारण कर प्रियसंगमार्थ संकेतस्थल को जानेवाली वा उसे बुलानेवाली परकीया स्त्री को शुक्लाभिसारिका कहते हैं॥

१. अँधेरी रात.
२. समूह.
३. वन.
४. सर्प.
५. मूल.
६. गुणों मे श्रेष्ठ.
७. सवारी.
८. चाँदनी रात.

(यथा)

चली सेत अंबर अभूषन कै प्यारे पास, तटनी[1] के तीर तट नीकी केलिसाला है।
चाँदनी के बीच सिकता[2] सी झलकति सिकता[3] मै छलकति छबि पुलिन[4] बिसाला है।
पुलिन के बीच बीच "बेनी जू प्रवीन" कहै, जल सी बिमल बिलसति बर बाला है।
जल के सुबीच बीच बीची[5] सो बिलोकियत, बीचिन के बीच बीच मालती की माला है॥
(४०४)

(२)

जोहै जहाँ मग नन्दकुमार, तहाँ चली चन्दमुखी सुकुमार है।
मोतिन हीं को कियो गहनो सब, फूलि रही मनो कुन्द की डार है।
भीतर ही जो लखी सो लखी, अब बाहिरै जाहिरै होति न दार[6] है।
जोन्ह सी जोन्है गई मिलि यों, मिलि जात ज्यों दूध मै दूध की धार है॥
(४०५)

(३)

जुबति जोन्ह मै मिलि गई, नेक न ठिक[7] ठहराय।
सोंधे की डोरी लगी चली अली सँग जाय॥
(४०६)

३. दिवाभिसारिका।

प्रियसंगमार्थ दिन मे संकेतस्थल को जानेवाली वा उसे बुलानेवाली परकीया स्त्री को दिवाभिसारिका कहते हैं॥

(यथा)

चण्डकर[8] मण्डल प्रचण्ड नभ मण्डल तैं घुमड़ी परत अली अलिगन लहरी।
केहरि कुरंग इकसंग बर बैर[9] तजि काहिल[10] कलित परे सोहैं तरु छहरी।

१. नदी.
२. चीनी.
३. बलुही ज़मीन.
४. बलुहा नदीतट.
५. लहरी.
६. स्त्री.
७. ठीक.
८. सूर्य्य.
९. दुश्मनी.
१०. सुस्त.

ऊरध उसासन तैं सूखत अधर, एरी ! हेरि हेरि छतियाँ हमारी जाति हहरी ।
गाढ़ी प्रीति कौन की हिये मे आइ बाढ़ी जाइ ठाढ़ी सिर लेति ऐसी जेठ की दुपहरी ।।
(४०७)

९. प्रवत्स्यत्पतिका ।

प्रिय के विदेशगमननिश्चय से व्याकुल स्त्री को प्रवत्स्यत्पतिका कहते हैं ॥

मुग्धा प्रवत्स्यत्पतिका ।

(यथा)

"देव" जौ बाहर हीं बिहरै, तौ समीर अमी[1] रसबिन्दु लै जैहै ।
भीतर भौन बसे बसुधा ह्वै, सुधा मुख सूँघि फनिन्द लै जैहै ।
जैये कहूँ इहिँ राखि, गोबिन्द ! कै इन्दु मुखी लखि इन्दु लै जैहै ।
राखिहौ जौ अरबिन्द हूँ मे, मकरन्द मिलै, तौ मलिन्द लै जैहै ।।
(४०८)

(२)

'वे अधराति पधारि[2] हैं,' बात कही यह काहू गोपाल ह्याँ वा तैं ।
ता छन तैं तन बाल रसाल दह्योई चहै बिरहागि दवा तैं ।
जौ बिन सींचे अमीरस आपने, छेम[3] गन्यो कहूँ तौ तरवा तैं ।
बीस बिसे बरि[4] है, बृजचन्द ! बसन्त निसा मई मन्द हवा तैं ।।
(४०९)

मध्या प्रवत्स्यत्पतिका ।

(यथा)

बात चली यह है जब तैं तब तैं चले काम के तीर हजारन ।
नीद औ भूँख चली तन तैं, अँसुवा चले नैननि तैं सजि धारन ।

१. अमृत.
२. जाँयगे.
३. कुशल.
४. जलैगी.

"दास" चली कर तैं बलयाै[1], रसना चली लंक तैं लागी अबारन[2]।
प्रान के नाथ चले अनतैं[3], तन तैं नहिँ प्रान चलैं केहि कारन ॥
(४१०)

प्रौढा प्रवत्स्यत्पतिका।

(यथा)

सनि कै परागन सों रागन रचत भौंर, ह्वै गए हैं बौरे आम बागन झुके परैं।
प्रगट पलासन हुतासन सो सुलगत[4] बन ओर मन देत अंग अंग पै जरैं।
कहै "सिव" कबि, अब आयो ऋतुराज बृज, ऐसे मे बियोग बातैं कोऊ हियरे धरैं।
देखो नए पल्लव पवन लागे डोलैं, मानो चलत बिदेसन बिदेसिन मना करैं ॥
(४११)

परकीया प्रवत्स्यत्पतिका।

(यथा)

चलत सुन्यो परदेस को हियरे रह्यो न ठौर।
लै मालिनी मीतहिँ दियो नव रसाल को बौर ॥
(४१२)

(२)

करी देह जो चीकनी[5], हरि ! नित लाइ सनेह[6]।
बिरह अगिनि जरि छिनक मे होन चहत अब खेह[7] ॥
(४१३)

१०. आगतपतिका।

प्रिय के विदेशागमन[8] से प्रसन्न होनेवाली स्त्री को आगतपतिका कहते हैं॥

१. कंकण.
२. तुरत.
३. विदेश.
४. भड़कती.
५. स्वच्छ, तैलयुक्त.
६. प्रीति, तैल.
७. धूर.
८. परदेश से आना.

मुग्धा आगतपतिका।

(यथा)

आदि[1] हीं चन्दन चारु घिसै, घनसार घनो घँसि पङ्क[2] बनावत।
आदि उसीर समीर चहै, दिन रैनि पुरैनि[3] के पात बिछावत।
आपु ही ताप मिटी "द्विजदेव" सु दाघ[4] निदाघ[5] की कौन कहावत।
बावरी! तू नहिँ जानति, आज मयङ्क लजावत मोहन आवत॥

(४१४)

मध्या आगतपतिका।

(यथा)

सीतल समीर ढार, मंजन[6] कै घनसार, अमल अँगौछे आछे मन से सुधारि हौं।
देहौं ना पलक एक लागन पलक पर, मिलि अभिराम[7] आछी तपनि उतारि हौं।
कहत "प्रवीनराय" आपनी न ठौर पाय, सुन बाम नैन! या बचन प्रतिपारि[8] हौं।
जब ही मिलैंगे मोहिँ इन्द्रजीत प्रान प्यारे, दाहिनो नयन मूदि तोही सों निहारि हौं॥

(४१५)

प्रौढा आगतपतिका।

(यथा)

आजु दिन कान्ह आगमन के बधाए सुनि छाए मग फूलनि सोहाए थल थल के।
कहै "पदमाकर" त्यों आरती उतारिबे को थारन मे दीप हीर हारन के छलके।
कंचन के कलस भराए भूरि पन्नन के, ताने तुंग तोरन[9] तहाँई झला झल के।
पौरि के दुवारे तें लगाय केलि मन्दिर लौं, पदुमिनि[10] पाँवड़े पसारे मखमल के॥

(४१६)

१. नाहक.
२. कीचड़.
३. कमल पत्र.
४. गरमी.
५. ग्रीष्म ऋतु.
६. स्नान.
७. हर्ष से.
८. प्रतिपालन, रक्षा.
९. बन्दनवार.
१०. पद्मिनी, उत्तम स्त्री.

(२)

छरकै सुख आवत कन्त ही के, सुनि आयस बायस[1] ऊ भरकैं।
सरकैं अलकैं, कहि "तोष" सबै सिर तैं मुकतावलियाँ लरकैं।
करकै कटि, वो रसना खरकै, तरकाति[2] तनी[3] अँगिया दरकैं।
धरकाति हियें रति की उर तैं, उरजात, भुजा, अँखियाँ फरकैं॥

(४१७)

परकीया आगतपतिका।

(यथा)

बीते बहु बासर, अचीते[4] मिले मोहन, बियोगी अंग बिरह कसौटी लगे तप तप।
भनत "धनेस" उठे लोयन ललकि गड़े अधिक सनेह रहे भूमि भय जप जप।
सूनी खोरि सहज सकाने दुवो दुवो देखि, जात न बखाने मुख आखर उथप थप।
नीचो मुख, नीची नारि,[5] नीचे नैन, नीचे चितै, गरे गहबरे,[6] परे आँसू भूमि टप टप॥

(४१८)

(२)

एक आली गई कहि कान मे आय, परी जहाँ मैन मरोरि गई।
हरि आए विदेश तैं "बेनी प्रबीन" सुने सुख सिंधु हिलोरि गई।
उठि बैठी उतायल[7] चाय भरी, तन मै छन मै छबि दौरि गई।
जेहिँ जीवन की न रही हुती आस, सजीवन[8] सी सो निचोरि गई॥

(४१९)

१. काक, कौआ.
२. टूटती है.
३. बन्द.
४. अचांचक.
५. गर्दन.
६. गद्गद.
७. जल्दी.
८. संजीवनी बिरई.

द्वादश कुसुम।

नायक।

रूपयौवनसम्पन्न पुरुष को नायक कहते हैं. धर्म्मानुसार इन्के तीन भेद हैं, अर्थात् पति, उपपति और वैसिक; और अवस्थानुसार दो भेद रक्खे गये हैं, अर्थात् मानी और प्रोषित पति ॥

☞ यद्यपि विस्तार करने से नायकभेदकी संख्या नायिकाभेदकी संख्याके तुल्य हो सकती है, यथा धीर, अधीर, खण्डित, उत्कण्ठित, कलहान्तरितादि; तथापि साहित्यकारों ने ऐसे भेदविस्तार को अश्लील[1] और पुरुषमर्य्यादा के प्रतिकूल जानकर संक्षेपतः दो भेद गिना दिये हैं ॥

(यथा)

वारौं कंबु कंठ पैं, कपोलनि कमल दल, बिम्बा फल, बिद्रुम अधर अरुनाई मे।
भौंहनि कमान, बान तिरछी निरीछनि[3] पैं, वारौं पंचबान मान तन तरुनाई मे।
वारिहौं त्रिबेनी चिन्ह चरन मयूष[4] लखि, चिन्तामनि लोनी नख नूतन लुनाई मे।
"ठाकुर" के ईस! तेरे सीस बकसीस[5] करि, वारौं मेरु मन्दर[6] अमन्द गरुवाई मे॥

(४२०)

१. असभ्य.
२. मुख़्तसर.
३. चितवनि.
४. किरण.
५. निछावर.
६. पर्वतविशेष.
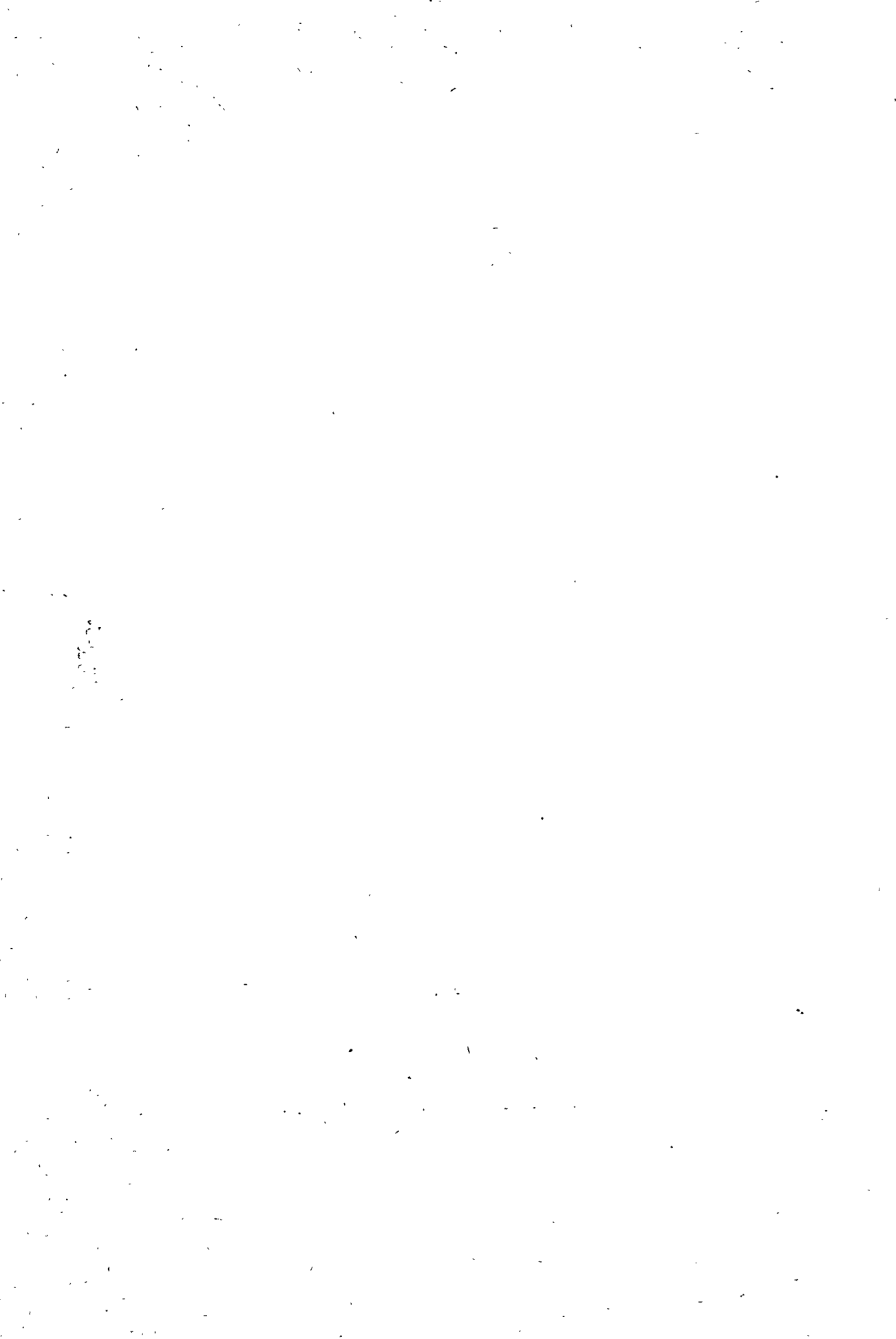
अनुकूल.

१. पति ।

शास्त्रविधि से विवाहित पुरुष को पति कहते हैं. इनके पाँच भेद हैं, अर्थात् अनुकूल, दक्षिण, धृष्ट, शठ और अनभिज्ञ ॥

(यथा)

और को केतऊ झौंरि[1] सहै पै न, बावरी ! रावरी आस भुलै है ।
जै है जहाँई जहाँ, "द्विज देव" तिहारेई नाम सों जाय बिकै है ।
त्यागिबो ताहि न जोग तुम्हैं, हम सों नहिँ काँची[2] कछू कहि जै है ।
बौरो, अबौरो, रुखानो, पत्यानो, तऊ वह तेरो रसाल कहै है* ॥
(४२१)

१. अनुकूल ।

जो पुरुष एकही विवाहिता स्त्री पर अनुरक्त हो कर दूसरी को आकांक्षा नहीं करता, उसको अनुकूल कहते हैं ॥

(यथा)

ग्रीषम निदाघ समै बैठे अनुराग भरे, बाग मै बहति बहतोल[3] है रहट की ।
लहलही माधुरी लतानि सों लपटि रही, हीतल[4] को सीतल सोहाई छाँह बट की ।
प्यारी के बदन स्वेद सीकर निहारि लाल प्यारो प्यार करत बयार पीतपट की ।
पत्र बीच कढ़ै कहूँ रबि की मरीची,[5] तहाँ लटकि छबीलो छाँह छावत[6] मुकुट की ॥
(४२२)

१. झंझट.
२. अनुचित.
३. जल बहनेवाली नाली.

४. हृदयस्थल.

५. किरण.
६. ढाँकता है.

* अभिधामूलक व्यंग्य द्वारा आम्र और नायक की समदशा दरसाई है ॥

२. दक्षिण।

अनेक स्त्रियों पर समानप्रीति रखनेवाले पति को दक्षिण कहते हैं॥

(यथा)

वादि छवो रस व्यञ्जन खाइबो, वादि नवो रस मिलित गाइबो।
वादि जराय, प्रजंक बिछाय, प्रसून घने परि पाइ लुटाइबो।
"दास" जू बादि जनेस[1], मनेस[2], धनेस[3], फनेस, रमेस[4], कहाइबो।
या जग मै सुखदायक एक, मयङ्कमुखीन को अङ्क लगाइबो॥
(४२३)

(२)

भूषन के भार तैं सँभारत बनै न अंग, मन्द मन्द चाल तैं गयन्द को लजाती हैं।
जोरि जोरि जोरी हिलि मिलि कै निकुञ्ज माहिँ आवति चली यें सबै आपुस मैं भाती हैं।
ठाढ़ो "कमलापति" छबीलो छैल देखै, तिन्है तिरछी चितौनिहीं तैं लखि मुसुकाती हैं।
मैन मदमाती इतै बार बार आय लखौ, नैन तरवार वार[5] करि करि जाती हैं॥
(४२४)

३. धृष्ट।

अत्यन्त अपमानित होने पर भी नम्र लज्जाहीन अधम पति को धृष्ट कहते हैं॥

(यथा)

द्वार तैं दूरि करो बहु वारनि, हारनि[6] बाँधि मृनालनि मारो।
छाड़त ना अपनो अपराध, असाध सुभाइ अगाध निहारो।

१. राजा.
२. स्वेच्छाचारी.
३. कुबेर.
४. विष्णु.
५. चोट.
६. माला.

दक्षिण.

बैरनि मेरी हँसैं सिगरी, जब पाँय परै, सु टरै नहिँ टारो।
ऐसे अनीठि सों ईठि कहै, यह ढीठ बसीठन हीं को बिगारो॥
(४२५)

(२)

दुरै न निघरघट्यों[1] दियें, ये रावरी कुचाल!
बिष सी लागति है हिये हँसी खिसी की, लाल!!
(४२६)

४. शठ।

छलपूर्वक अपराधगोपन करने मे चतुर पति के शठ कहते हैं॥

(यथा)

गहरी गोराई सों प्रथम चूर चामीकर, चंपक के ऊपर बहुरि[2] पाँव रोप्यो[3] है।
तीसरे अखिल[4] अरबिन्द आभा बस करि, हँसि तड़िता को हाय तोयँद[5] मे तोप्यो[6] है।
भनत "कबिन्द" तेरे मान समै सौतैं कहा, सुरबनितान को गुमान जात लोप्यो है।
आली! आजु मेरे जान, ऐंड़ भरो तेरो मुख भौहैं तानि सौहैंरी कलानिधि पैं कोप्यो है॥
(४२७)

(२)

हौं तौ निरदोषी, दोष काहे को लगावै मोहिँ, जैसी तोहिँ भावै, मोपैं सपथ कराय लै।
त्रिवली त्रिबेनी नाभिसर मे सँचाय देखु, सीझौं तौ निहाल मान कीन्हो ई घटाय लै।
कंचुकी कुटी मे दोय[7] तपसी[8] बिराजमान, ताको सीस छ्वाय चोर, साह[9] निपटाय लै।
कोप करि पावक कपोल गोला लाल लाल, लाख लाख बार मोपै जीभन चटाय लै॥
(४२८)

१. बेहयापन. ४. सम्पूर्ण. ७. दो.
२. फिर भी. ५. मेघ. ८. तपस्वी.
३. धरा है. ६. ढाँका है. ९. ईमानदार.

(३)

पाप पुराकृत[1] को प्रगट्यो, बिसरो तिहिँ राति भयो सुख घात[2] है।
जीवन मेरे अधीन हैं तेरे ही, जीवन[3] मीन की कौन सी बात है।
"तोष" हिये भरु मैन व्यथा, अरु ना तो प्रिया पल मे पछितात है।
जौ तुम ठानती मान, अयान! तौ प्रान पयान किये अब जात है॥

(४२९)

५. अनभिज्ञ।

शृंगारादि रसानुकूलक्रिया के यथार्थबोध मे असमर्थ पुरुष को अनभिज्ञ कहते हैं॥

(यथा)

केसरि सों उबटे सब अंग, बड़े मुकतानि सों माँग सँवारी।
चारु सो चंपक हारु हिये, अरु ओछे उरोजन की छबि न्यारी।
हाथ मे हाथ गहे, कवि "देव" जू, नाथ! तिहारियै साथ निहारी।
हाहा हमारी सौं, साँची कहौ, वह को हुती छोहरी छीबर वारी॥

(४३०)

२. उपपति।

परदारानुरक्त पुरुष को उपपति कहते हैं. इन्के दो भेद हैं, अर्थात् वचनचतुर और क्रियाचतुर॥

(यथा)

ज्यों ज्यों जात बाढ़त बिभावरी[4] बिलासत्यों त्यों चन्द्रिका प्रकास जग जाहिर करतु हौ।
"द्विजदेव" की सौं, कछु आनन अनूप ओप आछे अरविन्दन की आभा[5] निदरतु[6] हौ।

१. पुराने किये हुए.
२. नाशक.
३. जिन्दगी, जल.
४. रात.
५. शोभा
६. तिरस्कार करते.

कीबे हैं सरस तुम्है कौन बरही[1] को हियो? साँची बूझिबे मै, कहा मौनता धरतु हौ?
आजु कौन नारी सों मिलाप करिबे के काज चन्द सों,गोपाल! इतै भावरैं[2] भरतु हौ??

(४३१)

(२)

न्हाय कालिँदी सों भूरि[3] भूषन बसन साजे, आवति रही सो भरी सैारभ अतर के।
जगर मगर जोति जाल सो बिसाल फैली, बिमल बिलोकी बाल बीच ही डगर के।
कौन धौं कसूर मानि मेरो भर पूर, दूर ही तैं "हनुमान"सखियान तैं पछर के।
पहिले निहारि नैन चोटन चोटारि,[4] फेरि हाय मोहिँ सोंप्यो पास प्यारी पंचसर के॥

(४३२)

(३)

वा निरमोहनी रूप की रासि जो ऊपर के उर आनति ह्वै है।
बार हू बार बिलोकि घरी घरी, सूरति तौ पहिचानति ह्वै है।
"ठाकुर" या मन की परतीति है, जौ पैं सनेह न मानति ह्वै है।
आवत हैं नित मेरे लिए, इतनो तौ बिसेष हू जानति ह्वै है॥

(४३३)

(४)

दृगनि लगत, बेधत हियो, बिकल करत अँग आन।
ये तेरे सब तैं बिषम ईछन[5] तीछन[6] बान॥

(४३४)

१. वचनचतुर।

वचनचातुरी से परस्त्रीसंबन्धी प्रीतिकार्यसाधन करनेवाले पुरुष को वचनचतुर कहते हैं॥

१. मयूर, उत्तमहृदयवाली.
२. चक्कर.
३. बहुत.
४. घायल.
५. नेत्र.
६. तेज.

(यथा)

सुनिये, विटप ! प्रभु पुहुप तिहारे हम, राखिहौ हमै तौ सोभा रावरी बढ़ाय हैं।
तजिहौ हरप कै, तौ विलग[1] न सोचैं कछू, जहाँ जहाँ जैहैं, तहाँ दूनो जस गाय हैं।
सुरन चढ़ैंगे, नर सिरन चढ़ैंगे, पर सुकवि, "अनीस" हाथ हाथ मै विकाय हैं।
देस मै रहैंगे, परदेस मै रहैंगे, काहू भेष[2] मै रहैंगे, तऊ रावरे कहाय हैं* ॥
(४३५)

(२)

खाय, चराय दियो इन गाय, कहा घर मै हम जाय कहैंगे ?
नेक ही सो गिरि दूध गयो, हम काहू के कैसे कुबोल सहैंगे ?
श्री वृषभानुसुताहिँ सुनाय, सखा सों कहैं, वे हमै जौ चहैंगे ?
आज मनाय लै जाय हैं "तोष" तमाल के कुञ्जनि बैठि रहैंगे !!
(४३६)

२. क्रियाचतुर।

क्रियाचातुरी से परस्त्रीसंबन्धी प्रीतिकार्यसाधन करनेवाले पुरुष को क्रियाचतुर कहते हैं॥

(यथा)

उतसों सखान सजि आए नदलाल, इतै राधिका रसाल आई वृन्द मै सहेली के।
खेलैं फागु, अति अनुराग सों उमंग तैं, वै गावैं, मन भावैं, तहाँ वचन अमेली[3] के।
मारी पिचकारी मंजु मुख पैठि हारी, ताके दाँवन बँचाय कै अबीर झेला झेली के।
जौलौं निज नैननि सों रंग को निवारै प्यारी, तौलौं छैल छू भजै[4] कपोल अलबेली के॥
(४३७)

१. दूसरा कुछ.
२. रूप, आश्रम.
३. अनभिज्ञ, अयुक्त.
४. भागता.

* इसमें वृक्ष से अन्योक्ति की गई.

३. वैसिक।

वेश्यानुरक्त पुरुष को वैसिक कहते हैं॥

(यथा)

छैल की छाति मे छाप छबीली कि छोभमई छतिया छबि छाकी।
झीने झगा मे झपी झुमका दुति, झूमै, झुकै, झपकै, दृग ताकी।
ऐंड़ भरे मग पैंड़ धरै, उघरै न कछू, मति की गति थाकी।
बाँकी सि दीठि फिराय कह्यो, 'अहो! जाउ जू दै करि काल्हि की बाकी'॥
(४३८)

१. मानी।

प्रियाकृतापमानसूचकचेष्टाधारी पुरुष को मानी कहते हैं॥

(यथा)

जोहे[1]* जाहि* चाँदनी* के लागति मलिनदुति, चम्पक, चमेली, सोनजुही जोतिहारी है।
जामें[2] तै रसाल,† लाल करुना† कदम्ब[3]† बीते, बाढ़ि है नवेली[4] सुनि केतकी[5]* सिधारी है।
"दास" कहै, देखो यह तपनि वृषादित[6] की, कौने बिधि जाति* दुपहरिया* नेवारी[7]* है।
प्रफुलित कीजियै बरसि रस[8], बनमाली[9]! जाति कुँभिलाति वृषभानु जू की बारी[10] है‡॥
(४३९)

(२)

बातहिँ बात दै पीठि पिया, पटिया लगि मान जनावन लाग्यो।
ज्यों ज्यों करै मनुहारि तिया रुख, "तोष" सु त्यों त्यों रुखावन लाग्यो।

१. देखने. ५. कितनी. ९. कृष्ण, माली.
२. प्रहरसे, अंकुरित. ६. मदन ताप, ज्येष्ठकेसूर्य्य. १०. पुत्री, बाग.
३. समूह. ७. व्यतीत. * पुष्प विशेष.
४. स्त्री, लता नहीं. ८. प्रीति, जल. † वृक्ष विशेष.

‡ एक पक्ष में कृष्ण से राधाविरह, दूसरे में माली से मुरझाती वाटिका की दशा वर्णित है. (अभिधामूलक व्यंग्य.)

चूक परी सो परी, बकसो[1], यह प्राण है रावरे पाँवन लाग्यो।
लीजिये मोहिँ उठाय हिये बिच, भावन! जोर जड़ावन[2] लाग्यो॥
(४४०)

२. प्रोषितपति।

प्रियावियोग से सन्तापित पुरुष को प्रोषितपति कहते हैं॥

(यथा)

परी तेरे सुमुख सुधाधर की दुति, जापै लालित कियो री बचनामृत अगाधा सों।
"सेवक" त्यों तेरेई उरोज सुधा कुम्भनि को परसि प्रसेद पूरि पूरि मन साधा[3] सों।
एरे मन्द पौन! गौन करि जैये बेगि उतै, ऐसे ही सुनैयेगो सँदेस मेरो राधा सों।
तेरी गुही गर जो न होती बनमाल, तौ बँचावतो को मोहिँ बिरहानल की बाधा[4] सों॥
(४४१)

(२)

प्रान जो तजैगी बिरहानल मे चन्दमुखी, प्रानघात पापी बन फूली है जुही जुही।
भृङ्गी[5] कलगान कैधौं, मदन के पांचो बान, दच्छिन पवन कैधौं, कोकिल कुही कुही।
मधु को मयङ्क, कै "मुकुन्द लाल" तरुनाई, रजनी निगोड़ी रंग रंगन छुही छुही।
जो लौं परदेसी प्यारो मन मे बिचार करै, तौ लौं तूती[6] प्रगट पुकारी रे तुही तुही॥
(४४२)

(३)

चन्द चढ़ि देखैं चारु आनन प्रवीन गति, लीन होत माते गजराजन को ठिलि ठिलि[7]।
बारिधर[8] धारन तैं बारन पै ह्वै रहे, पयोधरन छ्वै रहे पहारन को पिलि पिलि।
दई निरदई "दास" दीन ह्वै बिदेसतऊ, करो ना अनेसे[9] तुव ध्यानहीं सों हिलि हिलि।
एक दुख तेरे हौं दुखारी अति, प्रानप्यारी! मेरो मन तो सों नित आवत है मिलि मिलि॥
(४४३)

१. मुआफ़ करो. ४. दुःख. ७. ठेल ठेल कर.
२. शीत लगना. ५. भौंरी. ८. मेघ.
३. इच्छा, सिद्ध. ६. पक्षी विशेष. ९. अन्देशा.

(४)

गोकुल की, मथुरा की, कहौ सुधि, गाइन की, अरु बृन्द अहीर की।
नन्द बबा की, जसोमति की, बरसाने की, औ बृषभानु के तीर[1] की।
कुञ्ज करील, कदम्बन की, द्रुम बेलिन की, यमुना तट नीर की।
ऊधो! कहो किन हाल अबै, वह कुञ्जगली, बृज बालन भीर की॥
(४४४)

(५)

ए करतार[2]! बिनै सुनौ "दास" की, लोकनि को अवतार[3] करौ जनि।
लोकनि को अवतार करौ, तौ मनुष्यन हीं को सँवार[4] करौ जनि।
मानुष हू को सँवार करौ, तौ तिन्है बिच प्रेम प्रचार[5] करौ जनि।
प्रेम प्रचार करौ तौ, दयानिधि! केहूँ बियोग बिचार[6] करौ जनि॥
(४४५)

१. आस पास.
२. परमेश्वर.
३. उत्पत्ति.
४. सिरजन.
५. विस्तार.
६. ख्याल.

त्रयोदश कुसुम ।

रसप्रकार ।

पूर्वोक्त[1] रीत्यनुसार विभाव, अनुभाव और संचारियों से परिपोषित[2] स्थायी भाव, अर्थात् रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा और आश्चर्य से क्रमानुसार नव रसों की उत्पत्ति होती है, अर्थात् शृङ्गार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शान्त ॥

शृङ्गार ।

नायकनायिका के परस्पर अनिर्वचनीय पूर्णानन्द को शृङ्गार रस कहते हैं. इस्का वर्ण[3] श्याम और देवता विष्णु हैं. इन्के दो भेद हैं, अर्थात् संयोग और विप्रलम्भ. यही एक रस है जिस्में संचारी, विभाव, अनुभाव, सब भेदों सहित दर्शित[4] होते हैं, अतएव रसराज कहाता है ॥

१. संयोग ।

दर्श[5] स्पर्श संलापादि[6] जनित वहिरिन्द्रिय सम्बन्धी परस्परानन्द को संयोग शृङ्गार कहते हैं ॥

१. आगे कहे गये.
२. पुष्टता को प्राप्त हुआ.
३. रंग.
४. दिखलाये हैं.
५. देखना.
६. बातचीत.

शृङ्गार रस के अधिष्ठाता—विष्णु.

संयोग शृंगार.

(यथा)
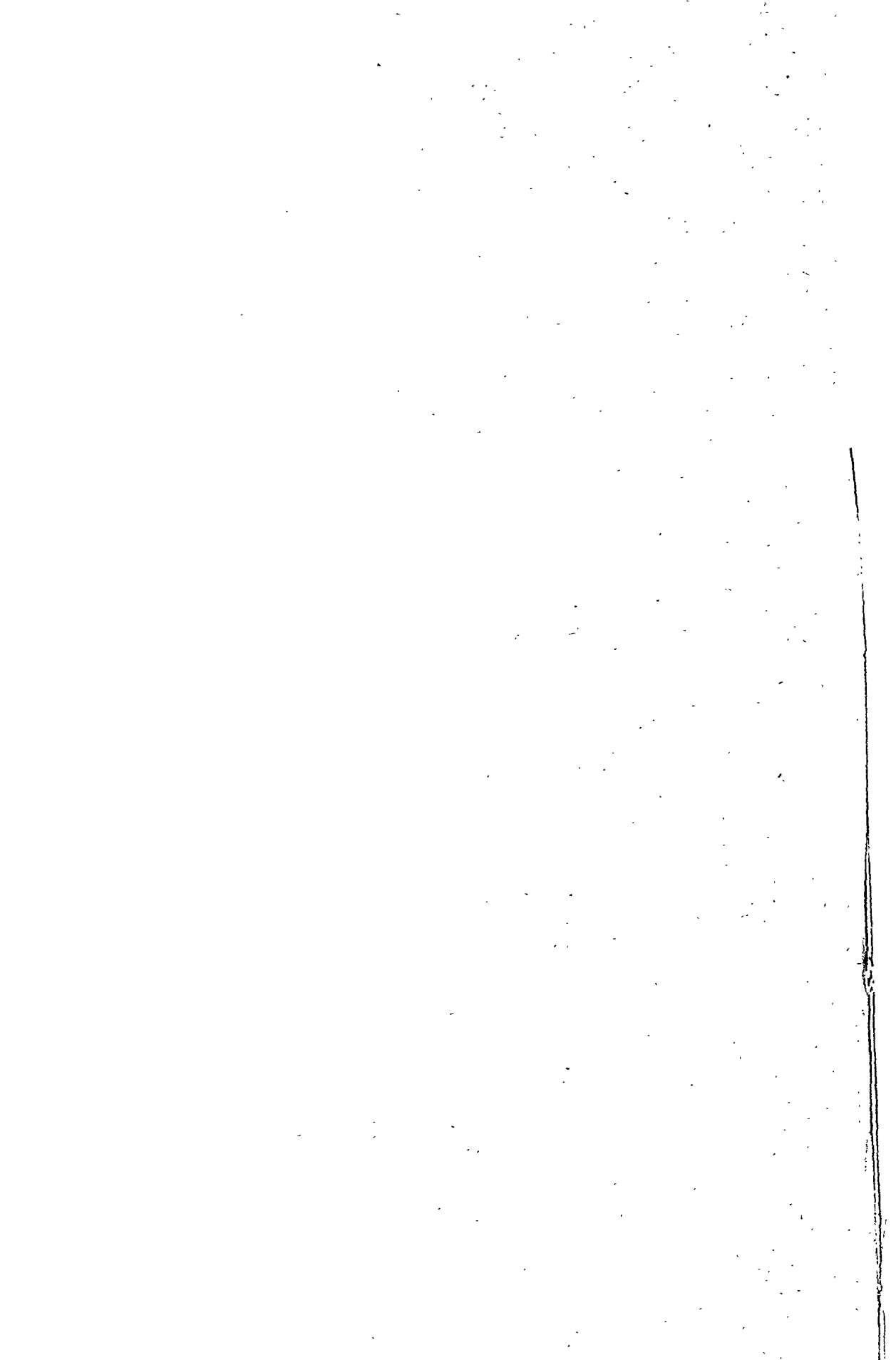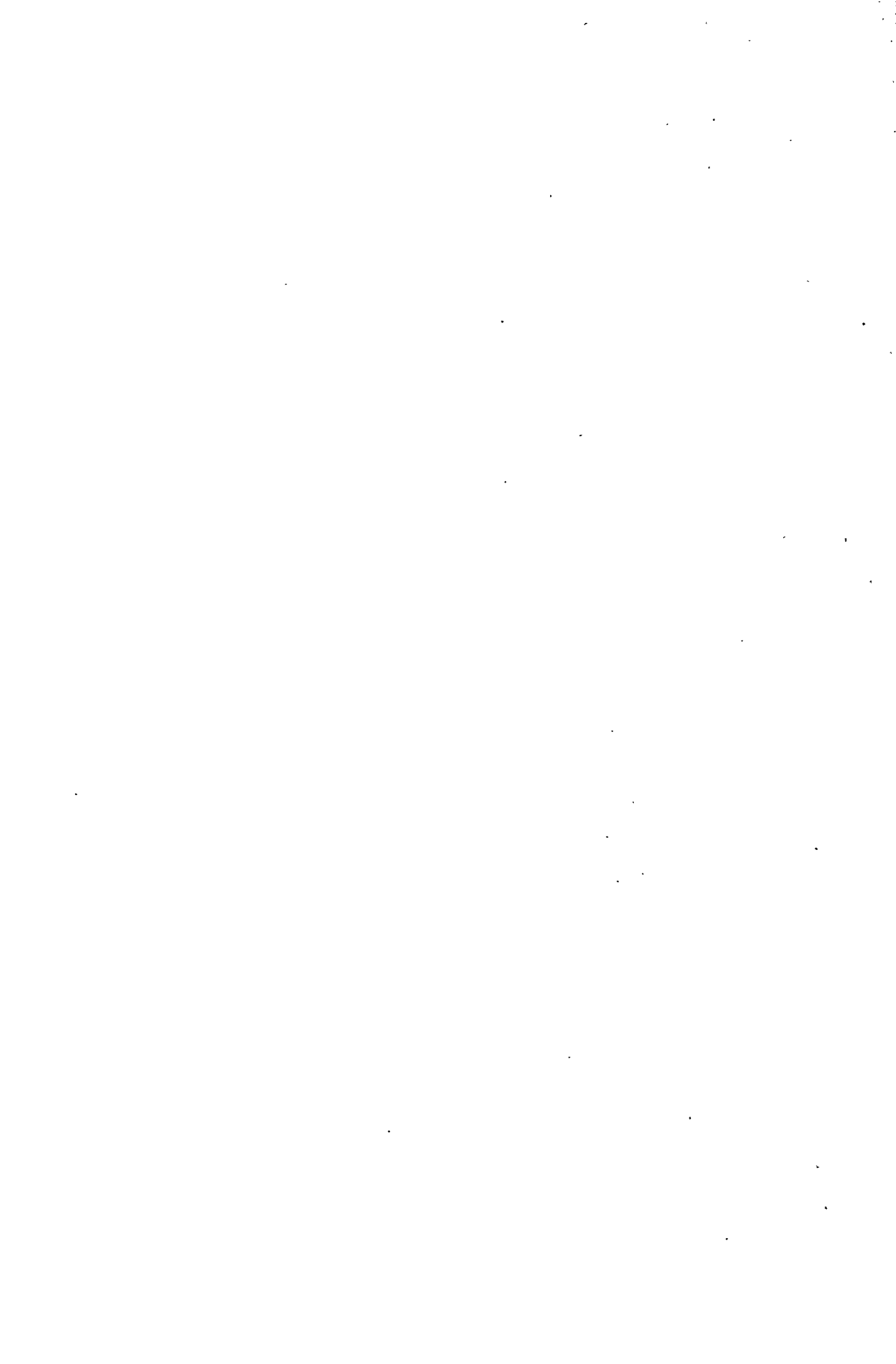
कमल बिछाए, बर बिमल बितान छाए, छबि भरे छज्जे, दरवज्जे महराब के।
घने घनसार के सँवारे, सखी ! हौज, तामै छूटत फुहारे भारे[1] केसरि के आब के।
सोंधी सेज, सुमन सिँगार, अंग अंगराग, होत राग रंग भारे सरस हिताब के।
चन्दन की खौरैं[2], बेंदी, बन्दनं[3] बनाय बैठे, राधिका गोबिन्द आजु मन्दिर गुलाब के ॥
(४४६)

(२)

भाग जगे बृजमण्डल के, उमग्यो दुहुँ अंग अनङ्ग अखारो[4]।
साहबी, सील, सिरोमनि रूप, उनै रह्यो भू पर ओज अपारो।
डोलनि, बोलनि, काम कलोलनि, जोग जथा[5] "मतिराम" सँवारो।
राधिका जैसी सोहाग भरी, अनुराग भरो तिमि नन्द को बारो ॥
(४४७)

२. विप्रलम्भ।

नायकनायिका के परस्पर मुदित[6] बहिरिन्द्रियों के सम्बन्धाभाव को विप्रलम्भ वा वियोग शृंगार कहते हैं. इनके तीन भेद हैं, अर्थात् पूर्व्वानुराग, मान और प्रवास ॥

(यथा)

ए बिधिना! यह कीन्हो कहा ? अरे मो मन प्रेम उमंग भरी क्यों ?
प्रेम उमंग भरी तौ भरी, पर एतो सरूप दियो तैं, हरी ! क्यों ?

१. बहुत.
२. तिलक.
३. कुमकुम.
४. अखाड़ा, रंगभूमि.
५. प्रकार.
६. प्रसन्न.

एतो सरूप दियो तो दियौ, पर एती अदाह तैं आनि धरी क्यों ?
एती अदाह धरी तो धरी, पर ये अँखियाँ रिझवार करी क्यों ??
(४४८)

(२)

निदरत, हे हरि ! पावस सहित समाज।
कस न देइ दुख दारुन[1] एहिँ ऋतुराज ॥
(४४९)

१. पूर्वानुराग।

मिलन से प्रथम हीं प्रीति होने को पूर्वानुराग कहते हैं. इस्का कारण प्रियवस्तु का दर्शन है ॥

(यथा)

दीठि पर्‌यो जौतैं तौतैं ना छिन टरति छवि, आँखिन छयोरी छिन छिन छालि छालि उठै।
वाजि वाजि उठत मिठौं हैं सुर वंसी भोर, ठौर ठौर ढीली गरबीली चालि चालि उठै।
फहरि फहरि उठैं पीरे पटुका[3] के छोर, साँवरे की तिरछी चितौनि सालि सालि उठै।
डोलि डोलि कुण्डल उठत वेई बार बार, एरी ! वह मुकुट हिये मे हालि हालि उठै ॥
(४५०)

(२)

मोहिँ तजि मोहने मिल्यो है मन मेरो दौरि, नैन हू मिले हैं देखि देखि साँवरो सरीर।
कहै "पदमाकर" त्यों तानमयँ[4] कान भए, हौं तौ रही जकि, थकि, भूली सी, भ्रमी सी, बीर !
दई निरदई तातैं इन को दया न दई, ऐसी दसा भई जातैं, कैसे धरौं मन धीर ?
होतो मन हू के मन, नैननि के नैन, जौपैं कानन के कान, तौपैं जानते पराई पीर ॥
(४५१)

१. असह्य, कठोर.
२. बाज.
३. डुपट्टा.
४. सुर मे लीन.

(३)

बलि बलि गई बारिजात से बदन पर, बंसी तान बँधि गई, बिधि गई बानी मे।
बड़रे बिलोचन बिसरि के बिलोकत, बिसारी सुधि बुधि बावरी लौं बिललानी[1] मे।
बरुनी बिभा[2] की बारुनी मे ह्वै बिमोहित[3], बिसेखि बिंबाधर मे, बिगोई[4] धुद्धिरानी मे।
बरजि बरजि बिलखानी बृन्द आली, बनमाली की बिकास बिहसनि मै बिकानी मे॥

(४५२)

(४)

बहु भाँति बगारे जो या बृज मै अति आनन ओप अनूप कला।
"द्विजदेव" जू, चन्द्रिका की छबि जाकी प्रसादै[5] रही सिगरी अचला।
निरख्यो जब तैं इन नैन चकोरनि, बीतत ज्यों जुग एक पला।
चहुँघा, सखि! चाँदनी चौक मै डोलत चन्द अमन्द सों नन्द लला॥

(४५३)

दर्शन।

किसी प्रकार से किसी वस्तु के स्वरूपज्ञान होने को दर्शन कहते हैं. इसके चार द्वार हैं, अर्थात् श्रवण, चित्र, स्वप्न और प्रत्यक्ष॥

१. श्रवण।

कीर्तिश्रवण करने से जो स्वरूप चित्त मे भासित होता है, उसको श्रवणदर्शन कहते हैं॥

(यथा)

सीस मोर मकुट, लकुट कर, पीत पट, गरे बनमाल, परिकर[6] कटि कसी है।
माधुरी हसनि, बिलसनि बड़े बड़े नैन, कुण्डल कपोल गोल तैसी छबि लसी है।

१. बेकाम होगई.
२. शोभा.
३. बेहोश.
४. नसाई.
५. प्रसन्नकरती है.
६. कमरबन्द.

चलनि, चितौनि चितचोरन, "प्रवीन बेनी" बोलनि अमोलनि[1] अजौं लौं वैसी गसी[2] है।
जा दिन तैं, सजनी! बखानी हरि मूरति तैं, तादिन तैं तैसही हमारे उर बसी है॥
(४५४)

२. चित्र।

किसी वस्तु के चित्रद्वारा स्वरूपज्ञान होने को चित्र-दर्शन कहते हैं॥

(यथा)

मूरति मोहनी मोहन की लिखि धारी जहाँ सखियान की भीरैं।
"बेनी प्रवीन" बिलोकति राधिका चित्र लिखी सी भई तेहिँ तीरैं।
जोरी किसोरी, किसोर की रीझि सराहि रही हैं गुवालि गँभीरैं[3]।
चित्त चितेरी[4] रही चकि सी, जकि एक तैं ह्वै गई द्वै तसवीरैं॥
(४५५)

३. स्वप्न।

निद्रावस्था मे किसी वस्तु के स्वरूप भासित होने को स्वप्नदर्शन कहते हैं॥

(यथा)

काहू काहू भाँति राति लागी ती पलक, तहाँ सापने मे आनि केलि रीति उन ठानी री!
आप दुरे जाय मेरे नैननि मुदाय कछु, हौंहूँ, बजमारी, ढूँढ़िबे को अकुलानी री!
एरी मेरी आली! या निराली करता की गति "द्विजदेव" नेकऊ न परति पिछानी[5] री!
जौ लौं उठि आपनो पथिक[6] पिय ढूँढौं, तौ लौं हाय इन आँखिन तैं नीदई हेरानी री!!
(४५६)

१. अमूल्य.
२. धँसी.
३. ज़ोर से.
४. चित्र खींचनेवाली.
५. पहचान.
६. मुसाफ़िर.

(२)

हरि राधिका की चुनरी सजि कै अरु भूषन पैन्हि बिलोकैं घटा।
इति राधिका हू हरि भेष धर्‌यो,लखि होत जिन्हैं कुलकानि कटा।
"कमलापति" यों भुज पैं भुज मेलि दोऊ बिहरैं जहँ कुञ्ज तटा।
कहि जाति कछू न अवै,सजनी! वह स्वप्न मैं देखी बिचित्र छटा॥

(४५७)

४. प्रत्यक्ष।

किसी वस्तु के नयनगोचर[1] होने को प्रत्यक्षदर्शन कहते हैं॥

(यथा)

टहरत आवै मनमोहन महर नन्द, ठहरत आवै पुञ्ज परिमल पूर को।
"सेवक" त्यों गहरत[2] आवै ज्यों ज्यों बाँसुरी सों,कहरत[3] आवै मन मेरो मानि दूर को।
लहरत आवै गुञ्जमाल[4] बनमाल जुग, थहरत[5] आवै कान कुण्डल सुनूर[6] को।
फहरत आवै, अरी! पीत पट कैसो सिर, छहरत आवै मंजु मुकुट मयूर को॥

(४५८)

२. मान।

आशाप्रतिकूलप्रियापराधजनित प्रणय[7] कोप को मान कहते हैं. इनके तीन भेद हैं, अर्थात् लघु, मध्यम और गुरु॥

(यथा)

पान बिनु अधर, अँजन बिनु नैन बड़े, उर बिनु हार, कछू औरै भेष भेषि रह्यो।
सारी मरगजी, नाक नथ बिनु, छूटे बार, चढ़ि रहीं भौंहैं,अरु मन महा तेर्षि रह्यो।

१. देखपड़ने.
२. मन्द मन्द.
३. व्याकुल होता.
४. घुमची की माला.
५. हिलता हुआ.
६. चमकदार.
७. स्नेह, प्रीति.
८. कुद्धित.

आनन रुखाई, छाई पियराई, "रघुनाथ" औरै तिय को मिलाप जिय अवरेखि रह्यो।
घरी चारि परम सुजान पियप्यारो रीझि, मान न मनायो, मानिनी को मान देखि रह्यो॥
(४५९)

१. लघु।

परस्त्रीदर्शनजनित मान, जो हास्यादिक ही से निवृत्त होता, उसको लघु मान कहते हैं॥

(यथा)

आज रूसी बाल चले लाल जू मनावन को, जामा पैन्हे उलटो न बाँधे पेंच कसि कसि।
"देवकी नदन" कहै, पटुका लपेटे कर, लरकैं पितम्बर की छोर भूमि खसि[१] खसि।
पौर तें आँगन लौं जान पाए, बीचैं रहे, चूमीकारी[२] कारी, कहि धौरी धौरी बसि बसि।
ब्यानी गाय काँधरकोरूप देखिविरुझानी[३] मानछोड्योमानिनीदिवानी भई हँसि हँसि॥
(४६०)

(२)

तोहीं[४] को छुटि मान गो देखते हीं बृजराज।
रही घरिक लौं मानसी मान किये की लाज॥
(४६१)

२. मध्यम।

परस्त्रीप्रशंसाजनित मान, जो विनय वा शपथादि से निवृत्त होता, उसको मध्यम मान कहते हैं॥

(यथा)

ऐसही की थोरी, पैन भोरी है किसोरी यह, याकी चित चाह राह औरकी मझैये[५] जनि।
कहै "पदमाकर" सुजान! रूपखान आगे आनबान[६] आनकी सु आनिकै चलैये जनि।

१. गिर कर.
२. चुचकारना.
३. बिगड़ी.
४. तेरे हृदय का.
५. कांड़ डालना, रौंद डालना.
६. सज धज.

जैसे तैसे करि सत सौंहनि मनाय लाई, पै इक मेरी बात एती बिसरैयो जनि।
आजुकीघरीतैं लै सुभूलिहूँ भलेहो,स्याम! ललिता को लैकै नाम बाँसुरी बजैयो जनि॥
(४६२)

३. गुरु।

परस्त्रीगमनविश्वासजनित मान, जो चरणपतनादि[1] से निवृत्त होता, उसको गुरु मान कहते हैं॥

(यथा)

दूसरे पलँग बैठी रूसि कै गुमान ऐंठी, महा रोष भरी प्यारी पी को दोष पाइ कै।
मानै न मनायो, एहो कबि "रघुनाथ" सखी हारी संगवारी बातैं बहुत बनाइ कै।
इतने मैं गहि कै चरन प्रानप्यारे कह्यो 'आज या महावरो लगैगो भाल आइ कै'।
मान को न रह्यो ज्ञान, एतिक सकानी,[2] मुसकानी, अङ्क प्यारे के निसंक बैठी जाइ कै॥
(४६३)

३. प्रवास।

विदेशस्थिति को प्रवास कहते हैं. इसके दो भेद हैं अर्थात् भूतप्रवास और भविष्यप्रवास॥

(यथा)

साँझही समै तैं दुरि बैठी परदानि दैकै, संक माहिँ एकै या कलानिधि कसाई की।
कन्तकीकहानी सुनि स्रवन सोहानी, रैनि रंचक बिहानी[3] या बसन्त अन्तघाई[4] की।
कलकै[5] न, आली! नेकु पलकैं लगन पाँई, टरि कित गई नींद नैनन धौं आई की।
कुहू कहे कोकिल कुमति मै उघारे नैन, जालै[6] ह्वै जु देखों ज्वालै[7] ज्वलितै[8] जोन्हाई की॥
(४६४)

1. पैर पर गिरना.
2. संकुचित हुई.
3. व्यतीत हुई.
4. कपटी, घातकी.
5. सुबीते से.
6. झरोखा.
7. अग्नि.
8. जलती.

(२)

भूमि हरी भई, गैलैं गईं मिटि, नीर प्रवाह बहाव बहा है।
कारी घटानि अँधेरो कियो, निसि द्योस मैं भेद कछू न रहा है।
"ठाकुर" भौन तैं दूसरे भौन लौं जात बनै न, विचार महा है।
कैसे कै आवैं, कहा करैं, बीर! बिचारे बटोहिन[1] दोष कहा है॥

(४६५)

१. भूत प्रवास।

(यथा)

चैत चारु चाँदनी चिता सी चमकत चन्द, अनिल[2] की डोलनि अनलहू तैं ताती है।
कहै कवि "दूलह" ये बौरे हैं रसाल, तापैं कूकि उठैं कैलिया मधुर मधु माती है।
औधि अधिकानी, हरि हू की बात जानी, अब काहे न छटूक ह्वै दरकिजाति छाती है।
गुनो आनि आवनो, बसन्त री वितावनो यों, सुनो आनि आवनो, बहुरि आई पाती है॥

(४६६)

(२)

लागत बसन्त के सुपाती लिखी प्रीतम को, प्यारी परबीन! है हमारी सुधि आनबी।
कहै "पदमाकर" हियँा को यों हवाल, बिरहानल की ज्वाल सों दवानल सो मानबी।
ऊब[3] की उसासनि को पूरो परगास, सो तौ निपट उदास पौन हू तैं पहिचानबी।
नैननि को ढंग, सो अभंग पिचकारिन, तैं गातन को रंग, पीरे पातन तैं जानबी॥

(४६७)

(३)

परकारज देह को धारे फिरो, परजन्य[4]! यथारथ ह्वै दरसो।
निधि नीर सुधा के समान करो, सब ही बिधि सज्जनता सरसो।

१. मुसाफिरों का.
२. वायु.
३. घबराहट.
४. मेघ.

"घन आनद" जीवनदायक हौ, कछू मेरियो पीर हिये परसो।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन मो अँसुवान को लै बरसो॥
(४६८)

(४)

बृज बिरहिनि चढ़ि घेर्‌यो ऋतुपति मार।
होन चहत, बृजभूषन! अब पतिभ्कार[१]॥
(४६९)

२. भविष्य प्रवास।

(यथा)

सो दिनको मारग, तहाँकी बेगि मागी बिदा प्यारो "पदुमाकर" प्रभात रात बीते पर।
सो सुनि पियारी पियगमन बराइबे[२] को, आँसुन अन्हाय, बोली आसन सुतीते[३] पर।
बालम! बिदेसैं तुम जातहौ, तौ जाउ, पर साँची कहिजाउ, कब ऐहौ भौन रीते[४] पर?
पहर के भीतर, कै द्वै पहर भीतर ही, तीसरे पहर, कैधौं साँभ्क ही बितीते पर* ??
(४७०)

(२)

कंस दलन पर दौर[५] उत, इत राधा हित[६] जोर।
चहि रहि सकत न स्यामचित, ऐंचि लगी दुहुँ ओर॥
(४७१)

१. पतझाड़ और बेइज्जती.
२. बरजने, रोकने.
३. जिसपर शयन होता है.
४. सूने, शून्य.
५. धावा, चढ़ाई.
६. प्रीति.

*नायिका, वियोग में मरण निश्चित कर, नायक के पुनरागमन की परमावधि सायंकाल ही तक देती है, क्योंकि रात्रि को शव नहीं रक्खा जा सकता.

चतुर्दश कुसुम।

(विप्रलम्भशृङ्गारान्तर्गत)

दशादशा।

प्रिय के वियोग मे मनुष्यों की अवस्था को, जो अभिलाप से प्रारम्भ हो मरणावधि को पहुँचतीं हैं, दशादशा कहते हैं. अतएव विप्रलम्भश्रृंगारान्तर्गत दशादशा मानी गई हैं, अर्थात् अभिलाप, चिन्ता, स्मरण, गुणकथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जडता और मरण ॥

१. अभिलाष।

वियोग समय मे प्रियमिलन की इच्छा को अभिलाष कहते हैं ॥

(यथा)

कब काहू सों मान करैगी, अरी! कब काहू के मान मनावहिगी ?
कब बैठि कै बन्सी बटा के तरें हठि रीझ[1] की तानहिँ गावहिगी ?
कहि "तोप" कबै गुरुलोगनि[2] मै निज नैननि सैन[3] बतावहिगी ?
कब धौं बन कुञ्जन के घर मै मुरलीधर को उर[4] लावहिगी ??

(४७२)

१. प्रसन्नता. ३. इशारा.
२. बड़े लोग. ४. हृदय.

(२)

ऊधो ! तहाँईं चलौ लै हमै, जहाँ कूबरी कान्ह बसै इक ठोरी।
देखियै "दास" अघाइ अघाइ तिहारे प्रसाद[1] मनोहर जोरी[2]।
कूबरी सों कछु पाइयै मन्त्र, लगाइयै कान्ह सों प्रेम की डोरी।
कूबरी भक्ति बढाइयै बृन्द, चढाइयै चन्दन, बन्दन, रोरी॥
(४७३)

२. चिन्ता।

वियोग समय मे संयोग वा चित्त शान्त के उपायान्तर विचार को चिन्ता कहते हैं॥

(यथा)

ए विधि ! जौ बिरहागि के बान सों मारत हौ, तौ यहै बर मागौं।
जौ पसु होउँ, तऊ मरि कैसेहूँ पाँवरी[3] ह्वै प्रभु के पग लागौं।
"दास" पखेरुन मै करौ मोर, जु नन्द किसोर प्रभा अनुरागौं।
भूषन कीजियै तौ बनमालहिँ, जा तैं गोपालहिँ के हिय लागौं॥
(४७४)

३. स्मरण।

वियोग समय मे प्रिय के पूर्वचेष्टाओं के ज्ञान होने को स्मरण कहते हैं॥

(यथा)

जे दृग सिराए"घन आनद" दरस रस, ते अब अमोही[4] दुख ज्वाल जारियतु है।
तोषे हित, पोषे नित, जेई प्रान राखे साथ, तेई कै अकेले यों अनाथ मारियतु है।

१. कृपा से.
२. स्त्री पुरुष.
३. जूती.
४. निर्दई.

कौन कौन बात को परेखो[1] उर आनियै हो, जानप्यारे! कैसे बिधि आँक टारियतु है।
थाती[2] ले निहारी प्रीति, छाती पैं बिराजि रही, हेरि हेरि आँसुन समूह ढारियतु है॥
(४७५)

(२)

खोरि मैं खेलन आवती यै न तौ, आलिनि के मत मै परती क्यों?
"देव" गोपालहिँ देखती यै न तौ, या बिरहानल मै जरती क्यों?
बापुरी मंजु रसाल की बालि[3], सुभालै[4] सी ह्वै उर मै अरती क्यों?
कोमल कूकि कै कैलिया कूर, करेजन की किरचैं[5] करती क्यों??
(४७६)

(३)

सघन कुञ्ज, छाया सुखद, सीतल, मन्द समीर।
मन ह्वै जात अजौं वहै, वा जमुना के तीर॥
(४७७)

४. गुणकथन।

वियोग समय मे प्रिय के गुणानुवाद करने को गुणकथन कहते हैं॥

(यथा)

दधि के समुद्र न्हायो, पायो न सफाई, तायो आँच अति रुद्र[6] जू के सेखर[7] कृसान की।
सुधाधर भयो सुधा अधरनि हेतु, द्विजराज भो अकर्स[8] द्विजराजी की प्रभान की।
घटि घटि, पूरि पूरि, फिरत दिगन्त अजौं, उपमान बिनु भयो खानि अपमान की।
"दास" कलानिधि केती कला कै दिखायो, पै न नेकु छबि पायो राधेबदन बिधान की॥
(४७८)

१. परीक्षा.
२. धरोहर.
३. बौर.
४. बर्छी
५. तलवार, टुकड़े.
६. महादेव.
७. मस्तक.
८. स्पर्धा.

५. उद्वेग।

वियोग समय मे व्याकुल होकर किसी विषय मे चित्त के आश्रित न होने को उद्वेग कहते हैं ॥

(यथा)

छन होत हरीरी[1] मही को लखे, छन जोवति है छनजोति[2] छटा।
अवलोकति इन्द्रबधू की पत्यारी, बिलोकति है खिन कारी घटा।
तकि डार कदम्बन की तरसै, तऊ देखत नाचत मोर अटा।
अध ऊरध आवत जात भयो चित नागरि को नट कैसो बटा[3] ॥
(४७९)

६. प्रलाप।

वियोग समय मे प्रिय को विद्यमान मान कर निरर्थक क्रिया वा वचनरचना को प्रलाप कहते हैं ॥

(यथा)

ना यह नन्द को मन्दिर है, बृषभानु को भौन, जहाँ जकती हौ?
हौं हीं इहाँ तुमहीं, कबि "देव" जू, कौनको घूँघट कै तकती हौ?
भेटत मोहिँ भटू केहि कारन, कौन की धौं छबि सों छकती हौ?
ऐसी भई हौ, कहौ केहिँ कारन, कान्ह कहाँ हैं, कहा बकती हौ??
(४८०)

(२)

झूरि[4] से कौनै लए बन बाग ये, कौनै जु आमन की हरियाई?
कोइल काहे कराहति है, बन कौनै चहूँ दिसि धूरि उड़ाई?

१. प्रसन्न.
२. बिजली.
३. गेंद.
४. झोर, पीट.

कैसी "नरेस" बयारि वहै यह, कौन धौं कौन सो माहुरै[1] नाई ?
हाय ! न कोऊ तलास करै, ये पलासन कौनै दवारि लगाई ??

(४८१)

७. उन्माद।

वियोग मे अत्यन्त संयोगोत्सुक हो बुद्धिविपर्ययपूर्वक वृथा व्यापार करने को उन्माद कहते हैं ॥

(यथा)

अरि कै वह आज अकेली गई, खेरिके[2] हरि के गुन रूप लुही[3]।
उनहूँ अपनो पहिराय हरा, मुसकाय कै, गाइ कै, गाय दुही।
कवि "देव" कह्यो किन काऊ कछू, जब तैं उनके अनुराग छुही[4]।
सब ही सों यही कहै बालबधू, 'यह देखो री! माल गुपाल गुही' ॥

(४८२)

८. व्याधि।

वियोगदुःखजनित शरीर की अस्वास्थ्य[5] को व्याधि कहते हैं ॥

(यथा)

बिरह सँतापन तैं तपनि हेरानो चेत, ऊबि ऊबि साँसैं लेत नैन नीर भरि भरि।
करपूर धूरनि तैं, चन्दन के चूरन तैं, तामरस[6] मूरनि उपाय थाकीं करि करि।
घेरि रहीं घर की, नगर की डगरि[7] आँई, देखि देखि भाखैं सबै, त्राहि, त्राहि, हरि, हरि।
अंग अंग सूके, बैन मूके से, बधू के उर भभकि भभूके[8] मैन जू के उठैं बरि बरि ॥

(४८३)

१. विष.
२. गौओं के एकत्र होने का स्थान.
३. ललचाई.
४. रंगी.
५. बीमारी.
६. कमल.
७. धीरे २ आई.
८. अंगार.

९. जडता ।

वियोग दुःख से जीते ही सब इन्द्रियों के गत्यवरोध होने के जडता कहते हैं ॥

(यथा)

कौंल से पानि कपोल धरे, दृग द्वार लौं नीर भरै, हिय हारे ।
चित्र चरित्र मई सी भई, गई लीन ह्वै दीन, टरै नहिँ टारे ।
रावरी लागी "ममारख" दीठि, न जात कही, हम जाति पुकारे ।
जागि है जीहै, तौ जीहैं सबै, न तौ पीहैं हलाहल नन्द के द्वारे ॥
(४८४)

१०. मरण ।

प्राणपरित्याग के मरण कहते हैं. यह दशा केवल शूर और सती की कीर्त्ति मे वर्णनीय है, अन्यत्र नहीं ॥

(यथा)

पारथ[1] समान कीन्हो भारथ मही मै आनि, बाँधि सिर बाना[2] ठान्यो सरभ सपूती को ।
कोर[3] कोर कटि गयो, हटि के न पग दयो, लयो रन जीति, किरवान[4] करतूती[5] को ।
भनत "नेवाज" दिल्लीपति सो सहादत खान, करत बखान एती मान मजबूती को ।
कतल मरद्द नद्द सोनित[6] सें भरि गयो, करि गयो हद्द भगवन्त रजपूती को ॥
(४८५)

(२)

जानकी को सुनि आरत नाद, सु जानि दसानन की छलहाँई ।
त्यों "पदमाकर" नीच निसाचर आनि अकास मै आड़्यो तहाँई ।

१. अर्जुन.
२. प्रण.
३. टुकडा.
४. तलवार.
५. करनी.
६. रुधिर.

रावन ऐसे महारिपु सों अति युद्ध कियो अपने बल ताँईं ।
सोहत श्री रघुराज के काज मे जीवत[1] जैतो जटायु की नाईं ॥
(४८६)

(३)

सँगवारी! सुनो सब कानन दै, बिरहागि के हौं तौ मरी सुख मै ।
करि चेटक[2] चन्दन बन्दन रीति, निहारियो भावते के रुख[3] मै ।
सुधि लेहिँगे "सेवक" जात ही मेरी, पठाइ हैं धावन[4] को दुख मै ।
तजि आगि सुधा गुनि पीतम की, धरि दीजियो पाती मेरे मुख मै ॥
(४८७)

इति दशदशा कुसुमं ।

१. जीता है.
२. नौकर, कौतुक.
३. चेहरा, तरफ़.
४. दूत.

हास्य रस के अधिष्ठाता—प्रमथ.

पञ्चदश कुसुम।

हास्य।

हास की परिपुष्टता को हास्यरस कहते हैं. इसका वर्ण श्वेत, देवता प्रमथ, आलम्बन अनुपयुक्तवचनरूपादि के पात्र, उद्दीपन अनुपयुक्त वचन और रूपादिक, तथा अनुभाव मुखविकासादि हैं॥

(यथा)

बार बार बैल को निपट ऊँचो नाद सुनि हुँकरत बाघ बिरुझानो रस रेला मै।
"भूधर" भनत, ताकी बास पाय सोर करि, कुत्ता कोतवाल को बगानो बग मेला मै।
फुँकरत मूषक को दूषक भुजंग, तासों जंग करिबे को झुक्यो मोर हद हेला मै।
आपुस मे पारषद[1] कहत पुकारि, कछु रारि[2] सी मची है त्रिपुरारि[3] के तबेला[4] मै॥
(४८८)

(२)

काहूएक दास काहू साहिब[5] की आस मै, कितेक दिन बीत्यो, रीत्यो सब भाँति बलु है।
बिथा जो बिनै सो कहै, ऊतरु याही सो लहै, सेवाफल ह्वैही रहै, यामे नहीं चलु[6] है।
एक दिन हास हेत आयो प्रभु पास, तन राखे न पुराने बास कोऊ एक थलु है।
करत प्रनाम से बिहँसि बोल्यो, यह कहा, कह्यो करजोरि "देव" सेवही को फलु है॥
(४८९)

१. मुसाहेब.
२. झगडा.
३. महादेव.
४. अस्तबल.
५. प्रभु.
६. फरक.

(३)

चित पितुमारक जोग गनि भयो भए सुत सोग।
फिरि हुलस्यो जिय जोयसी[1] समुझ्यो जारज[2] जोग॥
(४१०)

करुणा।

शोक की परिपुष्टता के करुणरस कहते हैं. इसका वर्ण कपोतचित्रित[3], देवतावरुण, आलम्बनवन्धुनाशादि, उद्दीपनमृतक का दाह, उसके असाधारण वस्तुओं का दर्शन, गुणश्रवणादि, तथा अनुभाव भाग्यनिन्दा, भूमिपतन और रोदनादिक हैं॥

(यथा)

बतियाँ हुतीं न सपने हू सुनिबे की, सो सुन्यो मैं, जो हुती न कहिबे की, सो कहोई मैं।
रोवैं नर, नारी, पच्छी, पसु, देहधारी, रोवैं परम दुखारी, जासों सूलनि सहोई मैं।
हाय अवलोकिबो कुपन्थहि गहोई, बिरहागिनि गहोई, सोक सिंधु निबहोई मैं।
हाय प्रानप्यारे रघुनन्दन! दुलारे, तुम बन को सिधारे, प्रान तन लै रहोई मैं॥
(४११)

(२)

मात को मोह न द्रोह दुमात[4] को, सोच न तात के गात दहे को।
प्रान को छोभ न, बन्धु बिछोभ न, राज को लोभ न मोद रहे को।
एते पैं नेक न मानत "श्रीपति" एते मै सीय बियोग सहे को।
तारन भूमि मैं राम कह्यो, 'मोहिँ सोच बिभीषन भूप कहे को'॥
(४१२)

रौद्र।

क्रोध से इन्द्रियों की प्रबलता के रौद्ररस कहते हैं. इसका

१. ज्योतिषी. ३. कबूतर सा कबरा.
२. रोगत्ता. ४. सौतेरी माता.

करुण रस के अधिष्ठाता—वरुण.

मन्मथ दहन.

रौद्र रस के अधिष्ठाता—रुद्र.

वर्ण रक्त, देवता रुद्र, आलम्बन शत्रु, उद्दीपन शत्रु का उमंगादिक, तथा अनुभाव भ्रूभंग[1], अधरदंशन[2] और बाहुविस्फोटनादि[3] हैं.

(यथा)

बोरौं सबै रघुबंस कुठार की धार मैं बारन, बाजि, सरत्थहिँ[4]।
बान की बायु उड़ाय कै लच्छन[5], लच्छि[6] करौं अरिहा[7] समरत्थहिँ[8]।
रामहिँ बाम समेत पठै बन, सोक के भार मैं भूजौं[10] भरत्थहि।
जौ धनु हाथ लियो रघुनाथ, तौ आजु अनाथ करौं दसरत्थहि॥
(४१३)

वीर।

पूर्णोत्साह की परिपुष्टता को वीररस कहते हैं. इसका वर्ण गौर और देवता इन्द्र हैं; इनके तीन भेद हैं, अर्थात् युद्धवीर, दानवीर और दयावीर॥

(यथा)

तरल तुरंग चढ़्यो अमरेस नन्दन, मनोरथ सकल पूरे ह्वै हैं अब हर के।
प्रफुलित गात न सनाह[11] मै समात, सुनि जंग के प्रसंग तैं प्रचण्ड भुज फरके।
सँग्राम समय संगराम को सरूप लखे सामने सनद्ध[12] जब आए अरि बर के।
मन्द मुसकानि आनि कढ़ी मुखचन्द तैं, अनन्द तैं तरकि गए बन्द बखतर के॥
(४१४)

१. युद्धवीर।

बलविद्याप्रतापादिनिश्चयजनितोत्साह की परिपुष्टता को युद्धवीर कहते हैं. इसका आलम्बन रिपुका ऐश्वर्य, उद्दीपन सेनाकोलाहलादि, तथा अनुभाव अंगस्फुरणादिक हैं.

१. त्योरी चढ़ना.
२. दाँत काटना.
३. ताल मारना.
४. रथसहित.
५. लक्ष्मण.
६. निशाना.
७. शत्रुघ्न.
८. शक्तिमान.
९. भरसाँय.
१०. जलाऊँ.
११. कवच.
१२. तैय्यार.

(यथा)

डह डहे डंकन के सबद निसंक होत, बह बही शत्रुन की सेना जोर सरकी।
"हरिकेस"सुभट घटान की उमण्डि उत, चम्पिति को नन्द कोप्यो उमग समर की।
हाथिनकी मण्ड[1],मारू राग की उमण्ड त्यों त्यों लाली झलकति मुख छत्रसाल बर की।
फरकि फरकि उठैं बाहैं अत्र[2] बाहिबे को, करकि करकि उठैं करी[3] बखतर की ॥

(४१५)

२. दयावीर।

चित्तार्द्रतादिजनितोत्साह की परिपुष्टता को दयावीर कहते हैं. इस्का आलम्बन दीन, उद्दीपन दुःखवर्णनादि, तथा अनुभाव दुःखदूरीकरण और मृदुभाषणादिक हैं.

(यथा)

जल तैं सु थल पर, थल तैं सु जल पर, उथलपथल[4] जल, थल, उनमाथी[5] को।
बरस कितेक बीते, जुगुति चली न कछू, बिना दीनबन्धु होत साँकरे मे साथी को।
मन, बच, करम, पुकारत प्रगट "बेनी" नाथन के नाथ औ अनाथन सनाथी[6] को।
बल करि हारे हाथाहाथी सब हाथी, तब हाथाहाथी हरषि उबारि लीन्हो हाथी को ॥

(४१६)

(२)

सुनि "कमलापति" विनीत बैन भारी तासु, आसु चलिबे की लखो, गति यों दराज की।
छोडि कमलासन, पिछौंड़ि[7] गरूड़ासनहूँ, कैसे मै बखानौ, दौर[8] दौरे मृगराज की।
जाय सरसी मे यों छुड़ाय गज ग्राह ही तैं, ठाढ़े आय तीर इमि सोभा महराज की।
पीत पट लै लै कै अँगोछत सरीर, कर कंजन तैं पोंछत भुसुण्ड[9] गजराज की ॥

(४१७)

१. मद. ४. हलचल. ७. पीछे छोड़ कर
२. अस्त्र. ५. मंथन करनेवाला. ८. चाल, गति.
३. कटी. ६. रक्षा करनेवाला. ९. शुण्ड.

वीर रस के अधिष्ठाता—इन्द्र.
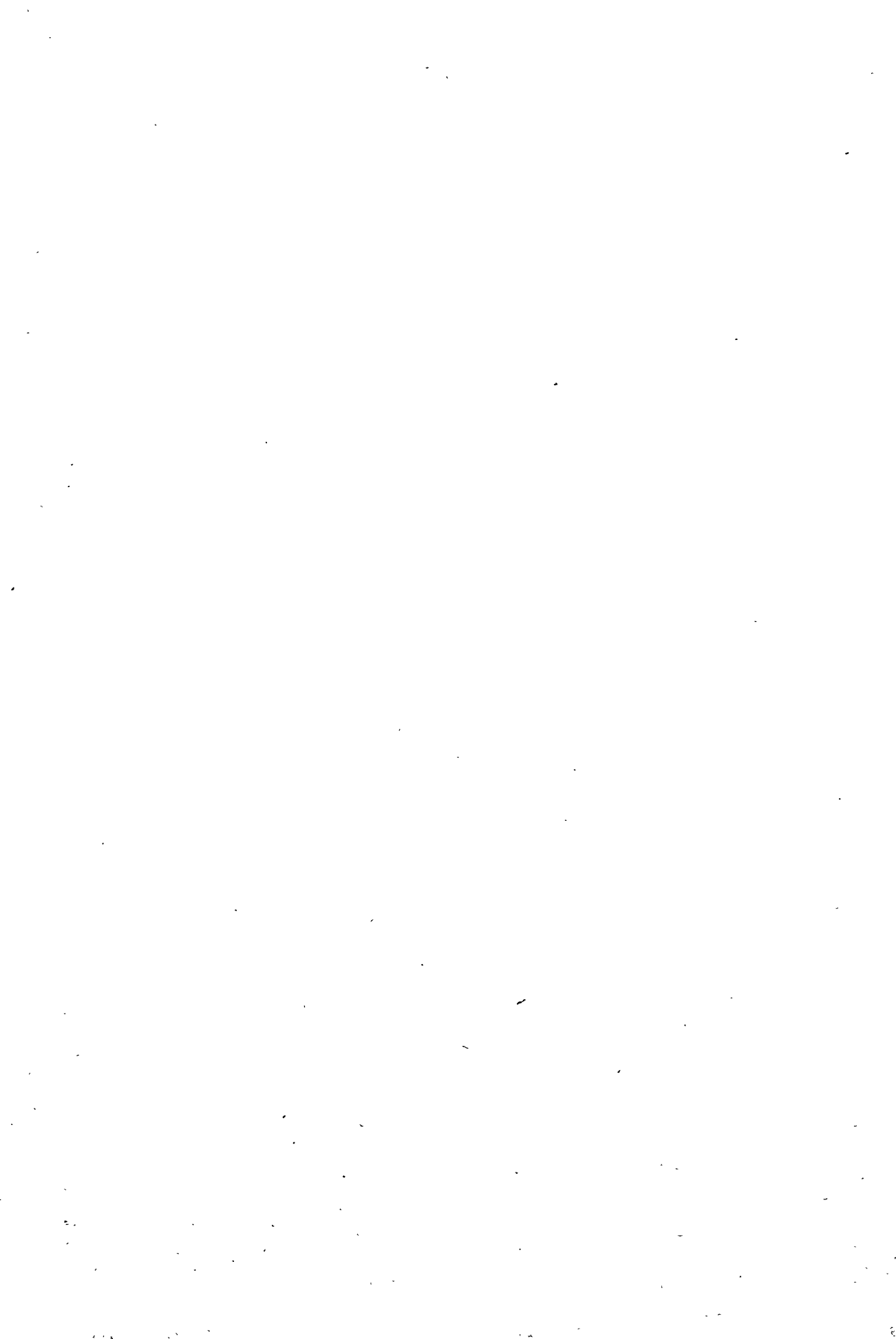
भयानक रस के अधिष्ठाता—यम.

३. दानवीर।

दानसामर्थ्यादिजनितोत्साह की परिपुष्टता को दानवीर कहते हैं. इसका आलम्बन याचक, उद्दीपन दानसमयज्ञान, तीर्थगमनादि, तथा अनुभाव सर्वस्वत्यागादिक हैं.

(यथा)

अच्छत दरभ[1] जुत तरल तरंगन सों को है तू, कहाँ तैं आई, रची ब्योंत[2] सारी के ?
सरिता हौं, सँकलप सलिल बढ़त आवै, महाराज छत्रसाल दान ब्रत धारी के।
एतो क्यों गुमान कीन्हों, मोहिँ न प्रनाम कीन्हो, लालत्यों अनखि बोली बोल भेदभारी के।
महादानि पानि तैं उपज मेरी जानि, गङ्गे! पावन तैं भई है तू बावन भिषारी के॥
(४१८)

(२)

गाजैं[3] उत, दुन्दुभी अवाज इत होत, सुर चाप उत, इतै पचरंग[4] परसतु हैं।
पौन पुरवाई उत, तरल तुरंग इत, मोर उतै, इतै ये नकीब सरसतु हैं।
चपला चमक उत, चन्द्रहास[5] छबि इत, उत घन, इतै ये गयन्द दरसतु हैं।
उत अवनी पै इन्द्र नीर बरसत, इत नृपति प्रताप हेम, हीर बरसतु हैं॥
(४१९)

भयानक।

इन्द्रिय विक्षोभ[6] सहित भय की परिपुष्टता को भयानकरस कहते हैं. इसका वर्ण श्याम, देवता यम, आलम्बन भयङ्कर दर्शन, उद्दीपन उसके घोर कर्म्म, तथा अनुभाव कम्पादिक हैं.

१. कुश.
२. सामान.
३. बादलों की गरज.
४. पँचरँगा पताका.
५. खड्ग विशेष.
६. कम्प.

(यथा)

कहलि[1] कोल[2] अरु कमठ[3], उठत दिग्गज दस दलि मलि।
धसकि धसकि महि[4] मसकि, जाति सहसफ्फ[5] फण दलि।
उथल पथल जल, थल, ससंक लङ्का गढ़ गल बल।
नभ मण्डल हलहलत, चलत ध्रुव[6], अतल[*], वितल[*], तल[*]।
टंकोर घोर घन प्रलय धुनि, सुनि सुमेरु गिरि गिरि गयो।
रघुवंस वीर जब तमकि[7] पग, धमकि धमकि धरि धनु लयो॥
(५००)

(२)

बधिर भयो भुवबलय[8], प्रलय जल धर जनु गर्जत।
विकल सकल दिगपाल, जटा ससिभाल[9] विसर्जत[10]।
थिर न होत दसकन्ध अन्ध, थर थर उर लर्जत।
उचकि चलत रवि रथ तुरंग बाहन विधि बर्जत।
ब्रह्माण्डगोल गयो डोलि, धुनि सुनि सुमेरु, अहि दलि मल्यो।
राजाधिराज अवधेश सुत चन्द्रचूड़[11] धरि धनु दल्यो॥
(५०१)

(३)

पौनपूत आगि को लगाय "भगवन्त" कवि, लगत न घाव काहू तुपक, न तीर को।
रातो भयो आसमान, तातो भयो भासमान, कारो पीरो नीर भयो नीरधि[12] के तीर को।
लङ्का लागी बरन, जरन रनवास[13] लाग्यो, व्याकुल ह्वै असुर धरै न रन धीर को।
सुरन को जाप[14] है, कि सीता को सराप है, कि रावन को पाप, कै प्रताप रघुवीर को॥
(५०२)

१. कराहकर.
२. शूकर.
३. कच्छप.
४. पृथ्वी.
५. शेषनाग.
६. तारा विशेष.
७. गर्व से.
८. भूगोल.
९. महादेव.
१०. छोड़ देते हैं.
११. महादेव.
१२. समुद्र.
१३. जनानखाना.
१४. प्रार्थना.
* लोक विशेष.
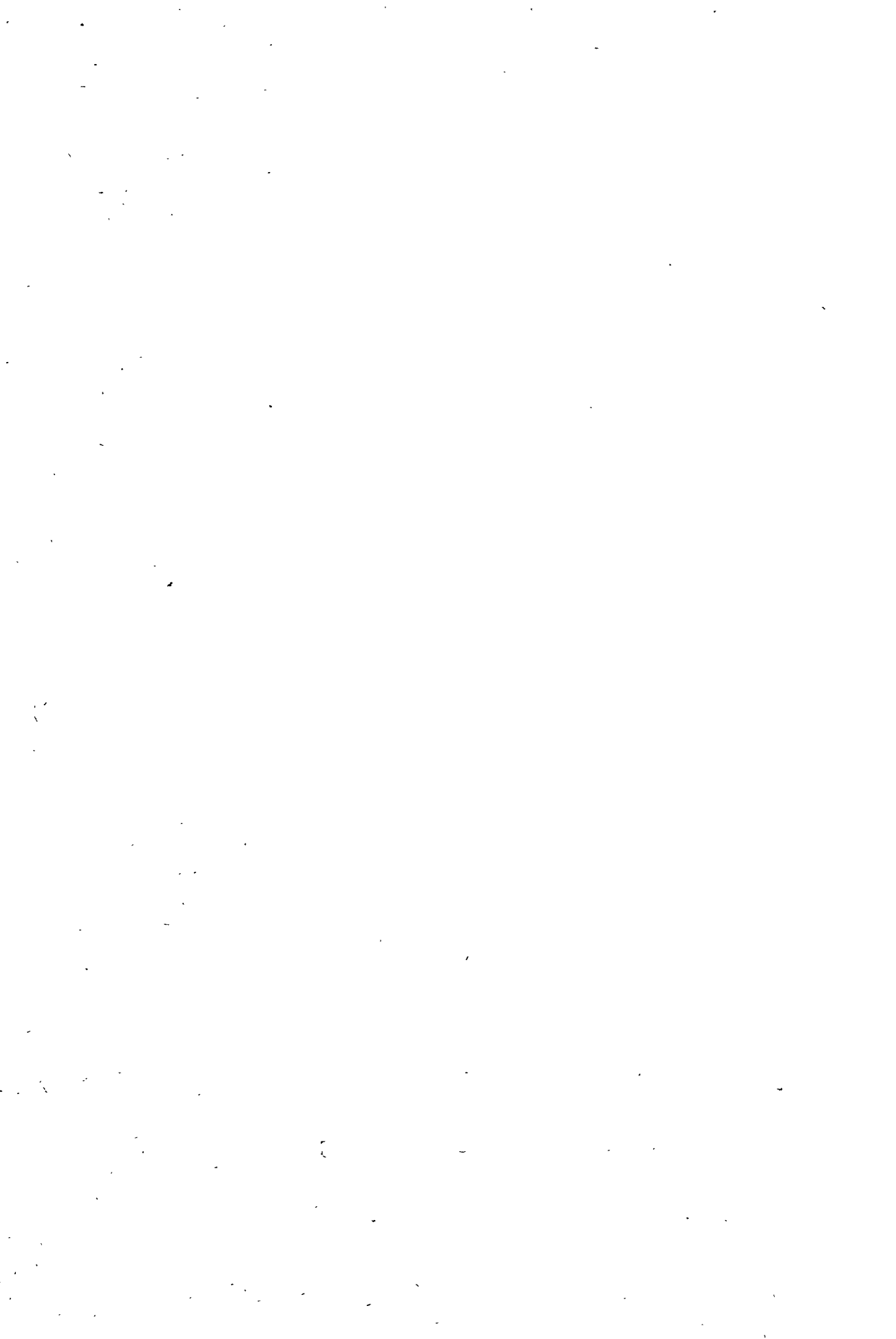
वीभत्स रस के अधिष्ठाता—महाकाल.

(४)

कोल कच्छ दबे, फेन फैलत फनी के मुख, धँसि गई धरा, धराधर उर धरके।
हरके रहे न भानु, भरके तुरंग कहूँ, भागि चले वाहन बिरंचि, हरि, हर के।
झम्पित गगन फुँकि, कम्पित भुवन, हलकम्पित दुवन, गुन खैंचे रघुबर के।
दन्ती[3] दबे आसन, सकाने पाकसासन[4], न कोऊ थिर आसन, सरासन[5] के करके॥
(५०३)

बीभत्स।

जुगुप्साजनितेन्द्रियसंकोचकारी रस को बीभत्स कहते हैं. इस्का वर्ण नील, देवता महाकाल, आलम्बन दुर्गन्धादि, उद्दीपन कृमिमक्षिकापतनादि, तथा अनुभाव कम्परोमाञ्चादिक हैं॥

(यथा)

समर अमेठी के सरोष गुरुदत्त सिंह सादत की सेना समसेरन तैं भानी[6] है।
भनत "कविन्द" काली हुलसी असीसन को, सीसन को ईस की जमाति सरसानी है।
तहाँ एक जोगिनी सुभट खोपरी लै, तामे सोनित पियति, ताकी उपमा बखानी है।
प्यालो लै चिनी को, छकी जोबन तरंग, मानो रंग हेतु पीवति मजीठ[7] मुगलानी है।
(५०४)

(२)

दाढ़ी के रखैयन की डाढ़ी[8] सी रहति छाती, बाढ़ी मरजाद गाढ़ी हद हिँदुवाने की।
कढ़ि गई रैयत के जिय की कसक, और मिटि गई ठसक[9] तमाम तुरकाने[10] की।
"भूषन" भनत, दिल्लीपति सो धकपकात[11] धाक[12] सुनि राजा छत्रसाल मरदाने की।
मोटी भई चण्डी[13] बिनचोटी[14] के दलनि खाय, खोटी भई सम्पति चगत्ता[15] के घराने की॥
(५०५)

१. ब्रह्मा. २. वृक्ष. ३. दिग्गज. ४. इन्द्र. ५. धनुष. ६. काटा. ७. औषध विशेष. ८. जलती. ९. गर्व. १०. मुसुलमानों. ११. डरता है. १२. प्रताप. १३. दुर्गा. १४. मुसलमान. १५. चगताई मुगल.

(३)

जुद्ध जाजऊ के बुद्ध ह्वै करि सक्रुद्ध उद्ध आजम के महाबीर काटि काढ़े ऊजा से।
कहै कवि "दूलह" समुद्र बढ़े सोनित के, जुग्गिनि परेते[1] फिरैं जम्बुक[2] अजूजा से।
एक लीन्हे सीस खाय, वेप ईस एकन को, एकन को उपमा निहारी मनुऊजा से।
अधफटे फैलि फैलि फर[3] मे बिराजैं, मानो मँथे[4] मेगलन के तरासे[5] तरबूजा से॥
(५०६)

(४)

सबन को जीत्यो सलहेरि को हुकुम सुनि, नर कहा, सुरन के सीने[6] धरकत हैं।
देवलोक हू गे मोगलनि की दलनि अजौं सरजा के सूरन के खग्ग खरकत हैं।
"भूपन" बखाने, भूरि भूतन के भौनन मे टँगे चन्द्रायतन[7] लोथैं[8] लरकत हैं।
क्रोधानल फेंटे, अध फारे फर लेटे, अजौं रुधिर लपेटे पठनेटे[9] फरकत हैं॥
(५०७)

अद्भुत।

अनिवार्य[10] विस्मय की परिपुष्टता को अद्भुतरस कहते हैं. इसका वर्ण पीत, देवता ब्रह्मा, आलम्बन असम्भावित बस्तु, उद्दीपन उसके गुणो की महिमा, तथा अनुभाव सम्भ्रमादिक हैं.

(यथा)

कंचन कलित, नग लालन वलित सौध[11], द्वारिका[12] ललित जाकी दीपति अपार है।
ता ऊपर वलभी[13] विचित्र अति ऊँची, जासों निपटै नजीक सुरपति को अगार[14] है।
"दास" जब जब जाय सजनी सयानी संग रुकमिनि रानी तहाँ करति बिहार है।
तब तब सची, सुर सुन्दरी निकर लै, कलप तरु फूलहिँ मिलत उपहार[15] है॥
(५०८)

१. भूत.	६. छाती.	११. महल.
२. सियार.	७. शिरोगृह, धुर ऊपर.	१२. स्थान विशेष.
३. रणक्षेत्र.	८. लाशें.	१३. बरामदा.
४. सिर.	९. पठानोंके युवक.	१४. घर.
५. काटा हुआ.	१०. बेरोक.	१५ नजूर.

अद्भुत रस के अधिष्ठाता—ब्रह्मा.
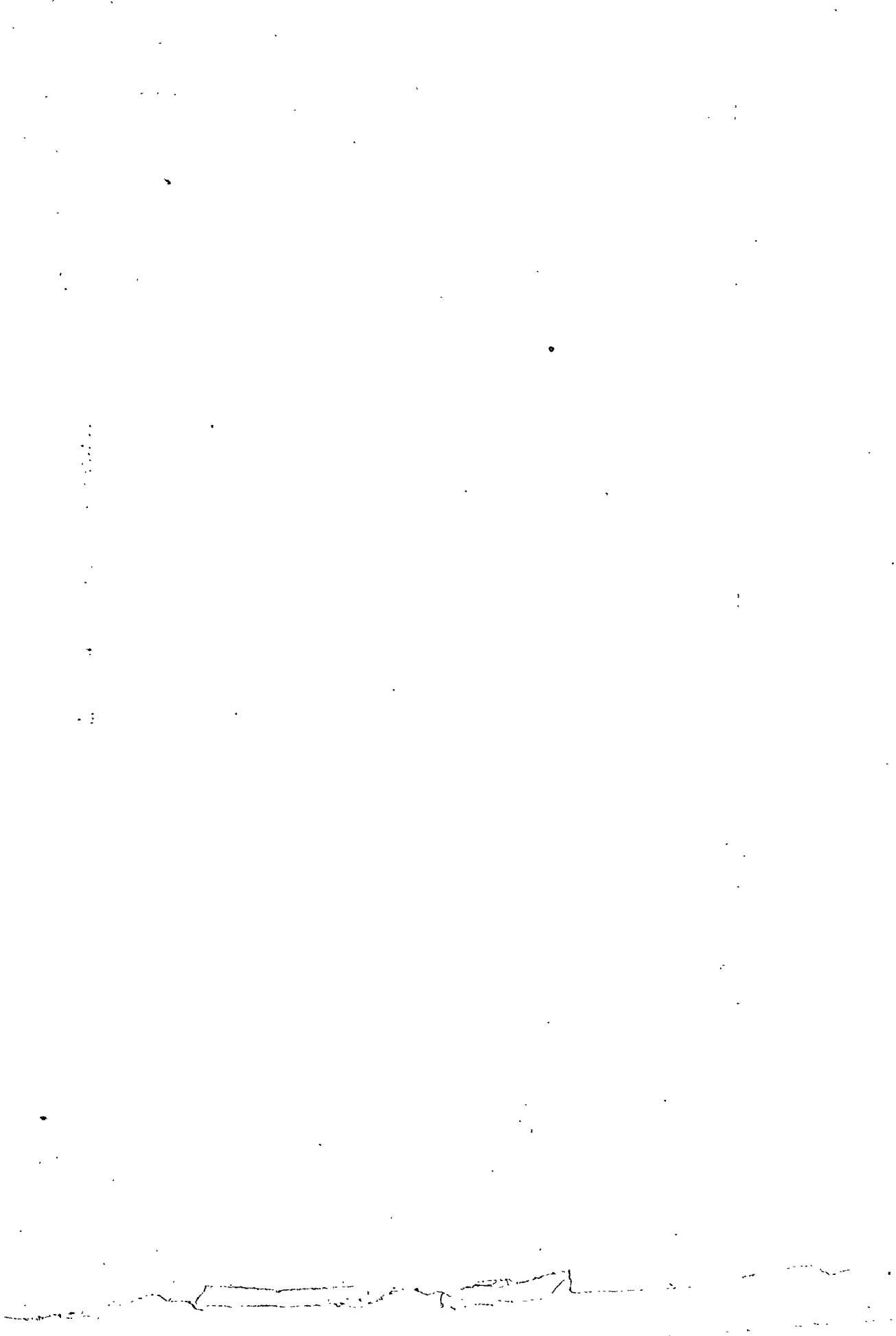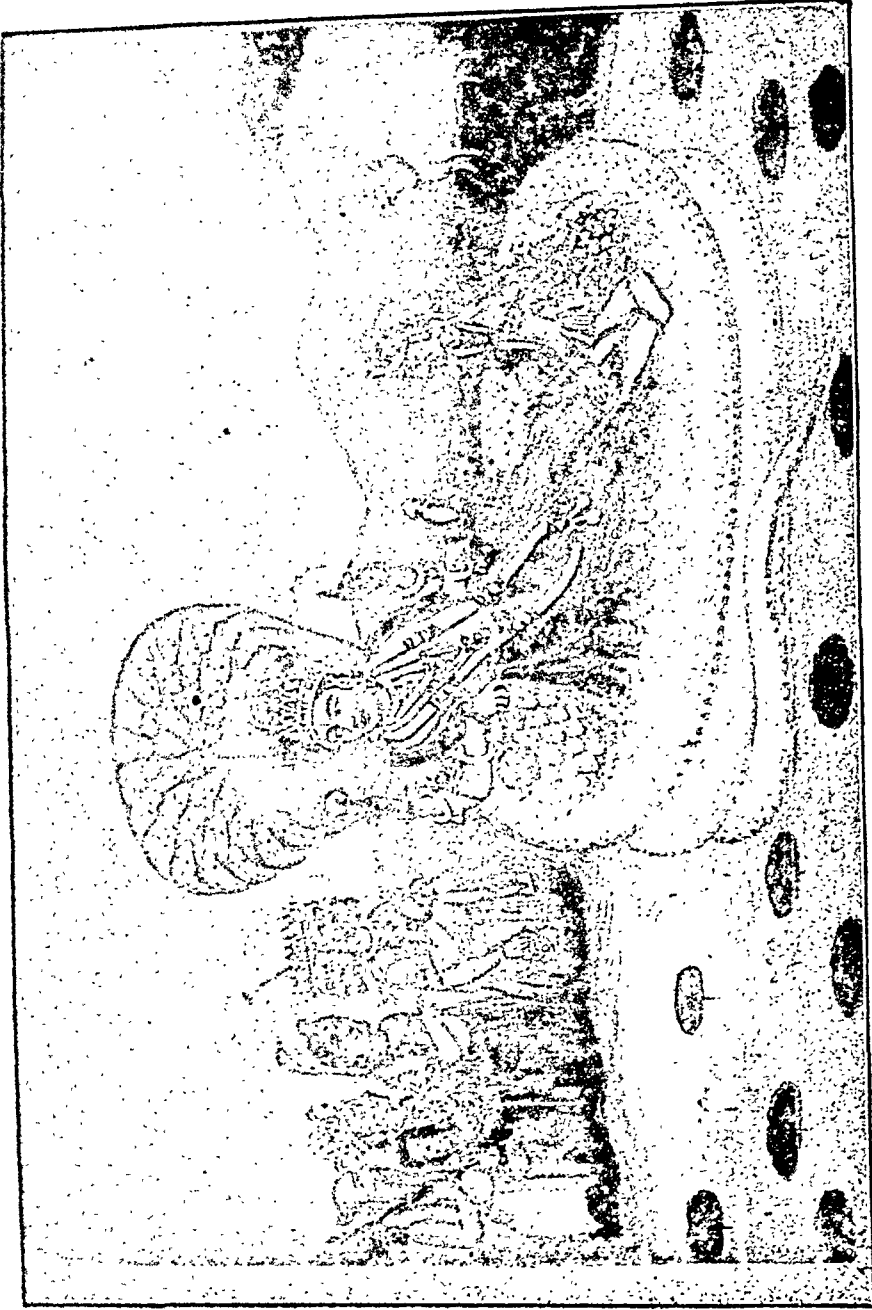
शान्त रस के अधिष्ठाता—नारायण.

शान्त।

कामक्रोधादिशमनपूर्वक निर्वेद की परिपुष्टता को शान्त रस कहते हैं. इसका वर्ण शुक्ल, देवता नारायण, आलम्बन संसार की अनित्यता, उद्दीपन सतसंग, योगक्रियादि, तथा अनुभाव रोमाञ्चादिक हैं.

(यथा)

तुम करतार ! जग रच्छा के करन हार, पूरत मनोरथ हौ सब चित चाहे के।
यह जिय जानि "सेनापति" हू सरन आयो, हूजियै दयाल, ताप मेटो दुख दाहे के।
जौ यों कहौ, तेरे हैं रे करम अनैसे[1], हम गाहक हैं सुकृति, भगति[2] रस लाहे के।
आपने करम करि उतरौंगो पार, तौ पै हम करतार, करतार तुम काहे के ॥
(५०९)

(२)

झूमत द्वार मतंग अनेक, जँजीर जरे, मद अम्बु[3] चुचाते[4]।
ताते[5] तुरंग मनोगति तैं अति पौन के गौन हू तैं बढ़ि जाते।
भीतर चन्दमुखी अवलोकित[6], बाहर भूप भरे न समाते।
एते भए, तौ कहा "तुलसी" जौ पै जानकीनाथ के रंग न राते ॥
(५१०)

(३)

बाहन छोड़िकै, दौरि कै पायन, चायन सो गज, ग्राह छोडायो।
दीन की लाज निबाहिबे को जिन द्रोपदी चीर हू जाय बढ़ायो।
और कहाँ लौं कहै "कमलापति" गीध को आपने धाम पठायो।
हाय ! बड़े अपसोस की बात, तैं ऐसे कृपानिधि को बिसरायो ॥
(५११)

१. खोटे.
२. भक्ति.
३. जल.
४. आर्द्रित.
५. तेज.
६. देखा गया.

रसप्रादुर्भाव ।

रस के प्रगट होने को उपाय केवल कविता मात्र है, चाहे उसकी कुशलता क्रियाद्वारा दरसाई जाय, वा वर्णन करके उसकी छटा लाई जाय. अतएव आचार्यों ने कविता के दो भेद रक्खे हैं, अर्थात् दृश्य[1] काव्य जो कि नाटक, परस्परसम्वाद, वा अभिनय[2]द्वारा दिखाई जाती है, दूसरी श्रव्य[3] काव्य जो कि गद्य[4] पद्य[5] रूप वर्णन द्वारा सुनाई जाती है ॥

१. दृश्य काव्य.

इसके उदाहरण मे, जब तक किसी नाटक का एक पूर्ण भाग न दिखाया जाय, हो नहीं सकता, अतएव यहाँ पर कतिपय[6] प्रसिद्ध नाटक, जैसे शकुन्तला, विक्रमोर्वशी, उत्तररामचरित्र, रत्नावली और मृच्छकटिक के नाम मात्र गिना दिये जाते हैं ॥

२. श्रव्य काव्य.

इसके भी पृथक्[7] उदाहरण देने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इसमे तो समस्त ग्रन्थ ही की कविता उदाहरण रूप है ॥

१. जो देखा जासकता है.
२. अंग विक्षेपादिसे भाव का प्रकाश.
३. जो सुना जासकता है.
४. छन्दप्रबन्धहीनकविता, नस्र.
५. छन्दप्रबन्धयुक्तकविता, नज़्म.
६. बाज़े.
७. अलग.

जगमगात जग जाहिर जासु कृपान।
दरसनसिंह महीपति सुअन[1] सुजान॥ (५१२)

भूपति मानसिंह कहँ सब जग जान।
द्विजबर तासु सुतासुत[2] अति अज्ञान॥ (५१३)

अवध, प्रताप नरायन सिंह, नरेस।
रस कुसुमाकर बिरच्यो ग्रन्थ सुबेस[3]॥ (५१४)

रसकुसुमाकर न्यास[4], माघ शुक्ल रवि पञ्चमी।
उनइस सौ उञ्चास, बिक्रमीय सम्वत सरस*॥ (५१५)

१. पुत्र.
२. दौहित्र.
३. सुन्दर.
४. रचना.

* अर्थात् सम्वत् १९४९ माघ शुक्ला बसन्त पञ्चमी रविवार को यह ग्रन्थ समाप्त हुआ॥

इति

रसकुसुमाकर

स्समाप्तः।

शब्दकोशः ।

(अ)

अकस. स्पर्द्धा.
अकस्मात्. अचांचक.
अकारण. बिना किसी हेतु के.
अकुलाइये. घबराइये.
अकृत्रिम. बेबनावट.
अकेठै. इकट्ठा.
अखंड. संपूर्ण.
अखंडल. संपूर्ण.
अखंडित. बिना टूटा हुआ.
अखारो. रंगभूमि.
अखिल. संपूर्ण.
अगर. सुगंधितद्रव्यविशेष.
अगाधा. अथाह, अमित.
अगार. घर.
अघ. पाप.
अघाय. तृप्त हो कर.
अचल. पर्व्वत, अटल, स्थिर.
अचला. पृथ्वी.
अचिरस्थाई. थोड़े दिन तक ठहरने वाली.
अचीते. अचान्चक.
अचेत. बेहोश.
अज. जन्म रहित.
अजगुति. आश्चर्य्य.
अजहूँ. अब भी.
अजाने. अज्ञान.
अटक्यो. अड़ा, ठहरा
अटा. अटारी.
अड़ति. रुकती है.
अतरसौं. इत्रसे ; चौथे दिन.
अतन. कामदेव.
अत्र. अस्त्र.
अतंक. भय.
अथवत. अस्त होते हैं.
अदली. न्यायी.
अदाह. ताप.
अदेह. कामदेव.
अद्वैतता. एकता.
अधम. दुष्ट.
अधराधर. ओठ.
अधार. आसरा, अवलम्ब.
अधिकत्व. बड़ाई, अधिकाई.
अधीन. अख्तियार.
अनखि. खफा होकर.
अनजोखे. बिना तौले.
अनत. अन्यत्र.
अनतै. विदेश.
अनन्त. विष्णु भगवान्.
अनगन. अनगिन्त, बेशुमार.
अनल. अग्नि.
अनहोनी. असम्भव.
अनाकनी. टालबाल.
अनादर. बेखातिरी.
अनादि. जिसका शुरू न हो.
अनातप. छाँह.
अनार. फलवृक्षविशेष.
अनिच्छा. अघान, ऊब.
अनित्यता. अध्रुवता, जो हमेशा न रह सके.

अनियारी. प्रयानता.
अनियारे. कटीले.
अनिर्वचनीय. जो कहा न जा सके.
अनिल. वायु.
अनिवार्य्य. बेरोक.
अनिष्ट. अनभल.
अनीठि. अनिष्ट, खोटा.
अनीति. बेइनसाफी, अंधेर.
अनीन. समूह.
अनीस. अनाथ.
अनुकूली. मुआफिक.
अनुकूले. मुआफिक.
अनुक्रमणिका. सिलसिलेवार तरतीब.
अनुपयुक्त. बेढब.
अनुपस्थिति. गैरहाजिरी.
अनुमान. अन्दाज.
अनुरक्त. प्रेमी.
अनुराग. प्रीति, प्रेम.
अनुसारि. आरम्भ.
अनुसारे. लेने से.
अनूप. उपमारहित.
अनूपम. बेमिस्ल, अनूठा.
अनेस. अन्देशा.
अनैसी. अन्याय.
अनैसे. खोटे.
अनैसो. बुरा.
अनोखे. उत्तम.
अनंग. कामदेव.
अनंत. नाना.
अन्यारी. कटीली.
अपत. पत्ररहित.
अपनाय. अपना स्नेही बनाकर.
अपमानादि. निरादर वगैरह.
अपरमित. जिसकी हद नहीं.
अपराध. कसूर.
अपार. अनेक.
अपीच. और भी.

अपूर्व. विलक्षण.
अपेक्षा. बनिस्बत.
अबला. स्त्री.
अबाती. आनेवाली.
अबाधा. निर्विघ्न.
अबारन. देर नहीं, जल्दी.
अविनाशी. विनाशरहित
अबीर. गुलाल.
अभिबन्दन. स्तुति.
अभिप्राय. मतलब.
अभिराम. हर्ष से.
अभीरिन. अहिरिन.
अभूत. आगे जैसा नहीं था, नवीन.
अमल. साफ.
अमान, बेहद, असह्य.
अमित. बेहद.
अमी. अमृत.
अमेजें. मेल.
अमेली. अनभिज्ञ. अयुक्त.
अमोलनि. अमूल्य.
अमोही. निरदई.
अयानप. अज्ञानता.
अयानी. अज्ञान स्त्री.
अरज. विन्ती.
अरजी. विनय पत्री.
अरप. अर्पण, ज्ञान.
अरपन. उपहार, नज्र, भेट.
अरविन्द. कमल.
अरसि. आलस्ययुक्त.
अरसीली. दरपन के मुआफिक.
अरसे. अटकने लगे.
अराम. सुख.
अराल. कुटिल. घुघराले.
अरिन. दुश्मन के.
अरिहा. शत्रुघ्न.
अरुझानी. फसानेवाली.
अरें. अड़ते हैं.

अलकैं. बाल, केश.
अलबेली. बाँकी.
अलबेले. अनूठे.
अलि. भौंरा.
अलीन. भौंरा.
अल्लैं. चिल्लाना.
अवगाहे. स्नान.
अवतार. उत्पत्ति.
अवदात. शुक्ल.
अवधारी. धारण किया.
अवधि. वायदा.
अवनि. पृथ्वी,
अवरेखि. अगोर रहा.
अवरोध. रुकावट.
अवली. समूह,पंक्ति.
अवलीन. समूह.
अवलोकि. देखकर.
अवलोकित. देखा गया.
अवसर. मौका.
अवसान. अन्त.
अवासो अवाई.
अवांतरभेद. भेदों के भेद.
अविचारित. बिना सोचा हुआ.
असत. बुरा.
असमंजस. द्विविधा.
असहन. न सह सकना.
असाधारणचिन्हयुत. खास निशानको रखता हुआ.
असित. काला.
असोक. वृक्ष विशेष; शोक को दूरकरने वाला.
अश्लील. असभ्य.
असंतुष्टि. अतृप्ति, बेआसूदगी.
असंभावित. अनहोनी.
अस्थिरता. चंचलता
अस्वास्थ्य. बीमारी.
अहंकार. अभिमान.
अहेरी. शिकारी.
अंक. गोद.
अंकुर. अँखुआ.
अंकुरित. अँखुआ जमा हुआ.
अंग. जुज़
अंगद. बालि वानर का पुत्र.
अंगराग. सुगन्धित उबटन.
अँगारो. जलता हुआ कोइला.
अँगोछन. रुमाल.
अँगोछि. पोंछकर.
अँचरा. अंचल.
अँचै. पीकर.
अंजली. अंजुरी.
अँजाए. अंजन लगाए.
अंत. मृत्यु.
अंतर. फ़रक, बीच.
अंतर्गत. शामिल.
अंतधाई. कपटी.
अंत्रि. अँतड़ी.
अँधाधुँधी. अतिशय
अंधेरे. शून्य.
अंब. आम का वृक्ष ; माता.
अंबर. वस्त्र ; आकाश.
अंबु. जल.
अंबुज. कमल.
अंसुमाली. सूर्य्य.

(आ)

आकांक्षा. इच्छा, ख्वाहिश.
आखर. अक्षर, लव्ज़.
आखरौ. अक्षर भी.
आखिर. अन्त को.
आगरी. श्रेष्ठ, राशि.
आगि. अग्नि कोण.
आचार्य्यों शास्त्रकारों.
आछत. बिना नाश हुए.
आजम. पुरुष विशेष.
आड़. बेंड़ा तिलक.
आड्यो. रोका.

आतप. धूप.
आतुर. व्याकुल.
आतुरी. व्याकुलता.
आधि. चित्त की व्यथा.
आधेनैननि. कनखियों से.
आनन. मुख.
आनबान. सजधज.
आनि. तौर पर.
आनै. दूसरी ही कुछ.
आपनपौ. ममत्व.
आब. जल.
आबनूस. काले काठ का एक वृक्ष.
आभा. शोभा.
आमिनियाँ. आम के वृक्ष.
आयस. } आज्ञा, हुकुम.
आयसु. }
आयुध. शस्त्र, हथियार.
आरत. दुखी.
आरती. मंगल दीपक सन्मुख भ्रमण कराना.
आरस. आलस.
आरी. तरफ़.
आरोपित. दूसरे के रंग रूप का धारण करना.
आर्द्रता. दया.
आली. सखी.
आले. उत्तम.
आश्रय. सहारा.
आसरो. आसा
आहट. आरव, आवाज़.
आह्लाद. आनन्द.
आँक. अङ्क.
आँचन. ताप.
आँजे. कज्जल लगाये हुए.

(इ)

इतरान. इठलात.
इंतिज़ाम. इन्तिज़ाम, प्रबन्ध.
इतो. इतना.
इन्दिरा. लक्ष्मी.
इन्दीवर. कमल.
इन्दुमती. महाराज अज की पत्नी.
इन्द्रनील. पन्ना.
इन्द्रवधू. बीरवहूटी कृमि.
इलाजैं. दवाइयाँ.
इष्टहानि. हित का नाश.

(ई)

ईछन. नेत्र.
ईठि. इष्ट, अभिवांछित वस्तु.
ईर्षा. डाह, हसद.
ईषद. थोड़ा.
ईस. स्वामी.
ईसन. महादेव.

(उ)

उकति. तान, बोल.
उकसनि. ददोरा.
उघरि. खुल.
उचकि. उझकि, कूदना.
उचाट. घबराहट.
उचौहैं. ऊँचे.
उछलै. उछली पड़ती है.
उछाह. हौसला.
उजराई. सफ़ाई, उज्वलता.
उज्वल. उजरा, साफ़.
उड्यारी. नाश की जाती.
उड्यारै. जलाकर उजला करती है.
उड़ायक. उड़ानेवाला.
उतपात. उपद्रव.
उतायल. जल्दी.
उतारिहौं. दूर करूंगी.
उताल. जल्दी.
उत्कर्षता. बढ़ती.
उत्तंग. ऊँचे.
उत्थित. खड़ा होना.
उथपथप. अस्तव्यस्त, उथल पथल.

उथलपथल हलचल.
उदधि. समुद्र.
उदार. फ़ैय्याज़.
उदासीनतावलंबन. उदास होना.
उदित. उदय होनेवाली.
उद्ध. उद्धत.
उद्धत. ऊँचे.
उनमत्त. मतवाला.
उनमाथी. मंथन करनेवाला.
उनीदे. आलस्य भरे.
उनै. नम्र हो जाती.
उपटी. छाप.
उपजी करति. पैदा करती है.
उपमा. तश्बीह, मिसाल.
उपमान. जिसकी मिसाल दी जाती है.
उपयुक्त. ठीक, वाजिब.
उपयोगी. मददगार, सहायक.
उपहार. नज़्र.
उपहास. हँसी.
उपायो. रचा.
उपालम्भ. उलाहना, झिड़कियाँ.
उफनाई. उबल कर.
उमगति. इच्छा करती है.
उमंडि. छाई हुई.
उमाची. उत्पन्न हुई.
उमारमण. महादेव.
उमाहन. उमंग.
उमाहैं. उमंग.
उमेड़ो. मरोर.
उर. हृदय.
उरगन. तारागण.
उरज. स्तन.
उरझत. फसते हैं.
उरोज. स्तन.
उससति. खिसकती जाती है.
उससी. ऊँची साँस भरती है.
उसासी. साँस.
उसीरन. खसखस.
उहँाती. खिसकाया, टरकाया.

(ऊ)

ऊकन. निकलने लगी.
ऊखन. इक्षुदण्ड.
ऊजरी. उजली, साफ़.
ऊजा. वेग से.
ऊतरु. जवाब.
ऊधम. उपद्रव.
ऊधमिनि. उपद्रवी.
ऊनो छोटा.
ऊब. घबराहट.
ऊबरी. छुटी, बची.
ऊबि. घबराकर.
ऊरध. ऊपर.
ऊष्म. गरमी.

(ऋ)

ऋतुराज. वसन्त.

(ए)

एकविंशति. इक्कीस.
एकत्र. एक जगह, एकट्ठा.
एकंत. अकेले.
एतीयै. इतनाही.
एनी. मृगी.
एला. इलायची.

(ऐ)

ऐंचि. खींचाखींची.
ऐंड़. गुरूर, गर्व्व.
ऐंड़ो. ऐंठा.

(ओ)

ओखे. सूखे.
ओछे छोटे.
ओजित. बलवान.
ओटन. आड़

ओढनी. कमर से सिर तक ढाँकने का वस्त्र.
ओढ़ाय. ढाँक कर.
ओदर. उदर, पेट.
ओप. शोभा.
ओबरीन. भुइनसा.
ओरी. ओला, वनौरी.

(औ)

औझकि. एकाएक.
औंढ़ा. उमड़ी हुई.
औधवारी. अवध की रहनेवाली.
औधि. वायदे की मियाद.
और. विलक्षण.
औषधीश. चन्द्रमा.

(क)

ककना. आभूषण विशेष.
कच. केश, बाल.
कचनार. वृक्ष विशेष.
कचराती. थोड़ी खिलती हुई
कचूर. औषधि विशेष.
कछारन. नदी का किनारा.
कच्छप. कछुहा.
कजरारी. कज्जलयुक्त.
कज्जल. काजल.
कटक. समूह.
कटा. नाश.
कटाक्ष. तिरछी चितवनि.
कटि. कमर.
कटीली. काटों से भरी.
कटुवादिनी. कड़ुआ बोलनेवाली.
कटुभाषण. कड़ुई बोल.
कढ़ै. निकलने.
कत. क्यों.
कतल. मारे गये.
कतलबाज. मारनेवाला.
कदम्ब. समूह.
कदम्बनि. वृक्ष विशेष.
कदम्बिनि. मेघमाला.
कदली. केले का वृक्ष.
कन. कना.
कनक. सोना.
कनिका. टुकड़ा.
कनखिन. आँखों के कोर से देखना.
कनौड़ी. निन्दित, लज्जित.
कपटी. दगाबाज़.
कपाट. केवाड़.
कपि. वानर.
कपोत. कबूतर पक्षी.
कपोतचित्रित. कबूतर सा कबरा.
कपोलों. गालों, रुखसारों.
कबिन्द्र. अच्छे कवि.
कबूल्यो. अङ्गीकार किया.
कमठ. कच्छप.
कमनीय. सुन्दर.
कमनैत. धनुर्धर.
कमनैती. धनुर्विद्या.
कमबूल. कम उमर.
कम्मर. कटि.
कर. हाथ, कार्य्यकारी.
करकाय. कड़का कर.
करकि. टूटकर.
करकै. लचकती है.
करखान. उत्तेजक वचन.
करता. ब्रह्मा.
करतार. परमेश्वर.
करतूती. करनी, काररवाई.
करद. करौली, शस्त्र विशेष.
करनि. किरण.
करवीर. कनैल वृक्ष.
कर्म्मज. कर्म्मजनित.
करषि. खींच कर.
करसायल. मृग.
करहाट. कमल की जड़.
कराल. भयंकर.
कराहति. दुःखसूचक मंद शब्द करती है.

करी. कड़ी.
करील. वृक्षविशेष.
करुना. वृक्ष विशेष; दया.
करुनाकर. दयानिधि.
करेजे. कलेजा.
करौट. करवट.
कल. आराम, चैन, सुन्दर.
कलकल. चँहकार.
कलकै. सुबीते से.
कलधौत. सुवर्ण, सोना.
कलप. ब्रह्मा का दिन.
कलपतरु. देव वृक्ष.
कलपद्रुम. कल्प वृक्ष.
कलपायी. दुखित किया.
कलस. घड़ा.
कला. खंड, षोडशांश.
कलाद. सोनार.
कलानिधि. चन्द्रमा.
कलापिनि. मुरैली.
कलापी. मयूर, मुरैला.
कलाम. निवेदन.
कलिका. फूलकी कली.
कलित. धारण किये हुए, गूँजता हुआ.
कलिन्दिजा. यमुना नदी.
कलोलनि. क्रीड़ा.
कलंक. अपयश.
कल्लन. नव पल्लव, गोंफा.
कसकति. सालती है.
कसकी. दरकी.
कसति. बाँधती जाती है.
कसनि. कंचुकी के बन्द.
कसौटी. सोना परखनेका पत्थर, निकष पाषाण.
कह. कहां, बहुत अन्तर.
कहकही. हँसी, अनुकरण शब्द.
कहरत. व्याकुल होता.
कहल. दुःख, वैकल्य.
कहलि. कराह कर.
कहा. बहुत अन्तर है.

कहावत. मसला, मिसाल.
कहीजत. कहते हैं.
कंकन. हाथ का एक गहना.
कंचन. कुन्दन.
कंचुकी. चोली, अङ्गिया.
कंज. कमल.
कंटक. कांट.
कंटकित. रोमाञ्चित.
कंठ. गला.
कंत. स्वामी, पति.
कंद. मूल, जड़.
कँदूरी. पशु विशेष.
कंधा. बहेलिये का कांपा.
कंबु. शंख.
काकपच्छ. जुल्फ.
काकलीन. कोइल का शब्द.
काको. किसका.
कार्ती. छोटी तलवार.
कादर. भयभीत.
कानन. जंगल, कानों से.
कानि. लज्जा, निरादर.
कामकामिनी. रति.
कामना. इच्छा.
कामरिया. कम्बल.
कामिनी. स्त्री.
कारी. काली.
कारीगर. क्रियापटु, कारसाज़.
काल. कल, विगतदिवस.
कालिमा. स्याही. कलक.
कालिन्दी. यमुना नदी.
काली. सर्प विशेष, दुर्गा देवी.
काशीश. काशी के अधिष्ठाता.
काहिल. सुस्त.
काहू. किसीने.
कांकरी. सिटकी, कंकड़ी.
कांची. अनुचित.
कांधर. कृष्णचन्द्र.

कित कहां.
कितिक. कितना.
कितीन. कितनी.
किन. क्यों नहीं.
किनाने. बिकाने.
किनारी. गोटा.
किरचैं. तलवार, टुकड़े.
किरवान. तलवार, कृपान.
किरीट. एक प्रकार का मुकुट.
कियारी. फूल लगाने के गाढे.
किसलय. पल्लव.
किसोरी. थोड़ी उमर की लड़की.
किंकिनीन. सशब्द करधनी.
किंचित ज़रा.
किंसुक. पलास के फूल
कीकरति. चिल्लाउठती, अनुकरण शब्द.
कीच. चहला, कीचड़.
कीचो. करना.
कीर. सुग्गा.
कीर्ति. यश.
कुच. स्तन.
कुचाली. बद चलन.
कुटिल. टेढ़ी.
कुटी. कुटिया, झोपड़ी.
कुटुम. परिवार.
कुढंग. कुचाल.
कुढ़ि. खफ़ा. अफ़सोस.
कुदिन. खोटे दिन, दुर्भाग्य.
कुपित. ख़फ़ा.
कुवलय. नील कमल.
कुबानि. कुचाल, बुरी आदत.
कुमक. मदद.
कुमोदिनी. कुंई का फूल, कोकाबेली.
कुम्भ. कलश.
कुरकुट. मुर्गा
कुरंग. मृग, हरिन.
कुरैं. रासलगाना.

कुल. वंश.
कुलकानि. कुलकी लाज.
कुलकानिनि. कुलांगना, लज्जावती.
कुसुम. पुष्प, पुष्प विशेष.
कुसुमसर. काम.
कुसुमित. फूली हुई.
कुसुम्भ. बर्रे का फूल.
कुही. कोकिल का अनुकरण शब्द.
कुहुकवान. शब्द करता हुआ बाण.
कुहू. कोकिल का अनुकरण शब्द.
कुञ्जर. हाथी.
कुण्ड. खाना. गड्हा.
कुण्डल. कर्ण भूषण विशेष.
कुण्डलित. गेड़ुरियाया हुआ.
कुन्त. बरछी.
कुन्दन. शुद्ध सुवर्ण पत्र.
कूजनि. शब्द.
कूर. दुष्ट.
कूरम. कछुआ; देश विशेष.
कूल. किनारा.
कृत्रिम. बनौआ.
कृपाल. दयावान.
कृमिमक्षिकापतन. कीड़े मकोड़े और मच्छियों का गिरना।
कृश. दुबला.
कृसानु. अग्नि.
कृसोदरि. पतली कमर वाली.
केकिन. मयूर.
केतकी. कितनी, पुष्प विशेष.
केल. केला वृक्ष.
केलि. क्रीडा.
केसरीकिसोर. सिंह का बच्चा.
केहर. सिंह.
कैरव. कूँईबेरा.
कोक. चकई चकवा पक्षी, काम शास्त्र.
कोकिल. कोइल पक्षी.
कोटिक. करोड़ों.
कोठरी. कमरा.

कोतवाल. प्रधान नगररक्षक.
कोप. कली और क्रोध.
कोमल. मुलायम.
कोर. कोना.
कोर कोर. टुकड़ा टुकड़ा.
कोरि कोरि. कोटि कोटि.
कोरी. स्पर्श नहीं हुई.
कोरै गोरमे.
कोल. शूकर.
कोलाहल. शोर.
कोस. गिलाफ, दो मील.
कोह. क्रोध.
कौड़ी. निन्दित.
कौतुकार्थ. दिल्लगी के लिये.
कौनै. किसने.
कौमुदी. चाँदनी.
कौसिक. विश्वामित्र.
कौंधा. बिजली की चमक.
कौंल. कमल.
क्रम. सिलसिला.
क्रुद्ध. खफा.
क्षोभ. चंचलता.

(ख)

खग. पक्षी.
खग्ग. तलवार.
खचित. स्थित.
खनक. खनकार, अनुकरण शब्द.
खवीस. भूत, प्रेत.
खर. तृण, तिनके.
खरक. फैंच, खटका.
खरकत. आवाज़ आती.
खरकति. खटकती है.
खराद. भ्रमी यंत्र.
खरिके. गौओं के एकत्र होने का स्थान.
खरो. सच्चा.
खरौट. निछरौर.
खसि. गिरकर.
खंजन. खँडरिच पक्षी.
खंडन. काटना.
खंडि. तोड़कर.
खंडिन. वाग.
खंडे. काटै.
खात. हौज़.
खान. खाना, भोजन.
खाम. बन्द लिफाफा.
खिन. क्षण में, कभी तो.
खिरकी. दरीची.
खिसी. खिसकढ़ी.
खीन. पतली.
खीझति. खफा होती है.
खुसबोय. सुगन्ध.
खूंदन. विकलता.
खेद. दुःख.
खोज. पता.
खोरिन. गली.
खौर. तिलक.
ख्याति. तारीफ, नामवरी.
ख्याल. क्रीड़ा, दिल्लगी.

(ग)

गई. ठहर.
गगन. आकाश.
गड़इ. धंसाय.
गड़ी. धँसी.
गढ़. किला, दुर्ग.
गढ़ै. बनाने लगी.
गति. दशा, चलने की शक्ति.
गत्यवरोध. गति का रुकना.
गन. समूह.
गनि. सुनकर.
गयन्द. गजेन्द्र, मस्त हाथी.
गर. गला.
गरक. डूबा.
गरजी. अर्थी.

गरद. शिथिल.
गरसि. खींचे हुए, डरे हुए.
गर्व. अभिमान.
गर्बीले. गर्व से भरे.
गरुवी. गंभीरता.
गरें. गले में.
गलबल. घबराहट, हलचल.
गवाइयेना. नाश न करिये.
गहगही. बिलकुल खिलना.
गहती. पकड़ती.
गहन, ऊँचे स्वर से.
गहने. पकड़ने, सघन.
गहवरे. गदगद.
गहरत. मन्द मन्द.
गहि. पकड़ कर.
गही. पकड़ी.
गहीरिन. गहिरा, गूढ़.
गसी. धंसी.
गंभीरें. जोर से.
गागरि. घड़ा.
गाज. वज्र.
गाजें. वज्र.
गात. शरीर.
गारयो. क्षीण किया.
गाल मारि. सीट, डींग.
गांठि. ग्रंथि, कसक.
गिरिधारी. पर्वत उठाने वाला, कृष्णचन्द्र.
गीध. पक्षी विशेष.
गुच्छ. गुच्छा, झपसा.
गुड़ी. कनकव्वा, पतंग.
गुणानुवाद. गुणकथन.
गुन. सिफत, रोदा.
गुनागरी. गुण में श्रेष्ठ.
गुनाह. कसूर.
गुनियत. अनुमान होता है.
गुन्यो. सोच, ख्याल.
गुप्तपरपुरुषानुरागिनी. दूसरे पुरुष से छिप के प्रेम करने वाली.

गुमर. कानाफुसी.
गुमान. मान, खफगी.
गुरुनारी. घरकी बड़ी बुढ़िया.
गुरुलोगनि. बड़े लोग.
गुरुज. गदा.
गुल. फूल.
गुलाल. अबीर.
गुलाला. पोस्त का लाल फूल.
गुलुफ. एड़ी के ऊपर की गांठ.
गुवालरियां. ग्वाल लोग का.
गुहारि. मदद.
गुञ्ज. घुमची.
गुञ्जमाल. घुमची की माला.
गूजरी. अहिरिन, ग्वालिन.
गूंथे. गुहे.
गैलै. राहैं.
गोए. छिपाये.
गोधन. गौओं का सम्पत्ति.
गोपन. छिपाना.
गोरस. दही, दूध.
गोराधार. मुशलधार.
गोरी. नायिका.
गौन. गमन.
गौरव. गाम्भीर्य्य.
ग्रसी. घिरी.
ग्राम. गांव.
ग्राह. मकर, घड़ियाल.
ग्रीषम. गरमी, ऋतुविशेष.
ग्रीवाँ. गला.
गवारि. गवार, अहीरिन.

(घ)

घटी. जलघड़ी का कटोरा.
घटै. कमहोना.
घन. सघन गझिन.
घनकार. अनुकरण शब्द.
घनसारन. कपूर.

घनस्याम. कृष्णचन्द्र, काला बादल.
घनेरी. बहुत.
घमंड. गुरूर से भरे.
घरहाँई. घरफोड़नी.
घरीक. थोड़ीदेर.
घरीसी भरै. दमचल रहा है, खटका लग रहाहै.
घरयार. घड़ियाल; बजाने का घंटा.
घहरि २. गरज २ कर.
घंटावली. घंटों की पंक्ति.
घात. नाश.
घातक. नाश करनेवाला.
घाते. मौके से.
घानै. घन की घाव.
घाम. धूप.
घायँ. घाव, चोट.
घायँ. तरफ.
घाली. रक्खा, नाश करनेवाली.
घँघरे. एक प्रकार का लँहगा.
घिन. घिना, नफ़रत.
घिनाने. नफ़रत किया.
घिसै. रगड़ती, पीसती है.
घोर. भयंकर.
घोरिगो. मिला गया, घोल गया.
घोरैं. मिलाता है.
घोस. शब्द.

(च)

चकचूर. नष्ट, निष्फल.
चकचौंधा. आँख तिलमिलानेवाली.
चकि. चौकन्ना.
चकित. चौकन्ना.
चकृत. चकराया हुआ.
चक्र. चकई चकवा पत्ती.
चक्रवती. चकई, और चक्रवर्त्ती राजा.
चक्षुकृत. आँख से बना हुआ.
चख. आँख, चक्षु.
चटकदार. चमकनेवाली.
चटकाली. गौरैया पत्ती का झुण्ड.
चढ़ी. तेज़ हुई.
चढ़ाइयै. अर्पण करैं.
चपका. छिपटाकर.
चपल. चंचल.
चपलाई. तेज़ी, तिग्मता.
चपि. दबकर.
चमन. पुष्पवाटिका.
चमत्कृत. विलक्षण.
चरचत. चंदनादि चढ़ाते हैं.
चरजि. बहंकागई.
चरजनि. बहकाना.
चरणपतन. पैर पर गिरना.
चरन. पैर के तलवे.
चरित्र. लीला, काम.
चल. चंचल.
चलचित. चंचल मन वाला.
चलाचल. हलचल.
चलु. फरक.
चवाव. चुग़ली.
चवैया. चुग़ली करने वाली स्त्रियाँ.
चहचही. चिड़ियों का शब्द, अनुकरणशब्द.
चहति. चाहती हूँ.
चहल पहल. गुलज़ार, सुशोभित.
चहुँघाई. चारो तरफ़.
चंगुल. पंजा.
चंचला. बिजली.
चंडकर. सूर्य्य.
चंडी दुर्गा.
चंद्रकला. राधिका की सहेली.
चंद्रचूड़ महादेव.
चंद्रबान. ऐसा बाण जिस्का मुख अर्धचंद्र सा हो.
चंद्रभाल. शिव.
चंद्रमाललाट. शिव, महादेव.
चंद्रहास. खड्ग विशेष.
चंद्रायतन. शिरोगृह, धुर ऊपर.
चंद्रिका. चाँदनी.

चंदोआ. वितान.
चाखो. स्वाद लो.
चातक. पपीहा.
चाप. धन्वा.
चाव. चाव, चाह.
चामीकर. सुवर्ण.
चारन. बन्दीजन.
चारिदस. चौदह.
चारी. चुगली.
चारु. सुन्दर.
चारुता. सुन्दरता.
चारुमति. अच्छी बुद्धिवाली.
चालि. चाल, गति.
चाली. व्यतीत हुई.
चालो. द्विरागमन, गौना.
चाय. इच्छा.
चाह. प्रीति.
चाहि. देखकर.
चाह्यो. देखा.
चांदनी. चंद्रिका, फर्श.
चांपत. दबाती है.
चिकनाई. शृङ्गार, सौन्दर्य्य.
चितवन. देखने का ढब.
चिता. मुर्दा जलाने का काठ, चीव.
चित्र. तस्वीर.
चितेरी. चित्र खींचनेवाली.
चित्ररेखा. अप्सरा विशेष.
चित्रसारी. वह कमरा जिसमें तस्वीरें लगी हों.
चिनगीयें. आग की चिनगारी, अग्निकण.
चिरजीवो. बहुत दिन तक जीओ.
चिन्ह. निशानी.
चिन्तामणि. मणि विशेष.
चीते. व्याघ्र विशेष.
चीन्हो. पहचाना.
चीर. सारी.
चुकत. गलती नहीं करता.
चुचान. चूता हुआ.
चुचाते. आर्द्रित.
चुनि. दाना, चारा.
चुनीन. मणि के छोटे २ टुकड़े.
चुभ्यो. धंसा.
चुवन. टपकना.
चुहिल. गुलज़ार.
चूक. गफ़लत, गलती.
चून. चूर्ण.
चूमिकारी. चुचकारना.
चूरि. चूर्ण कर.
चूंथी. चोंच से काटा.
चूंदरि. चूनरी, रंगों से रंगी हुई साड़ी.
चेटक. नौकर, कौतुक.
चेताइयो. याद दिलाना.
चेष्टा. कार्य्य, व्यापार.
चोखो. तेज़.
चोटारि. घायल.
चोप. चाह.
चोराचोरी. गुप्त रीति से.
चोली. अँगिया, कंचुकी.
चौचँद. फ़साद.
चौचंदहाई. मुफ़सिदा.
चौहैं. चारो तरफ़.
च्वै. टपकपड़ी.

(छ)

छई. लगे हैं.
छकी. तंग हुई.
छक्यो. तृप्त हो.
छज्जे. छत का बाहरी निकला हुआ हिस्सा.
छटा. शोभा.
छटि. शोभा ; बिजली.
छटूक. छ टुकड़े.
छत. घाव.
छतनार. पत्तों का बनाया हुआ छाता.
छतवंत. कटी. घायल.
छत्र. अनुयायिवर्ग, छाता.

छत्रपति. राजा.
छनक. डर, चिहुंक.
छनजोति. बिजली.
छनजोन्ह. बिजली.
छपी. रात.
छपि. छिप, गुप्त.
छबीले. सुन्दर.
छये. भरेहुए.
छराके. स्त्रियों का नीबी बन्धन.
छरकीलो. फुरतीला.
छरी. छली.
छलकनि. अतिशय प्रगट.
छल. दगाबाजी.
छला. चमक.
छलान छल्ला.
छल्ला. अँगूठी.
छवान. एड़ी.
छहरत. फैलता है.
छहरात. बिथर जाता.
छहरि. फैल फैल कर.
छहियां. परछांहीं.
छंद. उपाय.
छाजी. फबी, शोभित हुई.
छाम. छानन.
छाप. चिन्ह, मुद्रा.
छान. क्षीण, छीन.
छामिनी. हीन.
छाय. बिछाकर.
छार. खाक, राख.
छालि. छलकि.
छावत. ढंकता है.
छांह. अस्त, छाया.
छिति. पृथिवी.
छिनो. क्षण भर.
छिलि. तराशना, छीलना.
छीकरति. छी छी करती है, अनुकरण शब्द.
छींटैं. बूंदैं.
छीबर. मोटी छींट का कपडा.
छीर. दूध.
छीवै. छूओ.
छुही. रंगी.
छेद. धंसकर.
छेम. कुशल.
छैल. रसिया.
छैलन. बांके.
छोभमई. घबराई हुई.
छोर. किनारा.
छोरिगो. छोरगया, खोलगया.
छोहरी. थोड़ी उमर की स्त्री.
छौना. लड़के.
छ्वावै. छुआओ, स्पर्शकरो.
छ्वै. छूरहा.

(ज)

जऊ. यद्यपि.
जकि. चकराकर.
जकी. स्तब्ध.
जगति. संसार में.
जगदंड. ब्रह्मांड.
जगदीश. परमेश्वर.
जगरमगर. जगमग.
जगाजोति. तेजमय.
जड़ावन. शीत लगना.
जथा. प्रकार.
जद. यदि.
जनेस. राजा.
जमक. दृढाघात.
जमदाढें. जमधर, पेशकब्ज.
जमात. समूह.
जमाव. एकट्ठा होना.
जम्यो. एकट्ठा हुआ.
जरकसी. जरी के काम की.
जरफ. बर्तन.
जरवाये. जड़वाये, मणि से जटित.

जराउ. रत्नों से जड़ा.
जराय. नग जड़े हुए.
जरी. जड़ी, बूटी.
जरीपट. सोनहरे काम का कपड़ा.
जरीबाफ़्त. ज़रबफ़्त.
जलज. मोती, कमल.
जलजात. कमल.
जलधर. बादल, मेघ.
जलधि. समुद्र.
जलयंत्र. फौवारा.
जलाकन. तेज़, धूप.
जलियो. जाल, ढकना.
जलूस. जलसा.
जयासो तृणविशेष.
जसोदा. यशोदा, नन्दपत्नी.
जहान. दुनिया, संसार.
जंग. युद्ध, लड़ाई
जम्बूक. सियार, पशुविशेष.
जंबुनद. सुवर्ण, सोना.
जागि. प्राप्त.
जाती. चमेली पुष्प.
जामते. प्रहर से, अंकुरित होते ही.
जामा. एक प्रकार की पोशाक.
जार. परस्त्रीरत पुरुष.
जारज. दोगला.
जाल. झरोखा.
जालन. समूह.
जालहि, फन्दा.
जावक. महावर.
जाहिरे. प्रसिद्ध.
जिकिरि. ज़िक्र, चर्चा अर्थात् चाह.
जिततित. जहां तहां.
जिह. रोदा, धनुप की तांत.
जीकरति. जान पहना देती है.
जीगन. जुगुनू, एकप्रकारका दीप्तमानकृमिविशेष.
जीभ. जिह्वा, ज़बान.
जीरन. अजीर्ण.
जीरे. जी को, जीवको.
जीवत. जीती है.
जीवन. जिन्दगी, जल.
जीहें. ज़बान, जिह्वायें.
जुग. दो.
जुगुति. युक्ति, उपाय.
जुगुनू. दीप्तमान कृमि विशेष.
जुगुप्सा. घिन.
जुन्हाई. चंद्रिका, चाँदनी.
जुबान. जिह्वा.
जुरत. जुटता है.
जुरी. मिली.
जुही. जूही पुष्पविशेष.
जूझन. मरनें को मुस्तैद.
जूमि. एकट्ठा हो.
जूहन. समूह.
जेयें. भोजन.
जोग. लायक, संयोग.
जोति. रोशनी, चमक.
जोन्ह. चन्द्रिका.
जोबन. स्तन.
जोबना. स्तन.
जोयसी. ज्योतिषी.
जोर. वेग.
जोरी. स्त्री पुरुष, दम्पति.
जोवति. देखती.
जोहे. देखने से.
ज्वलित. जलती.
ज्वार. अन्न विशेष.
ज्वाल. अग्नि.
ज्वाला. अग्नि की शिखा.
ज्वै. परख.
ज्योतिस्न. चाँदनी रात.

(झ)

झखियें. पछताती हूं.
झगा. अंगरखा.

झझकत. चौंकता है.
झननाई. झगड़ने का अनुकरण शब्द.
झपी. छिपी.
झपेटत. झपटते हो.
झपैं. ढक जाते हैं.
झमकि. वेग.
झरत. टपकता है.
झरनि. ताप, गंभीर वर्षा.
झरप. वेग.
झरपै. लड़ती है.
झरसि. जल गई.
झरसै. जलने लगे.
झरापैं. लपट.
झारि. वृष्टि की झड़ी.
झरिगो. खाली हो गया.
झरोखे. गवाक्ष.
झलकि. ज़ाहिर, प्रगट हुआ.
झलकैं. देख पड़ते हैं.
झलाझल. चमकदार.
झहन. झुनझुनी.
झहराई. झझककर.
झँकोरनि. झूला का झोंका.
झंझापौन. प्रचंड पवन.
झंपा. झपसा.
झाईं. परछांही.
झापैं. परदे.
झारन. झाड़ियों से.
झारि. छोटे कटीले वृक्ष; मारकर.
झारी. गेडुआ.
झालरियां. लड़ियां.
झालि रहे. लटक रहे.
झांकती. छिपकर देखती.
झांझरी. झरोखे की जाली.
झांवत. रगड़ रगड़ कर धोती है.
झिझकारे. झोंका दिया, झिटका दिया.
झिझकै. चौकते हैं.
झिरकि. झटक कर.
झिलि झिलि. मिलकर.
झिलमिली. मन्द मन्द चमकती है.
झिल्ली. कृमि विशेष.
झीन. महीन.
झीनी. साफ, महीन.
झुकी. लपकी जाती रही.
झुमका. कर्ण भूषण स्त्रियों का.
झुरै. सूख गया.
झूमरि. जुटकर नाचना.
झूमि. हिलकर.
झूरि. झोर, पीट.
झेलाझली. ऐंचा तानी, खींचाखींची.
झैल. लपटाकर.
झोरी. बड़ी थैली.
झौंर. झुंड, झंझट.

(ट)

टक. नजर.
टकटकी. ऐसा देखना जिसमें देर तक पलक न लगै.
टपकि. गिरकर.
टहल. कार्य्य, सेवा.
टंकोर. धनुष के रोदा का अनुकरण शब्द.
टरत. हटाता है.
टेरि. पुकारकर.

(ठ)

ठई. छाई.
ठकुराइन. स्वामिनी, मलिकः.
ठनक. ठनकार, अनुकरण शब्द.
ठसक. गर्व्व.
ठंढ. शीतल.
ठाई ठानी.
ठाट. समूह.
ठाटन. बनावट, साज समाज.
ठाटी. बनाया.
ठान. निश्चय.
ठानती. संकल्प करती, हठ करती.

ठानि. ठहराय.
ठायो. किया.
ठिकि. ठीक.
ठिलि. ठेल ठेल कर.
ठाँय. स्थान.
ठेलति ढकेलती, धक्कादेती.
ठोढ़ी. ठुड्डी, चिबुक.
ठौनि. अदा.
ठौर स्थान.

(ड)

डगनि. कसी.
डगरि. धीरे धीरे चली.
डगरी. धीरे धीरे आई.
डगलानी. हिलाती है.
डरपावनि. डरवाती है.
डरपै. डरती है.
डहडहे. खिले हुए.
डाढ़ी. श्मश्रु, जलती.
डारो. वृक्ष की डाल.
डावरियां. लड़कियां.
डेरो. अड़ान, बसेरा.
डोरी. लगन, रस्सी.
डांड़ी. हिंडोरा.

(ढ)

ढरि. गिरकर.
ढहि. गिरकर.
ढराये. ढलवाये.
ढिग. समीप.
ढीली. मंद.
ढेर. अनेक, ढाल.

(त)

तऊ. यद्यपि.
तप्त. तपाये हुए.
तकि. देख.
तकियान. उस समय.
तटनी. नदी.
तड़ाग. तलाब.
तड़िता. बिजली.
तत्काल. उसी वक्त.
तन. शरीर.
तनको. जरा.
तनी. बन्द.
तनूजा. लड़की.
तनूरन. तन्दूर, चूल्हा.
तनेनी क्रुद्ध.
तन्मय. लीन, तदाकार.
तपसी. तपस्वी.
तबेला. अस्तबल.
तम. अन्धकार, अंधेरा.
तमक. गर्व्व.
तमकि. गर्व्व कर.
तमाल. वृक्ष विशेष.
तमिस्रा. अँधेरी रात.
तरकाति. टूटती है.
तरके. प्रभात, सबेरा.
तरप. चमक.
तरजि. डरवा गई.
तरनि. सूर्य्य, नौका.
तरजी. कड़ुआई, डरवागई.
तरपै. तड़फड़ाती है.
तरफति. तड़फड़ाती है.
तरबूजा. हेनुआना.
तरल. चंचल.
तरवातै. पादतल से.
तरवान. पैर का तलवा.
तरसावति. सताती है.
तरसै. कष्ट पाती है.
तरासे. काटा हुआ.
तरुनाई. जवानी.
तरुनि. युवती.
तरैयन. तारागण.
तरंग. लहर.

तर्ज्जन. धमकाना.
तर्योना. कान का गहना.
तलास. खोज.
तहखाने. ज़मीन के नीचे का मकान.
तहतही. छिपी उपाय.
तंड. नृत्य.
तंत्रिका. ताँत.
ताए. तपाए, तनाया.
ताके. उसके; पत्ते, देखा.
ताड़न. मारना.
ताती. जलती
ताते. तेज़.
तानमय. सुर मे लीन.
तापें. दुःख; गरमी.
तामरस. कमल.
ताम्रसिखा. कुक्कुट, मुर्गा.
तारन. उद्धार करने वाला.
तारनि. तारकशी के काम का.
तारापति. चन्द्रमा.
तारे. तारागण.
ताल. लय का एक होजाना, तालाव.
तालन. वृक्षविशेष.
तिनाने. तनेने परे, कड़े परे.
तिय. स्त्री.
तिरस्कार. अनादर.
तिरीछो. तिरछा.
तिर्य्यक. टेढ़ी.
तिल. ज़रा, टुक.
तिलोत्तमा. अप्सराविशेष.
तिहूँ. तीनों.
ती. स्त्री, थी (प्रत्यय).
तीखन. चोखी, तेज़.
तीछन. तेज
तीज. हरितालिका, स्त्रियों का बड़ा त्योहार.
तीर. वाण; तट; आसपास.
तुका. गाँसी.
तुनीर. तरकस.
तुपक. बन्दूक.
तुव. तुमको.
तुही. तूती का शब्द; तुम ही.
तुंग. ऊँचे.
तुंवनि. तैरने की तुम्बी.
तूती. पक्षी विशेष.
तूलनि. रूई.
तुली. समान, तुल्य.
तृन. घास.
तेऊ. वे भी.
तेखि. क्रुद्धित.
तेजे. ज्योति.
तेह. ताना, तनज; क्रोध.
तैये. तपावें.
तोपि. ढाँककर.
तोप्यो. ढाँका.
तोयद. मेघ, बादल.
तोरन. बन्दनवार.
तोरिगो. तोड़ गया.
तोरे. ऐंठने.
तोलै. तुलती है.
तोसक. तोशक, गद्दा.
तोही. तेरे हृदय की; तबी.
त्योरी. भौंह.
त्रासन. डर.
त्राहि. बचाओ, तौबाह.
त्रिपुरारि. त्रिपुर राक्षस के नाशक, शिव.
त्रिबली. स्त्रियों के उदर की तीन लड़ी.
त्रिविधिसमीर. शीतल, मन्द और सुगन्धित पवन.
त्रिवेणी. गंगा, यमुना और सरस्वती नदियों का प्रयाग मे संगम.
त्रिलोक. तीनों भुवन.
त्वचा. चमड़ा.

(थ)

थकित. थक गए.
थरको. काँप उठा.

थरथरी. कँपकँपी.
थल. स्थान.
थलीन. पर्ती भूमि.
थहरत. हिलता हुआ.
थाती. धरोहर.
थिर. सावधान.
थिरानो. ठहरा.
थोक. समूह.

(द)

दई. परमेश्वर; दिया.
दगा. धोखा.
दचक्यो. सिमट रहा.
दचे. धीमे.
दमकै. चमकता है.
दमयन्ती. महाराज नल की रानी.
दयानिधि. दया के खज़ाना.
दरकि. फट कर.
दरको. फटा.
दरद. रहम; कष्ट.
दर दौलत दराज. यह ड्योढ़ी प्रचुर धन से पूर्ण हो.
दरभ. कुश.
दरमै. दरवाज़े मे.
दरसावैगी. दिखलावैगी.
दराज. लम्बी, ज्याद:.
दरीचिन. खिड़कियाँ.
दर्श. देखना.
दर्शित. देखाए जाते हैं.
दल. सेना.
दली. नसाया.
दलि. नाशकर, दाब कर मार डाला.
दवन. दौना, पुष्प विशेष.
दवरि. दौड़कर.
दवा. दादा.
दवारे. दावानल.
दशा. अवस्था.
दशन.नि. दाँत.
दसा. जीवनी की अन्तिम घड़ी; चिराग़ की बुझती बत्ती.
दसानन. रावण.
दहती. जलाती.
दही. जरी; दधि.
दहै. जलाता है.
दंती. हस्ती, हाथी, दिग्गज.
दम्पति. पति और पत्नी.
दम्पा. बिजली.
दाख. मुनक्का.
दाघ. गरमी.
दाड़िम. अनार.
दाघे. दाह, ताप.
दादुर. मेढक.
दान. हाथी का मद.
दानै. दाना, गुरिया.
दापन. कान्ति, गर्व्व.
दाम. माला; मोल.
दामिनी. बिजली.
दायक. देनेवाला.
दार. स्त्री.
दारा. एक नदी का नाम.
दारिद. गरीबी.
दारुन. असह्य, कठोर.
दारयो. अनार.
दाँव. मौका; दफ़े.
दिखवारन. देखनेवाले.
दिगन्तन. दिशा के अन्त; आँखों के कोर मे.
दिनकर. सूर्य्य.
दिनेश. सूर्य्य.
दिपति. प्रकाश होता है.
दिया. चिराग़.
दिलीस. दिल्ली के बादशाह.
दिवान. राजमंत्री.
दिवानी. मार्ती, पगली, (प्यार का संबोधन स्त्रियों मे.)
दिवारपोस. दिवार के ढाँकने का वस्त्र.

दीनता. गरीबी.
दीप. दिया, चिराग.
दीपमाली. दीवाली.
दीपसिखानि. चिराग की टेम.
दीप्तिमान. प्रकाशमान.
दीरघ. बड़े.
दीसै. देखपड़ता है.
दीह. चौकठ.
दुकूल. वस्त्र.
दुति. चमक, शोभा.
दुदण्ड. दो घड़ी.
दुनी. दुनिया, संसार.
दुपहरी. मध्याह्न, दोपहर.
दुमात. सौतेरी माता
दुर्जन. दुष्ट.
दुराज. दुअमला.
दुरै. छिपै.
दुरो. छिपा.
दुलारी. प्यारी.
दुवन. वृक्ष.
दुवारे. दरवाजे.
दुहून. दोनो.
दुन्दभी. नक्कारः.
दूतत्व. पैग़ामबाज़ी, दूतपन.
दूबरी. छोटी, तुच्छ.
दूमै. हिलता है.
दूषक. दुश्मन.
दूसि. दूषण कर.
दृश्य. जो देखा जा सकता है.
दृष्टि. नज़र.
देव. देवता.
देवकी. कृष्णचंद्र की माता.
देशान्तरगमन. विदेश जाना.
दैया. परमेश्वर, (प्रायः स्त्रियों के बोलने में प्रयोग होता है.)
दोसरीन. दूसरा गलियारा.
दोय. दो.
दोष. ग़लती, चूक.
दोहाई. सौगन्ध; उद्घोष.
दौर. चाल, गति, धावा, चढ़ाई.
द्योतक. सूचक.
द्योस. दिन.
द्रवति. गलता हुआ.
द्रुम. वृक्ष.
द्वन्द. झगड़ा.
द्वन्दहर. दुःख का हरनेवाला.
द्वार. दरवाज़ा; ज़रिया; रास्ता.
द्विजदेव. कवि का नाम; ब्राह्मण देवता.
द्विजराज. चंद्रमा; ब्राह्मणों का राजा; दाँतों की पंक्ति.

(ध)

धकधकी. धड़का.
धकपकात. डरता है.
धका. धक्का, झोंका.
धधकि. तप्त होकर.
धनेस. कुबेर.
धमकि. जल्दी, ज़ोर से.
धमार. राग विशेष.
धरक. धारण, अङ्गीकार.
धरकाति. हृदय धड़कता है.
धरती. पृथ्वी.
धरमसै. धँसती है.
धरा. पृथ्वी.
धराधर. पर्व्वत.
धाक. प्रताप.
धाम. घर
धाय. दूध पिलानेवाली.
धार. बाढ़, धारा.
धारनि. जलधारा, प्रवाह.
धारे. धारण किये.
धावन दूत.
धावैं. दौड़ते हैं.
धुधारे. काले.

धुनि. शब्द.
धुनियत. फैलता है.
धुनी. नदी.
धुपाय. सुगन्धित धूप से वासित कर.
धुरवा. बादल.
धुरीन. अगुआ.
धुरेटत. धूर से लपेटते हो.
धूतपन. धूर्तता, चालाकी.
धूम. धुँआ.
धूमधाम. आतिशय्य.
धूमरे. धूमिल.
धूरि. खाक.
धूँधरि. धूम, ऊधम.
धोखे. गलती, ख्याल.
धोरे. पास.
धौं. जाने.
धौरनि. धूमिल.
धौरी. सफेद गौ.
ध्रुव. तारा विशेष.
ध्वनि. आवाज़.

(न)

नख. नाख़ून.
नखत. तारा.
नखतेस. चन्द्रमा.
नखच्छत. नख का दाग़.
नखरेखन. नाख़ूनों की कतार.
नखियान. नाख़ूनों.
नग. मणि के टुकड़े.
नगारे. नक्कारः, नगाड़ा.
नछत्रपति. चंद्रमा.
नजिकात. पास पहुँचते हैं.
नट. नहकारना, इन्कार; मदारी.
नटति. नहीं करती.
नटनागर. चतुर नट.
नतीजा. फल.
नतो. अगर्चे, यदि.
नद. बड़ी नदी.
नदान. अज्ञान.
नदीस. समुद्र.
नपुंसक. नपुंसकलिंग; पुंसत्वहीन पुरुष.
नवला. नवीन स्त्री.
नवीन. नया.
नवेली. युवती; लता नहीं.
नभ. आकाश.
नभलाली. आकाश की ललाई जो प्रायः सूर्योदय और सूर्यास्त में देख पड़ती है.
नभान. आस्मानी.
नमो. नमस्कार है.
नम्र. झुका.
नयनगोचर. देख पड़ना.
नयना. नेत्र; नम्रतारहित.
नरक. दोज़ख़.
नरमे.
नरमै } मुलायम.
नरिन्द. राजा.
नलिन. कमल.
नव. नौ, अङ्क.
नवति. झुँकती है.
नसा. नशा.
नहसुत. वृक्ष विशेष.
नहानहिँ. स्नान करने को.
नहियाँ. नहीं नहीं.
नंद. पति की बहिन.
नंदन. इन्द्र की वाटिका.
नंदिनी. पुत्री.
नाक. नासिका और स्वर्ग.
नागरि. चतुर स्त्री.
नाद. शब्द.
नाधे. संबन्ध.
नायक. स्वामी.
नारि. गर्दन; स्त्री; बरहा.
नारी. नाड़ी, नब्ज़; स्त्री.
नारीविलाससूचक. स्त्रीसम्भोग का जतानेवाला.

नासा नासिका, नाक.
नाह. स्वामी; प्रियतम.
नाहक. व्यर्थ.
निकर. समूह.
निकाई. ख़ूबसूरती.
निकुञ्ज. लतागृह.
निकेत. घर.
निखोटि. निष्कपट.
निखरौहैं. साफ़ हुए.
निगोड़ो. स्त्रियों की गाली.
निघरघट्यो. बेहयापन.
निचान. एक मात्र.
निचोरि. गार गई, निचोड़.
निज. अपने.
निठुराई. निर्दयपन.
नितंब. कूला.
निदरत. तिरस्कार करते.
निदरे. निरादर करते हुए.
निदाघ. ग्रीष्म ऋतु.
निदानै. कारण.
निधान. खज़ाना.
निधि. महापद्मादि मणि.
निपटाय. निर्णय कर, साफ़ कर.
निपुण. होशियार.
निबहि. पार होगया.
निवास. स्थान.
निबेस. घर; निकलजाना.
नियम. क़ायदा.
नियरे. नज़दीक.
नियारी. अलग.
निरखि. देखकर.
निरझर. झरना.
निरीछनि. चितवन.
निरवारन. रफ़ा.
निरीहतर. व्यापार रहित.
निरुपधि. उपद्रव रहित.
निर्गुण. सत्वादि गुण रहित.
निरधार. आधार रहित; निश्चय.
निर्वाह. निबाह.
निर्वेद. वैराग्य.
निरंजन. अञ्जन रहित.
निलय. घर.
निलाज. बेशरम.
निसा. इच्छा; रात.
निसाचर. राक्षस.
निसाँक. बेडर, निर्द्वन्द्व.
निसि. रात.
निसिबासर. रात दिन.
निसीथिनि. रात.
निसेस. चंद्रमा.
निःसृत. निकले हुए.
निहाल. ख़ुश.
निहोरे. वास्ते, प्रायः एहसान.
नीति. नय, धर्म्मशास्त्र, ज्ञानोपदेश.
नीवी. लहँगे या साड़ी का कटिबंधन.
नीर. जल.
नीरद. मेघ, और दन्तरहित.
नीरधि. समुद्र.
नीलकंठ. महादेव.
नुकता. बिन्दु.
नूतन. नया.
नूनो कम.
नूपुर. पायज़ेब.
नृपमण्डली. राजसभा.
नेकु. ज़रा, तनक.
नेवल. एक प्रकार का नूपुर.
नेवारी. व्यतीत; पुष्पविशेष.
नेसुक. किंचित, तनक.
नेह. प्रीति; तेल.
नेहतर्ज्जनि. नेह का दूर करनेवाला.
नोखी. अनोखी, अद्भुत.
नौल. नवीन.
न्यारी. अलग; एकान्त.
न्यून. कम.

न्योते. दावत, निमंत्रण.

न्हाय. स्नान कर.

(प)

पखान. पाषाण, पत्थर.

पखुरी. दल.

पखेरुन. पक्षी.

पखेरी. पक्षी.

पगतल. पैर के तलवे.

पगति. मिलजुल जाती है.

पगनि. पैर.

पगाय. मिलाकर, फसाकर.

पचरंग. पचरंगा पताका.

पछर. पिछरकर.

पछार. फेंककर.

पट. वस्त्र; केवाड़.

पटनाल. कमल की डँड़ी.

पटुका. डुपट्टा.

पठनेटे. पठानों के युवक.

पतनी. विवाहिता स्त्री.

पतंग. परवाना.

पति. इज्जत; पत्र; मर्य्याद.

पतिझार. पतझाड़; बेइज्जती.

पतिया. चिट्ठी.

पतियाँ. कतार.

पतियारी. पाँति, कतार.

पत्यानो. मोतबिर; पत्ता से जुदा हुआ.

पथ. राह, रास्ता.

पथिक. मुसाफिर.

पदार्थ. वस्तु.

पद्मिनि. उत्तम स्त्री.

पधारि. जायगे.

पन. अवस्था, (प्रत्यय).

पनस. कटहर का वृक्ष.

पन्न. जमुर्रद, मणि विशेष.

पय. दूध.

पयान. प्रस्थान.

पयोद. बादल.

पयोधि. समुद्र.

परगासा. ज्योति, प्रकाश.

परजन्य. बादल.

परतीति. विश्वास.

परदान. परदे.

परपुरुषरता. दूसरे पुरुष से प्रीति करनेवाली.

परब्रह्म. परमात्मा, पुरुषोत्तम.

परमपद. मोक्षपद.

परमपर. सब से बड़ा.

परमाणु. सूर्य्य के प्रकाश मे जो छोटे २ रेणुकण देख पड़ते हैं.

परवाह. चिन्ता, फिक्र.

परसत. छूते हुए.

परसि. छूकर, स्पर्शकर.

परस. परोसा.

परसों. तीसरे दिन.

परस्पर. आपस में.

परहथ. पराये हाथ.

पराग. फूल की धूरि, जिसमे से सुगंध निकलती है

परारे. पराया, बेगाना.

परास. पलाश वृक्ष, टेसू.

परिकर. कमरबंद.

परिचारक. टहलुआ.

परिचारिका. दासी.

परिपाटी. परम्परा.

परिपुष्टता. हर तरफ से मजबूती.

परिपोषित. पुष्टता को प्राप्त हुआ.

परिमल. सुगंध.

परिहरि. छोड़कर.

परिहास. दिल्लगी, ठिठोली.

परेखो. परीक्षा.

परेते. प्रेत, भूत.

पर्य्यायवाची. एकार्थवाची.

पलन. पलक.

पलनि. पलक.

पल्लव. नवीन पत्र.

पवरनि. बरोठा.
पश्चात्ताप. पछताना.
पसरि. फैलकर.
पसाय. प्रसन्न कर.
पहल. पुस्तक धरने की चौकी.
पहिराव. कपड़े.
पहुँचीन. कलाई का एक गहना.
पंक. कीचड़.
पंकज. कमल.
पंचबान. कामदेव.
पंचसर. कामदेव.
पंथ. राह, रास्ता.
पाकसासन. इन्द्र.
पाग. पगड़ी, शिरोवस्त्र.
पगि. पका हुआ; पूर्ण; लपटे.
पाटल. पानड़ी.
पाटी. तख़ती; पटरी ; सिक्ता, पलंग की पाटी.
पाट्यो. भाठदिया, भरदिया.
पाठकों. पढ़नेवालों
पातकी. पापी.
पाती. चिट्ठी; वृक्ष के पत्ते.
पान. पीना.
पानदान. पनडब्बा, गिलौरीदान.
पानि. हाथ.
पानिप. जल; शोभा.
पायजेहरि. पायज़ेब, नूपुर.
पायलनि. पैर का बजनेवाला कड़ा.
पारत. डालता.
पारथ. अर्जुन, पाण्डुपुत्र.
पारषद. मुसाहिब.
पारा. रणक्षेत्र मे गिरा.
पारि. पहनकर; कर.
पारिगो. लेटागया.
पारिजात. स्वादेता; हरसिंगार.
पारिजातावलि. स्वर्गवृक्षमाला.
पाला. हिम, जाड़ा.
पाली. पालनेवाली; पोषण किया.

पाले. हवाले.
पावक. अग्नि.
पावन. पवित्र.
पावस. बरसात, ऋतुविशेष.
पावरियाँ खड़ाऊँ, पादुका.
पाहन. पत्थर.
पाहुनी. मेहमानिन.
पाँवड़े. बड़ों के आगमन मे जो वस्त्र चलने के लिये बिछाये जाते हैं.
पाँवरी. जूती.
पाँसुरी. पँसुली.
पिक. कोकिल.
पियली. इया उत्पन्न हुई.
पिछानी. पहचान.
पिछौंड़ि. पीछे छोड़ कर.
पिटारी. छोटा पिटारा.
पिता. बाप.
पियबासा. पिय का बासस्थान.
पिरानो. कष्ट पाया.
पिलि. घुसकर.
पिसाची. डायन.
पिहूकि. पपीहा की बोल, अनुकरण शब्द.
पिँजर. पिंजड़ा.
पीउ. प्रियतम.
पीक. पान का रस.
पीके. पीक थुके हुए.
पीड़ित. कष्टित, दुखी.
पीतम. प्रियतम.
पीताम्बर. पीला वस्त्र; पीला आकाश.
पीन. मोटा; पूरा.
पीर. दया; कष्ट.
पीरी. पीली, ज़र्द.
पुनीत. पवित्र, अच्छी.
पुरओ. पूरा करो.
पुरइन. कमलपत्र.
पुरंदर. इन्द्र.
पुराकृत. पुराने किये हुये.

पुलकनि. रोमांच.
पुलिन. बलुहा नदी तट; बालू.
पुंजन. समूह.
पुंडरीक. कमल.
पुतरी. आँख की पुतली, कनीनिका; पुत्र री.
पुन्यो. पूर्णिमा.
पूर. भरा हुआ.
पूर्व. पिछला.
पूर्वक. साथ.
पूर्वोक्त. आगे कहा गया.
पेखो. देखो.
पेनी. चोखी.
पेसो. पेशा.
पैनी. चोखी, तेज़.
पैंडो. रास्ता, दर्रा.
पोख्यो. पाले हुये.
पोटि. फुसलाकर.
पोढ़. मजबूत.
पौढ़ि. सोना, शयन.
पौनपूत. हनुमान वानर.
पौरि. बरोठा.
पौरियै. द्वारपाल.
पौंचन. पहुंचा, कलाई.
प्यादे. सिपाही, पैदल.
प्रचंड. प्रबल, तेज़.
प्रचार. विस्तार.
प्रणय. स्नेह, प्रीति.
प्रणव. ओंकार.
प्रजंक. पलंग, पर्य्यङ्क.
प्रतिपारि. प्रतिपालन, रक्षा.
प्रतीक्षा. बाट जोहना, अगोरना.
प्रतिकूल. बरखिलाफ़.
प्रतिबिम्ब. परछाँही.
प्रत्यंग. हर एक अङ्ग.
प्रन. प्रतिज्ञा.
प्रनासी. नाश करनेवाला.
प्रपंचविधि. ब्रह्मा की सृष्टि.
प्रफुल्लित. पूरा खिलते हुए.

प्रवीन. चतुर.
प्रभा. छटा, ज्योति.
प्रभात. प्रातःकाल, सबेरा.
प्रभाव. महिमा, प्रताप.
प्रमोद. आनन्द.
प्रमोदवन. नामविशेष.
प्रलय. संसार का अन्त, क़यामत.
प्रवाल. मूगा, पल्लव.
प्रवाह. धारा.
प्रसाद. कृपा.
प्रसादि. प्रसन्न करती है.
प्रसारत. फैलाता है.
प्रसारित. फैलाई गई.
प्रसूनन. फूल.
प्रहारनि. मारना.
प्रात. सबेरा.
प्रातरागमन. सबेरे का आना.
प्रान. जीव, प्रियतम.
प्रियसंगमार्थ. प्रियतम से मिलने को.
प्रियापराधसूचक-चेष्टाधारिणी. वह स्त्री जिसके मुखादि विकार से पति का क़सूर ज़ाहिर होता है.
प्रियभाषिणी. मीठी बोल बोलनेवाली.
प्रियाप्रियभाषिणी. मीठी और कड़ुई बोल बोलनेवाली.
प्रीतिकार्य्यसाधन. प्रेम के निर्वाह करने को.
प्रियसंभोगचिह्नित. प्रियतम के सुरतचिह्न से युक्त.
प्रेरित. उभाड़ी गई.
प्रोत्तेजित. तेज़.

(फ)

फटकि. फैलकर.
फटिक. स्फटिकमणि.
फते. फतह, विजय.
फनाली. सर्पमुखपंक्ति.
फनिन्द. बड़ा साँप.
फनीजे. साँप के बच्चे.

फनीन. अनेक सर्प.
फनेस. सर्पों का राजा, बड़ा सर्प.
फबि. सजता है, शोभित.
फबित. सजाहुआ.
फर. रणक्षेत्र, मैदान.
फरको. तड़फड़ाता है.
फरजी. शतरंज का एक मुहरा या प्रसन्न हो.
फरते. फलते, फल लगते.
फरद. कागज़.
फरसबंद. मीरफ़र्श.
फर्कित. फरकता है.
फरास. फर्राश, खलासी.
फसति. बझती जाती है.
फंद. बखेड़ा ; फँसड़ी, जाल.
फिरियाद. शिकायत, नालिश.
फीकी. निष्फल.
फुफकार. साँप का क्रोध से साँस लेना.
फुलिंग. चिनगारी, अग्निकण.
फुहारै. जल के कने.
फुही. जलकणिका.
फूँक. जलाना ; जादू, टोना.
फूँकन. जलाना.
फेन. फेचकुर, फेना.
फेरो. रोको.
फेंट. कमरबन्द, फाँड़.
फोरि. तोड़कर.

(ब)

बई. बोया.
बक. बगला, पक्षीविशेष.
बकनि. बोल.
बकसीस. निछावर.
बकसो. माफ़ करो.
बखेड़ो. जंजाल, झंझट.
बगमेला. शोर.
बगपाँति. बगलों की कतार.
बगर. फैलाना, मार्ग.
बगानो. दौड़ा.
बगारै. फैलाता है.
बच. बचन.
बच्छस. छाती.
बजमारे. बज्रमारा.
बट. बरगदवृक्ष.
बटाई. भजाई, बरलाई.
बटोही. मुसाफ़िर.
बतराति. बतलाती, गुफ़्तगू करती.
बदन. शरीर, मुख.
बदनवारैं. बन्दनवार.
बदनाम. बुरे काम की शोहरत, कुख्याति.
बदनारविन्द. मुखकमल.
बदरान. बादलों.
बधाई. } शादियाना.
बधाए. }
बधिर. बहिरा.
बधू. बहू.
बन. समूह.
बनक. अदा.
बननि. बनों मे.
बनमाल. बन का समूह; तुलसी, कुन्द, मंदार, पारिजात और कमल का पैर तक लम्बा माला.
बनमाली. कृष्ण ; माली.
बनवारी. कृष्णचंद्र.
बनिता. स्त्री.
बनीन. बन.
बने ठने. सजे धजे.
बपु. शरीर.
बय. उम्र.
बयारि. हवा, पवन.
बरकति. बर्कत.
बर. पति; श्रेष्ठ.
बरजी. रोका, मना किया.
बरजोर. ज़बरदस्ती.
बरसाने. ग्राम विशेष.

बरही. मयूर; उत्तम हृदय वाली.
बराइबे. बरजने, रोकने.
बरि. जलकर.
बरु. बरदान.
बरुनी. बरौनी.
बरेजे. उत्तम.
बरेतें. जोर से.
बरोठे. पौरि.
बलकनि. उबलना.
बलबीर. बलदेव के भाई, कृष्ण.
बलभी. बराम्दा.
बलया. कंकण.
बलाय. आफ़त; बलैया.
बलि. निछावर; प्रिय.
बलित. लपटती हुई, आच्छादित.
बल्लिका. छोटी लता.
बल्ली. लता.
बली. लड़ी, रेखा.
बलैया. बलाय.
बस. वश्य, स्वाधीन.
बसन. वस्त्र.
बसन्तिका. पुष्पविशेष.
बसि बसि. ठहर ठहर.
बसीकर. वशीकरण.
बसीठिन. दूत, संदेशहर.
बसेरे. स्थान, प्रायः पक्षियों का.
बसेरो. निवास.
बहनोल. जल बहनेवाली.
बहनि. निबाह.
बहबही. खोटी.
बहराइ. बहलाकर.
बहरावति. बगदाती है, छिपाती है.
बहानहिँ. ब्याज से, बहाने से.
बहार. बसंत.
बहारि. बटोरकर, साफ़कर, झाड़ूकर.
बहाली. आनन्द.
बहिरी. बधिर, कान से कम सुननेवाली.
बहुरि. फिर भी.
बहुरूपि. बहुरूपिया, जो नाना बेष धारण करते हैं
बंक. वक्र, टेढ़ा.
बंकुरता. टेढ़ाई.
बंचक. धोखा देनेवाला.
बंजुल. बेंत का वृक्ष.
बंदन. रोरी.
बँधि. फस गई.
बंसीबट. वटविशेष.
बागन. वस्त्र; वाटिकायें.
बाघ. शेर, व्याघ्र.
बाजि. घोड़ा
बाजूबंद. बाहु पर का आभूषणविशेष.
बाट. रास्ता.
बाटिका. बाग़चा.
बाढ़ैं. एक बारगी तोप या बन्दूक़ का दागना.
बात. हवा, पवन.
बाति. वायु.
बाती. बत्ती.
बाद. बहस, झगड़ा.
बादि. नाहक़, व्यर्थ.
बादिनि. बोलनेवाली.
बाधा. दुख.
बान. तीर; आदत.
बाना. प्रण.
बानि. आदत.
बानिक. गोलाई.
बानी. बोल; सरस्वती.
बापी. बाउली.
बापुरो. बेचारा.
बाम. बाँयाँ.
बायस. काक, कौआ.
बार. दफ़े.
बारक. एक बार .
बारन. हाथी; देर, विलम्ब.
बारबधू. वेश्या, कसबी.

वारि. जल.
वारिज. कमल.
वारिजात. कमल.
वारिधर. बादल, मेघ.
वारियै. थोड़ी; कम उमर.
वारी. पुत्री; बाग.
वारुनी. मदिरा, शराब.
वारे. लड़कपन.
वाल. लड़के, छोटे.
वालम. वल्लभ, प्रियतम.
वालि. बौर.
वालिवधू. वालिपत्नी, तारा.
वावरी. पगली, स्त्रियों का प्यार का संबोधन; वाउली.
वास. कपड़ा.
वासर. दिन.
वासा. वस्त्र.
वासुकी. सर्पविशेष.
वाहन. सवारी.
वाहित. लदा हुआ.
वाहिवे. लेने को.
बाँक. टेढ़ापन, ऐंड़.
बाँचत. पढ़ता है.
बाँह. हाथ.
बिकल. व्याकुल.
बिकली. व्याकुल.
बिकस्यो. खिल उठा.
बिकाने. बक्रय होगये.
बिकासै. निकालै.
बिगरैल. बिगड़े.
बिगोई. नसाई.
बिचकिल. मदन वृक्ष.
बिचार. ख्याल.
बिचित्र. विलक्षण.
बिछलि. फिसले.
बिछोभ. वियोग.
बिछोह. वियोग, जुदाई.
बिछौना. बिस्तरा.
बिज्जुछटा. बिजली की चमक.
बिटप. वृक्ष.
बिड़ारि. हाँक कर.
बितान. शामियाना.
बितानई. फैलाती है.
बितीत. बिताया, गुजारा.
बितै. व्यतीत.
बिथुरि. छितराकर.
बिथुरै. फैल गई है.
बिथोरिगो. छितरा गया.
बिदा. रुखसत.
बिदारै. फाड़ता है.
बिदित. ज़ाहिर, प्रसिद्ध.
बिदिसान. दिशाओं के कोने.
बिदेसिन. परदेसिन.
बिदेह. जनकराज.
बिद्यमान. मौजूद.
बिद्रुम. मूगा.
बिधान. तौर, तरह.
बिधि, धायल, ब्रह्मा.
बिधु. चंद्रमा.
बिनचोटी. मुसलमान.
बिनाने. गर्व्व मे भर गये.
बिनै. बिनती.
बिनोद. आनन्द.
बिपिन. वन.
बिपंची. बीणा, वाद्यविशेष.
बिबक्रित. टेढ़ा किया हुआ.
बिभक्त. तकसीम किये हुए.
बिभाति. शोभा.
बिभावरी. रात.
बिमला. सीता की सहेली.
बिमोहित. मूर्छित; प्रेम मे बेहाल.
बिरद. यश.
बिरमाय. ठहराकर.
बिरमायो. ठहराया.

बिरवा. पौधा.
बिरहीन. वियोगी.
बिरंग. बदरंग.
बिरंचि. ब्रह्मा.
बिराग. विशेष राग से.
बिराजमान. सुशोभित, मौजूद.
बिराना. बेगाना.
बिराव. शब्द, शोर.
बिरुझानी. बिगड़ी.
बिरुझी. उलझी, फँसी.
बिलखे. दुखित हुए.
बिलग. दूसरा कुछ.
बिललानी. बेकाम होगई.
बिलंब. देर.
बिलंबति. देर करती है.
बिलानो. क्षीण, हीन.
बिलापै. रोता है.
बिलास. केलि.
बिलासी. भोग करनेवाला.
बिलोकनि. चितवनि.
बिलोचनि. आँखें.
बिलोरि. मरोर, उमेठ.
बिलोल. चंचल.
बिशेष. खास.
बिष. जहर.
बिषभर. साँप.
बिषम. तेज, दारुण.
बिसखोपरहिं. बिषखोपरों को.
बिसद. स्वच्छ, साफ़.
बिसराम. आराम, आश्रम.
बिसर्जत. छोड़ देते हैं.
बिसाखा. राधिका की सहेली.
बिसाति. नतीजा.
बिसाती. फलवती, कामयाब.
बिसारे. बिसभरे.
बिसारौं. भुलाऊँ.
बिसाल. बड़ा

बिसास. बिश्वास, प्रतीति.
बिसासी. बिश्वासघाती.
बिसिख. बाण, तीर.
बिसूरति. बिकल होकर गुण कहती है.
बिसूरै. अफ़सोस करती है.
बिसोक. बाण.
बिस्व. संसार.
बिहसौंहैं. खिल पड़े, हँस पड़े.
बिहानहिं. सबेरे को.
बिहानी. व्यतीत हुई, बीत गई.
बिहार. क्रीड़ा.
बिहाल. बिव्हल.
बिहीन. रहित.
बिह्वल. व्याकुल.
बिंदु. बुँदकी.
बिंदुली. टिकुली.
बिंब. कुनरू का फल.
बौ. बर्त्तमान लोट की प्रत्यय (बुन्देलखंडकीभाषा.)
बीच. अन्तर; भेद.
बीचि. लहरी.
बीज. आदिकारण.
बीथित. दुःखित.
बीथिन. मार्ग.
बीन. गूँथना.
बीर. सखी.
बीरता. बहादुरी.
बीरा. पान, बीमा;
बीरी. लगे हुए पान, गिलौरी.
बीसबिसे. बीसबिस्वा, जरूर से जरूर.
बुद्धिरानी. अच्छी बुद्धि.
बूटैं. पौधे.
बूझिहैं. पूछैंगी.
बृजरानी. राधिका.
बृत्त. गोली.
बृथा. बेफ़ायदा.
बृषभानु. राधिका के पिता.
बृषादित. मदनताप; ज्येष्ठ मास के सूर्य्य.

बृंद. समूह
बेकार. बिना कार्य्य के; खराब.
बेटा. पुत्र.
बेदन. कष्ट, चारो वेद.
बेधत. छेद डालते हैं.
बेनी. चोटी.
बेनु. बाँस; बाँसुरी.
बेरामी. बीमारी.
बेलि. लता, बौरि.
बेली. लता.
बेष. वस्त्र.
बेस. रूप.
बेसरि. नाक का गहना; बिना मर्य्याद.
बै. बोना.
बैन. बोल.
बैर. दुश्मनी.
बैरिनि. दुश्मन.
बैस. उमर, अवस्था; रूप.
बैहरि. प्रचंड बात.
बोड़िन. बौर की कली.
बोधहि. समझावै.
बोरियै. डुबाइये.
बोरियो. डुबा गया.
बोलै. बुलावैं.
बौरै. पागल हो जाय; बौर लगे.
व्यवस्था. हाल.
व्यंजन. खाने का पदार्थ.
व्याज. बहाना.
व्यानी. नवप्रसूता.
व्याली. नागिन.
व्यालवर. दुष्टहाथी, कुवलयापीड़ हाथी.
व्योम. आकाश.
व्योंत. सामान.
व्रजचन्द. कृष्ण चन्द्र.
व्रजति. जाती है.
व्रत. धर्म्मानुष्ठान.
व्रती. नियमी.

(भ)

भगति. भक्ति, ईश्वरानुराग.
भजि. भागकर.
भजै. स्मरण करता; भागता है.
भट. योद्धा.
भटू. सखी.
भतरौंड़. ग्रामविशेष.
भनत. कहता है.
भभरि. डरकर.
भभूकै. अंगार.
भरकैं. भड़कती हैं.
भरभरी. डर.
भल्लै. भले हीं, अच्छी तरह.
भवन. घर.
भवराज. कामदेव.
भविष्य. आनेवाला समय.
भाई. चाही, अच्छी लगी.
भाखौ. बोलो.
भाग. भाग्य, अंश.
भाजन. बरतन, पात्र.
भाजि. भागकर
भाठी. धौकनी.
भान. सूर्य्य.
भानी. काटा.
भानु. सूर्य्य.
भानुतनया. यमुना नदी.
भामिनी. स्त्री.
भार. भरसाँय.
भारत. महाभारत युद्ध.
भारती. सरस्वती देवी.
भारे. बहुत.
भाल. ललाट.
भालहिं. ललाट में.
भाव. प्रीति.
भावते. प्यारा.
भावतो. प्यारे.

भावनी. सुहावनी.
भाँवरियाँ. विवाह की भाँवरी, प्रदक्षिणा.
भावरें. चक्कर.
भावि. होनेवाला.
भास. प्रकाश.
भासमान. सूर्य्य.
भीख. भिक्षा, दान.
भीत. दीवार.
भीति. डर
भीन. सुशोभित, सोह रही है.
भीर. आफ़त; जमावड़ा.
भीषम. भयानक.
भुजदंड. बाहु.
भुजंग. सर्प.
भुजा. बाहु.
भुजावेगी. भुजावेगी.
भुववलय. भूगोल.
भुसुण्ड. शुण्ड.
भुञ्ज. भूजनेवाला.
भूजों. जलाऊँ.
भूत. व्यतीत समय.
भूपति. राजा.
भूरि. बहुत.
भूषन. गहना, आभूषण.
भूषित. सजाया.
भृकुटी. भौंह.
भृत. कृत.
भृंग. भौंरा.
भृंगी. भौंरी.
भेक. मेंढक.
भेद. प्रकार.
भेष. रूप; आश्रम.
भेषे. पहन रहे हैं.
भेंटि. गले लगा कर मिले.
भैया. भाई.
भो. हुआ, (प्रत्यय).
भोगी. विषयी.
भोरहिं. सुबह को.
भोरी. सीधी, भोली.
भोरे. सीधे सादे. बेवक़ूफ़.
भ्रम. भ्रान्ति.
भ्रमत. घूमता है.
भ्राजै. शोभित होता है.
भ्रान्तिकारण. शुबहे का सबब.

(म)

मखतूल. रेशम.
मगन. मग्न ; डूबना ; आनन्द.
मघवा. इन्द्र.
मचकीन. पेंग, झोंका.
मचत. झोंका.
मचामचि. मचमचाना, अनुकरण शब्द.
मजलिस. महफ़िल, नृत्यसभा.
मज्जा. हड्डी के भीतर का गूदा.
मजीठ. औषधविशेष.
मजेजदार. मज़ेदार.
मझारनि. मध्य.
मझैयो. मिलाइयो.
मटकाइ. नचाकर.
मटकि. चमकाकर, नचाकर,
मड़राय. आसमान में चक्कर लगाकर उड़ना.
मढ़ति ढाँकती हैं.
मढ़ि. घेरकर.
मतवाले. माता, नशे मे चूर.
मति. बुद्धि नहीं ; सलाह.
मतो. राय.
मत्त. मतवाला.
मथनि. मंथन करने की लकड़ी, खैलड़.
मदन. काम.
मदनधनी कामसाहूकार, मदिरा बेचनेवाला.
मदंध. मदमाते.
मदिरादिक. शराब वग़ैरः.
मधु. पुष्परस.
मधुकर. भौंरा.

मधुप. भौंरा.
मधुपान. भौंरे.
मधुपावलि. भौंरों का समूह.
मधुपालिनि. भौंरों की पंक्ति.
मधुमाते. पुष्परस से मतवाले.
मधू. महुआ वृक्ष का फूल.
मध्य. बीच.
मन. चित्त; चालिस सेर.
मनभावती प्यारी.
मनभावने. मनोहर.
मनमानो. मनके मुताबिक.
मन रंजन. प्रसन्न करनेवाली.
मनसा. मनोवांछित.
मनायक. मनानेवाला.
मनःकृत. मन से किया गया.
मनु. मंत्र.
मनुहारी. मनमाना.
मनेस. स्वेच्छाचारी.
मनोज. कामदेव.
मनोविकार. मनकी बदली हुई अवस्था.
मम. मेरा.
मया. स्नेह.
मयूख. किरिण.
मयूर. मोर.
मयंक. चन्द्रमा.
मरकत. पन्ना, मणिविशेष.
मरगर्जी. मर्दित, अतएव संयोग सूचक.
मरगजे. मर्दित, गर्व्वध्वंस.
मरजनि. भंग करनेवाला.
मरदाने. बहादुर.
मरन्द. पुष्परस.
मराल. हंस.
मरीचिका. किरिण.
मरीची. किरिण.
मरुअ. मरुआ, पुष्पविशेष.
मरू. नायिका.
मरोरै. ऐंठै.
मर्य्याद. इज्जत.
मलमल. एक प्रकार का महीन वस्त्र.
मलय. पर्व्वतविशेष जो दक्षिण मे है,
मलार. रागविशेष.
मलिन. उदास.
मलिंदन. भौंरे.
मल्लिका. चमेली.
मलीन. उदास.
मल्ली. बेला.
मवासो. डेरा.
मसक. मसा, मच्छड़.
मसान. स्मशान, मरघट.
मसाल. मशाअल, उल्का.
मसाला. सामग्री.
महकै. सुगंध आवै.
महती. श्रेष्ठ, बड़ी.
महमही. सुगन्धि से भरी.
महर. प्रधान.
महल. बड़ा मकान, प्रासाद.
महानल. बड़वानल.
महि. पृथ्वी.
महिमा. बड़ाई.
महिपाल. राजा.
मंगल. शुभ.
मंगलमय. शुभपूर्ण.
मंगला. पार्व्वती देवी.
मंजन. स्नान.
मंजु. मनोहर.
मंजुघोषा. अप्सराविशेष.
मंजुल. सुन्दर.
मंड. मद.
मंडन. शृङ्गार करना.
मंडप. मड़वा.
मंडल गोल.
मंडि. शोभित कर.
मंडित. शोभा.
मंदर. पर्व्वतविशेष.

मंदहास. मुस्कुराहट.
मंदिर. मकान, देवालय.
मन्मथ. कामदेव.
माखि. खफा होकर.
माख्यो. खफा हुए.
मार्ची. मची है.
माट. मटका; बरतन.
मातुल. मामा, माता का भाई.
माथे. सिर.
मादक. नशीला.
माद्री. पाण्डुपत्नी.
माधव. विष्णु.
माधवी. पुष्पविशेष.
माधुरी. मीठी, सुन्दर.
माधुरे. मीठे, सुन्दर.
मान. प्रतिष्ठा.
मानवती. माननी.
मानसर. एक झील जो हिमालय पर है.
मानहुँ. मानो, गोया.
मायके. स्त्रियों का पितृगृह.
मार. कामदेव.
मारतंड. सूर्य्य.
मारु. लड़ाई.
मारुत. वायु.
माला. झुण्ड, पंक्ति.
माह. मे, (प्रत्यय).
माहुर. विष.
मांग. द्विधाविभक्त केश की मध्य रेखा.
मिचायो. बन्द किया.
मिजाजनि. गर्व्व से भरी.
मिठाई. मीठे, मधुर.
मित्र. प्रिय और सूर्य्य.
मिथ्या. झूँठा.
मिलन. संयोग.
मिलापी. रसिक, वजाया.
मिसि. व्याज.
मिलित. मिला हुआ.
मिहीचिनी. आँख मुदौवल.
मीजिहौं. मार डालूँगा.
मीड़ि. भीजकर.
मीत. मित्र.
मीन. मछली.
मुकुट. सिरपेंच.
मुकुतन. मोती और मुक्तजन.
मुकुताली. मोतियों की पंक्ति.
मुकुताहल. मोती.
मुकुति. मोक्ष.
मुकुंद. पुरुष का नाम.
मुकुर. दरपन.
मुकुलित. अधखुली.
मुखदिखरावनी. दुलहिन का घूँघट खोलकर मुख दिखलाने की रसम.
मुखाखर मुखाक्षर.
मुद. बन्द किये रहो.
मुदरी. अँगूठी.
मुदित. प्रसन्न.
मुरलीधर. कृष्णचंद्र.
मुलाम. मुलायम, नरम.
मुंड. सिर.
मूंड. सिर.
मूढ़ि. मुट्ठी ; बुक्का ; जादू.
मूढ़े. गुप्त.
मूर. सिर.
मूरति. सूरत.
मूरि. मूल.
मूषक. चूहा.
मृगज. मृगा का बच्चा.
मृगमद. कस्तूरी.
मृगराज. सिंह.
मृगादिक. सावज, पशुगण.
मृणाल. कमल की डांडी या जड़.
मृदु. मुलायम.
मेचक. काला.
मेड़रात. घूम कर उड़ते.

मेद. चर्बी.
मेलि. मिलाकर ; पहनकर.
मेरु. पर्व्वत विशेष.
मेह. मेघ, बादल.
मै. युक्त.
मैगल. मस्त हाथी.
मैन. कामदेव.
मैनका. अप्सराविशेष ; मैना पक्षी.
मोगरे. एक प्रकार के बेले का पुष्प.
मोट. समूह.
मोटी. स्थूल.
मोते. मुझ से.
मोद. ख़ुशी, आनन्द.
मोरपखा. मयूर के पंख.
मोरि. मुड़कर.
मोल. क़ीमत.
मोहित. वश्य.
मौड़ी. मूढ़ बालिका ; नादान.
मौन. चुपचाप, ख़ामोश.
मौर. मौलि, सिर वा मुकुट.
मौलसिरी. पुष्प वृक्ष विशेष.
मौसर. मयस्सर.

(य)

यथाक्रम. सिलसिलेवार.
यथार्थ. ठीक ठीक.
यज्ञाधिपति. यज्ञों के स्वामी.
याके. इसके.
यामिनी. रात.
युगपत. एकही काल मे.
युगल. दोनो.
युवती. तरुणी, जवान स्त्री.
युद्ध. लड़ाई.
युबराई. युवराज की पदवी.

(र)

रक्षण. पालन, बनाये रहना.
रखित. पाले गये.
रचाई. रचना.
रज. चूर्ण, धूर.
रजक. धोबी.
रजनी. हरदी ; रात.
रजपूती. क्षत्रियपन.
रजवती. धूलियुक्ता ; ऋतुमती.
रजाय. आज्ञा.
रटत. चिल्लाते हैं, बार बार कहते हैं.
रति. अनिर्वचनीय प्रीति ; काम की स्त्री.
रतिराज. कामदेव.
रतौंधी. नेत्ररोग विशेष.
रदन. दाँत.
रन. समर.
रनधीर. बहादुर.
रनवास. ज़नानख़ाना.
रनित. बजता हुआ.
रवि. सूर्य्य.
रमक. थोड़ा, हल्का.
रमन. नायक.
रमे. क्रीड़ा किया.
रमेस. विष्णु.
रमै. क्रीड़ा करती.
ररै. बार बार कहता है.
रस. प्रीति ; जल.
रसना. जिह्वा ; रसहीन.
रसवाद. बकवाद.
रसाल. रसीला ; आम का वृक्ष ; रसिक.
रसास्वाद. रस का चखना ; मज़ा.
रहट. जल निकालने का यंत्र, पुरवट.
रहल. पुस्तक धरने की चौकी.
रंक. दरिद्र.
रंचक. ज़रा.
रंजित. शोभित.
राग. ललाई.
रागमई. रँगीले.
रागे. रँगे हुए.
राची. शोभित.

राजी. शोभित ; पंक्ति ; प्रसन्न.
राजे. शोभित होता है.
राते. लाल, सुरख.
रारि. झगड़ा.
रावबुद्ध. एक पुरुष का नाम.
रावरे. आपकी.
रास. कृष्णचन्द्र की लीलाविशेष.
राहु. ग्रह विशेष.
रिझवार. प्रसन्न होनेवाला.
रिसि. क्रोध.
रिसौंहैं. क्रोध से भरे.
रिसौंहीं. खफा हुई सी.
रीझि. प्रसन्न हो.
रीते. शून्य.
रीत्यो. शून्य.
रुख. रुख ; चेहरा ; तरफ.
रुखाई. खफगी.
रुखानो. खफा ; सूखा.
रुखाहट. अफसोस ; रुक्षता.
रुचि. पसन्द ; प्रभा ; शोभा.
रुदन. शब्द ; रोना.
रुद्र. महादेव.
रुनुक झुनुक. झनकार, अनुकरण शब्द.
रुष्ट. खफा.
रुंड. कबन्ध.
रूप. खूबसूरत ; चाँदी ; प्रकार.
रूपयौवनसंपन्न. सुन्दरता और जवानी से युक्त.
रूसिबो. खफा होना.
रूंधन. अवरोध करना.
रेजे. टुकड़े.
रेनी. सनी हुई.
रेल. समूह.
रेला. धक्काधुक्की.
रैनि. रात.
रैयति. प्रजा.
रोचक. प्रसन्न करनेवाला.
रोदन. रोना.
रोदा. प्रत्यंचा, धनुष की ताँत.
रोप्यो. धरा है.
रोमकूप. रोएँ के छिद्र या गढ़े.
रोमराजी. रोमावली.
रोष. क्रोध.
रोस. क्रोध.
रौन. शब्द.
रौस. रविश, वाटिका का.

(ल)

लकुटी. टेढ़ी लाठी.
लखियाँ. देखपड़ी.
लगनि. लगावट, प्रेम, प्रीति.
लगालगी. लगावट, प्रेम.
लगाय. भेजकर.
लगै. दूध देती है.
लघुताई. छोटापन.
लच. झुक कर.
लचाक. लचकीला.
लची. झुकी.
लचीली. नाज़ुक, झुक जाने वाली.
लच्छन. लक्ष्मण.
लच्छि. निशाना.
लजीली. लज्जावती.
लजै. शरमाय.
लटपटी. बेतरतीब.
लटैं. ज़ुल्फ़.
लतिका. छोटी लता.
लपट. अग्नि की ज्वाला.
लफि. झुककर.
लरकैं. लटकती है.
लरको. नीचा हुआ.
लरजि.
लरज. } हिली; धीरे २ बंद करो.
लरवरी. लरखराती हुई.
लरियाँ. लड़ियाँ.
लरैं. झनकार ; पाती.
ललकत. चाह से भरे.
ललकैं. ललचाते.

ललचौहैं. ललचानेवाली.
ललन. नायक ; पति.
ललना. नायिका.
ललित. शोभायुक्त.
लला. छोहरा, प्रायः प्रियतम के अर्थ मे.
ललाट. भाल, लिलार.
ललाम. सुंदर.
ललिता. राधिका की सखी.
लवा. लावा.
लली. लड़की, पुत्री.
लसत. शोभित.
लसति. शोभित होती है.
लसैं. धारण किये.
लहने. पावना.
लहलही. हरी भरी.
लहती. प्राप्त होती, पाती.
लंक. कटि, कमर ; लंका.
लाड़िली. प्यारी.
लालरियाँ. लाल मणि.
लालिमा. सुरखी.
लाह. लाभ, फ़ायदा.
लाँबी. लम्बी.
लिलारन. ललाट, माथ.
लीक. चिन्हानी, दाग़.
लीन. आसक्त.
लीपे. पोते.
लीलि. निगल.
लुकी. छिपी.
लुगाई. स्त्री.
लुगाइन. औरतैं.
लुनाई. सुन्दरता.
लुनियत. काटता है.
लुही. ललचाई.
लुंज. ठूँठ.
लूकैं. तीखी गरम हवा.
लोथैं लाशैं.
लोने. }
लोनी. } सुन्दर, लावण्य युक्त.
लोयन. लोचन.
लोल. चंचल.
लोह. लोहा, अस्त्र शस्त्र.
लौं. तक, (प्रत्यय.)
लौंड़ी. दासी.

(व)

वदनराग. मुख की ललाई.
वयःक्रमानुसार. उम्र के मुताबिक़.
वर्ण. रंग.
वर्णित. वर्णन किया गया.
वर्त्तमान. जो समय गुज़र रहा है.
वशीभूत. अपने आधीन करना.
वहिरिन्द्रिय. बाहर की इन्द्रियाँ.
वाके. उसके.
वादो. वायदा.
वामदेव. महादेव का एक नाम.
वार. चोट.
वारैं. निछावर करती.
वांछित. इच्छा किया हुआ.
विकसित. थोड़ा खिलते हुए.
विकृति. बिगड़े हुए.
विक्षोभ. कम्प.
विज्ञानमय. ज्ञान से पूर्ण.
वितर्क. सोंच, विचार.
विपर्यय. बदल जाना.
विभक्त. तक़सीम किया हुआ.
विरहनिवेदन. वियोग के दुखड़ों को सुनाना.
विवश. आधीन, बे.ख़ुद.
विवेकशून्य. ज्ञान रहित.
विशेष. ख़ास.
विस्तार. फैलाव.
विस्मृति. भूलजाना.
वेपनादि. चमकाना मटकाना वग़ैरः.
वेश्यानुरक्त. रण्डीबाज़.
वै. उदय
वैसियै. उसी तरह.

वैचित्र्य. पागलपन.

(श)

शान्ति. स्वास्थ्य.
शिथिलता. ढीलापन.
शूरता. वीरता.
शृंगारित. सजाया हुआ.
श्रम. मेहनत, थकावट.
श्रव्य. जो सुना जा सकता है.
श्रीफल. बेल वृक्ष का फल.

(स)

सकबंधी. प्रतापी.
सकल. सब.
सकाती. डरती हूँ.
सकानी. संकुचित हुई.
सकुचाने. लज्जित हुए, सम्पुटित हुए.
सकुचि. लज्जा.
सकूप. कूँआँ.
सके. लज्जित, थकित.
सकेलि. सिमटकर.
सक्रुद्ध. क्रोध सहित.
सखान. दोस्तों ने.
सघन. गझिन.
सचान. बाज पक्षी.
सची. इन्द्राणी.
सजन. स्वजन, प्रियतम.
सजनी. सखी.
सजीवन. संजीवनी बिरई.
सज्जनता. भलमंसी.
सज्जित. एकट्ठा करना.
सटकारी. चिकनी.
सटपटी. इधर उधर की, चालाकी.
सटाकेनटा. भट्ट सट्ट.
सत. अच्छा.
सतरैहैं. खफा होगी.
सती. पतिव्रता.
सदन. घर.
सन. एक प्रकार का पौधा.
सनाई. लपेटी, युक्त.
सनाको. एक लय.
सनाथ. कृतार्थ.
सनातन. सदा विद्यमान रहने वाला.
सनार्थी. रक्षा करने वाला.
सनाह. कवच.
सने. मिले.
सनेह. प्रीति.
सपूती. पुरुषार्थता.
सम. सीधी; मुआफिक; नाई.
समताई. बराबरी.
समरत्थहि. शक्तिमान.
समसेरै. तलवारें.
समस्त. सब.
समाज. सभा.
समाधान. हल करना.
समान. सामान्य, आम.
समानता. बराबरी.
समीर. हवा.
समुदाई. समूह.
समेटत. बटोरते.
सयानप. चतुराई.
सयानि. चतुर स्त्री.
सर. झील.
सरकत. धीरे से खसकता है.
सरके. खिसके.
सरत्थहि. रथ सहित.
सरजनि. सिरजना.
सरदार. अगुआ.
सरस. सुन्दर.
सरसात. शोभित होते हैं.
सरसाती. बढ़ाती.
सरसी. झील.
सरसै. अधिक सुन्दर.
सर्व. महादेव, सब.

सर्वस्वत्याग. सब कुछ दे देना.
सर्वांग. हर अङ्गो.
सराबोर. तर, आर्द्र.
सरासन. धनुष.
सराहै. तारीफ़ करती है.
सरि. नदी.
सरिता. नदी.
सरोट. सिकुड़न, शिकम.
सरोज. कमल.
सलाहैं. सम्मति, राय.
सलाक. सलाई.
सलिल. जल.
सलिलगत. जल के भीतर.
सलोनी. सुंदर.
ससि. चंद्रमा.
ससिभाल. महादेव.
ससिरेख. अर्द्धचन्द्राकार नखक्षत.
ससंकित. शुबहे से भरा.
ससेरी. सहमिजाना.
सहकारन. सुगन्धित आम का वृक्ष.
सहजै. स्वाभाविक.
सहस. हजार.
सहसफ़्फण. शेषनाग.
सहसा. साहस.
सहेट. संकेतस्थल.
संक. डर.
संकट. कष्ट, दुःख.
संकित. डरी हुई.
संकुचित. लज्जित.
संकेत. इशारा, प्रिया और प्रियतम के मिलने का नियुक्त गुप्तस्थान.
सँकोच. सिकुड़ना.
संक्रान्ति. सूर्य्य का दूसरे राशि पर जाना.
संक्षेपतः मुख़्तसर, थोड़े में.
संज्ञा. नाम.
सँघाती. साथी.
संघट्टन. प्रिया और प्रियतम का मिलाना.

संचरण. चलना.
संचलित. हिलना.
सँचाय. परीक्षाकर.
संचार. फैलना.
संत. साधू.
संतापित. दुखित.
संतोष. तृप्ति, अलोभ.
संदेश. पैग़ाम.
संपत्ति. धन.
संपा. बिजली.
संपुट. मूबन्द कली.
संपूर्ण. बिलकुल.
संप्रति. इस समय.
संबन्धाभाव. संबन्धरहित.
सँभारे. रोके.
संभावना. मुमकिन.
संमुख. सामने.
संयोग. भाग्य.
संयोगिनि. जिन्का घर पर प्रियतम हो.
संयोगोत्सुक. मिलने की इच्छा से युक्त.
सँवार. सिरजना.
सँवारे. सजाये.
संलाप. बात चीत.
साकार. रूप सहित.
साखा. वृक्षों की डाल.
सागर. समुद्र.
साज. सामान.
साजत. पहनते, बाँधते.
साटी. पतली छड़ी.
सात्विकी. सतोगुणयुक्त.
साथी. सहायक.
सादर. आदर सहित.
साधा. इच्छा, सिद्धि.
सानी. मिश्रित.
सामुहे. सामने.
सार. निचोड़.
सारस. कमल; अलसाने ; पक्षीविशेष.

सारंग. कपूर; दीपक; रागविशेष; वाद्यविशेष.
सारासार. वज्रावल.
सारिका. मैना पक्षी.
सारी. साड़ी.
सारे. सब.
सालत. चुभती है.
साला. गृह.
साले. तकलीफ देते.
सालो. वेधते हो.
सावक. बच्चे.
सावधान. होशियार.
सासा. सन्देह, असमंजस.
सासुरे. ससुराल, वधूगृह.
साह. इमानदार.
साहेब प्रभु.
साहेबी. प्रभुताई.
साँकरी. तंग, चुस्त.
साँकरे. विपत्ति.
साँचे. सच्चे लोग.
साँचो. सचमुच.
साँसति. तकलीफ.
सिकता. वालू; चीनी.
सिखा शिखा, चोटी.
सिखंडी. मयूर, मुरैला.
सिखापन. शिक्षा.
सिखी. मयूर; सखी; शिक्षित.
सिगरे. सब.
सिद्ध. योगफल, अष्ट सिद्धि.
सिद्ध. अणिमादि सिद्धियों से युक्त.
सिधायो. गया.
सिधारे. गये.
सियराई. ठंढा; कदराया.
सियरे. सब.
सिरातु. चुकता है.
सिरिस. सिरसा का फूल.
सिरोमनि. सिरताज.
सिलसिले. भीगा.
सिसिकि. मन्द रोदन.
सिसुतापन. लड़कपन.
सिंधु. समुद्र.
सी करति. पसीने से तर होती है; सिसकार मारती है.
सीझौं. झूँटा निकलूँ.
सीतकर. चन्द्रमा; भीजे हाथ वाला.
सीने. छाती.
सीय. सीता, जानकी.
सीरी. ठंढा.
सीरे. ठंढे.
सील. मुरौव्वत.
सींवे. हद्द.
सुकंठ. सुग्रीव, कपिराज.
सुकी. तूती.
सुकुमार. नाज़ुक.
सुकेसी. अप्सरा विशेष.
सुखदानि. सुख के देनेवाले.
सुखमा. परम शोभा.
सुखसाधा. सुखदायिनी.
सुगेह. अच्छा घर.
सुगैया. अँगिया, चोली.
सुघरै. सुन्दर.
सुचि. पवित्र.
सुजाति. अच्छी ज़ात, अच्छी; चमेली का फूल.
सुजान. चतुर.
सुढार. अच्छा सांचा.
सुतीते. जिसपर शयन होता है.
सुद्ध. साफ.
सुधा. अमृत.
सुधारि. दुरुस्त कर.
सुनारि. सोनार की स्त्री, अच्छी स्त्री.
सुनाकी. नहीं नहीं की.
सुनूर. चमकदार.
सुबरन. सोना और सुन्दर रंग.
सुबस. अच्छी तरह से रहकर.
सुबासता. सुगन्धि.

सुवृत्त. ख़ूब गोल ; उत्तम वृत्तवाले.
सुबेल. पर्व्वत विशेष.
सुभाय. आदत.
सुभाल. बरछा.
सुमति. अच्छी बुद्धि.
सुमन. अच्छा मन और फूल.
सुमिरै. यादकरता है.
सुमेह. अच्छा मेघ, बादल.
सुर. आवाज़.
सुरआपगा. गंगा नदी.
सुरत. सहवास; संभोग.
सुरभी. सुगन्धि; गौ.
सुरली. सुरीली.
सुलगत. भड़कती.
सुलगाइ. जला कर.
सुलभ. मुमकिन.
सुसीलैं. अच्छे स्वभाववाली.
सुहाग. सौभाग्य ; वर का प्रेम.
सुहावनी. शोभायुक्त.
सूक्ष्म. महीन, ना.ज़ुक.
सूझत. देख पड़ता है.
सूत. रसना ; क्षुद्रघण्टिका, कटि का गहना.
सूधे. सीधे.
सूर. सूर्य्य.
सूल. पीड़ा.
सूहे. लाल रंग का एक भेद.
सृङ्ग. चोटी.
सेखर. मस्तक.
सेज. पलँग.
सेजकली. फूलों की कली जिस सेज पर हों.
सेजे. शय्या.
सेत. उज्वल, उजरा.
सेनी. पंक्ति.
सेवक. नौकर.
सेवत. सेवा करना.
सेवती. गुलाब का एक भेद.
सेवन. इस्तेमाल.
सेव्य. स्वामी.
सेस. शेषनाग.
सेंक. गरमी पहुँचाना.
सैन. इशारा.
सोई. सोती हुई.
सोक. अफ़सोस.
सोग. अफ़सोस.
सोध. खोज.
सोनचिरैया. धनी पुरुष.
सोनजाय. सोनजुही पुष्प.
सोनजुही. पुष्पविशेष.
सोनार. सोने का काम करनेवाला, जाति विशेष
सोनित. रुधिर.
सोहाती. सुहावनी.
सौदा. उन्माद ; वाणिज्य वस्तु.
सौध. महल.
सौरभ. सुगन्ध.
सौं. सौगन्ध.
सौंतुख. प्रत्यक्ष.
सौंह. शपथ.
सौंही. सामने.
सौंहैं. शपथ ; सन्मुख.
स्थिति. ठहरना.
स्पष्ट. ज़ाहिर.
स्मरै. यादकरता है.
स्मित. मुस्कुराहट.
स्यानो. चतुर.
स्याम. काला.
स्यामलता. कालापन.
स्यारपन. कादरता.
स्याह. काला.
श्रवन. कान.
स्रुति कान, वेद.
स्रेनी. पंक्ति, क़तार.
स्रौन. कान
स्वच्छंद. स्वतंत्र, आज़ाद
स्वयं. ख़ुद.

स्वयंभू. महादेव, प्रायः ब्रह्मा.
स्वाभाविक. मामूली.
स्वामित. मालिक.
स्वाती. नक्षत्र विशेष.
स्वेच्छापूर्वक. अपनी ही रुचि से.
स्वेद. पसीना.
स्वँग. रूप.

(ह)

हठि. बलात्कार.
हदली. मर्य्याद लिया.
हफनि. हाफना, दम फूलना.
हय. घोड़ा.
हरए. धीरे.
हरजि. रोकते.
हर्षाधिक्य. ख़ुशी की बहुतायत.
हरिवासर. एकादशी तिथि ; कृष्ण से दिन में.
हरियारी. सब्ज़ी; कृष्ण से प्रीति.
हरिहरि. हाय हाय.
हरीरी. प्रसन्न.
हरैं. धीरे धीरे.
हलकम्पित. हिल उठे ; संचलित.
हलकैं. हिलने से.
हलहलत. हील उठता है.
हलाहल. विष.
हस्तामलक. आसानी से समझ पड़ने लायक.
हहरत. हिलता है.
हहरी. डरी.
हाऊ. भयानक वस्तु, हौआ.
हाकिम. हुकुम चलानेवाला.
हाट. बाज़ार.
हाड़ा. क्षत्रियों की एक ज़ात.
हाती. नसागई.
हाथा हाथी. खींचकर, हाथों हाथ, तुरन्त.
हार करिबे. माला पहिनने को.
हारनि. माला.
हाल. वर्तमान मे ; दशा.
हालत. हिलता है.
हाली. जल्दी से.
हाहा. नम्र होकर, बिनती.
हाँकी. हाँ हाँ की.
हित. प्रीति.
हितकारि. हित करनेवाली.
हिताव. हित के.
हितू. हित चाहने वाले, शुभचिन्तक.
हिम. बर्फ़.
हिमाचल. हिमालय पर्व्वत.
हियरा. मन, हृदय.
हियरे. हृदय.
हिलि. मिलकर.
हिलोरि. तरंगित, लहरा.
हिडोरन. झूला.
ही. मे, थी, (प्रत्यय).
हीतल. हृदयस्थल.
हीर. हृदय ; हीरा.
हुतासन. अग्नि.
हुमसि. उठकर रह जाते हैं.
हुलसि. ख़ुश होकर.
हुस्यारपन. चतुराई.
हुँकरत. गरजता है.
हूक. दरद, शूल.
हूकन. चलने लगी.
हेम. सोना.
हेराय. तन्मय, लीन.
हेरि. देखकर.
हेरी. खोजते हैं.
हेलत. दिल्लगी करती है.
हेला. झकझोर.
हेलि. मिलकर.
होड़. बाज़ी ; शर्त.
हौज. कृत्रिम खात.
हौसन. अत्यन्त इच्छा.

वर्णक्रमविषयसूची।

चित्रसूची।

Opinions.

28th September, 1894.

Having been favoured with an inspection of the proof sheets of the work called *Rasakusumakar* prepared by the Hon'ble Maharaja Pratap Narayan Singh of Ajodhya, I have much pleasure in expressing the satisfaction I have felt in the perusal of so carefully written and so comprehensive a work. It deals with a subject of great interest to Indians, and one on which many Europeans will be glad to obtain precise information in a well-ordered form.

A whole literature has been produced on the subject of *Sáhitya* or rhetoric ; and these works, many of which date back to high antiquity, have expounded in various ways the graces or excellences and the emotions or sentiments to which the many kinds of literary composition give expression. The long succession and great variety of these explanatory compositions is a sufficient indication that their authors felt that the subject had not been clearly or fully treated by previous writers ; and it need not therefore occasion surprise that the great development of the Hindi language, which has taken place in recent years, has called forth a rather rapid succession of further works on the same subject.

The defect observable in all the works which have come before me is a want of clearness and method in arrangement ; and some of them seem to have been produced merely to show the author's own skill in illustrating by original verses every style of literary composition. Such attempts are necessarily failures, and have resulted in the mystification of the subject and in a copious production of mediocre verses. It is a pleasure, therefore, to notice that the learned Maharaja has struck out an original course which has removed both of these objections. In the first place, he has arranged

the matter in an exact and scientific manner, the scheme of which has been set out in a tabular form at the beginning of the book. This tabular statement shows clearly the nature and the mutual inter-dependence of the many sentiments to which literature appeals and the passions which it seeks to arouse.

There are about 240 variations of style included in the exposition, each of which possesses peculiar *rasa* or flavour, the definitions and illustration of which are set forth in the fifteen chapters constituting the book. The verses with which the various emotions are illustrated are taken from the writings of poets who have made themselves conspicuous by their facility in rendering the particular emotion under which they are cited. The result of this process of illustrating by citation instead of by fresh composition is that the Maharaja's work is a choice repertoire of excerpts, classified in a way which enables each to be found when needed by aid of the index at the beginning. There are no less than five hundred and fifteen specimens of verse included in the book, most of which are of rare excellence, and which not only exemplify the subject of the book itself, but also show the wide reading of the scholarly author. They comprise selections from nearly one hundred standard Hindi authors.

Another peculiarity of the present treatise is this—the definitions are given in prose. Hitherto it has been the custom to explain all the technicalities in verse ; a process which necessarily rendered their meaning difficult of ascertainment and too frequently left in unintelligible.

It will, therefore, be evident that the work of Maharaja Pratap Narayan Singh is of special excellence and displays much originality of thought, and it may indeed be called the first serious attempt to treat the art of composition in India with really scientific exactitude.

Indian authors have laid down nine primary sentiments as the emotions which impart relish or flavour to literary composition. They may be styled the Erotic, Comic, Pathetic, Wrathful, Heroic, Terrible,

Disgustful, Marvellous and Quietistic. From these primary sentiments thirty-four accessory or transitory emotions arise, such as joy, depression, arrogance &c. &c; and these emotions in their turn occasion ensuant effects which assist in exciting the desired sensation in the heart. In arousing these sentiments the trained writer employs a variety of excitants such as the *dramatis personæ*, the various powers of nature and illustrations drawn from nature, art and society. There are upwards of thirty of these excitants recognised in the first class; and the second class consists entirely of the various aspects under which the hero and heroine may be presented in literature. The hero is allowed to appear under twelve aspects but the heroine has upwards of sixty different methods of presentiment in accordance with the varying sentiments she may awaken. Such are the concomitants of the various sensations which constitute the relish (*rasa*) of literary style. They are defined and exemplified in the first twelve chapters of the Maharaja's volume; and in the last three chapters the primary relishes or flavours and their sub-divisions are set forth with reference to the operations of the subsidiary concomitants previously described.

The foregoing summary makes it clear that the Maharaja's method of treatment is strictly scientific, and that those who wish to understand the somewhat intricate and interesting subject may turn hopefully to these pages. The Maharaja has done his work well and has placed the subject for the first time in a clear and methodical way before his readers. This cannot fail to help them to greater precision of thought on this subject and may do something to give them definiteness of purpose in other matters and thus prove beneficial to India in more ways than one. Just in so far as this book leads the mind of its readers to precision of thought it will prove a stepping-stone to correct appreciation of the practical affairs by which a nation lives and thrives. Loose poetic dreaming has been the bane of India and it is most earnestly to be hoped that a

study of the facts of daily life will speedily supersede the enticing allurements of poetic fiction.

It is encouraging, however, to find one of the leaders of thought in Hindusthan doing something to discipline the inclinations of his compatriots. There can be no doubt that the *Rasakusumakar* of Maharaja Pratap Narayan Singh of Ajodhya is a work of great merit. I have read it with much pleasure, and can cordially recommend it to the perusal of all lovers of Hindi literature.

(Sd.) FREDERIC PINCOTT.

Rasakusumakar is an original Hindi treatise on Sahitya by the Hon'ble Maharaja Pratap Narayan Singh Bahadur of Ayodhya. There is indeed no lack of treatises on this subject which appears to have a great fascination for the Hindu mind. The present work has, however, distinctive features of its own. In the first place, the definitions which constitute the body of the work are here given, not as usual in verse, but in prose, which leads in most cases to a considerable gain in clearness and conciseness. And in the second place the collection of poetical passages which serve to illustrate the definitions is an unusually rich one. More than hundred poets have been put under contribution, and the selection has been made with excellent taste and judgment. Moreover, the author has, in a number of not unimportant details, improved on the prevailing theory of the subject in a manner showing that he has deeply entered into the spirit of the Shastra and submitted all its distinctions and definitions to a very careful scrutiny. To this must be added the extraordinary care which has been bestowed upon the get up of the publication. Paper and type are excellent, and the attractiveness of the book has moreover been much enhanced by the insertion of a great number of full plate illustrations

among which those reproducing the work of native artists are the most valuable and curious. But also among those which are reproductions of photographs—mostly meant to illustrate the different passions and emotions as described in the text—there are several by no means deficient in interest.

The Shástra of which the Rasakusumakar contains an exposition affords a curious instance of the fondness of the Hindu mind for subtle distinctions and classifications. The same rigorous analysis, to which the follower of the Nyáya subjects the logical operations of the understanding, is here unsparingly applied to the softer emotions of the mind, especially to all those connected with love, and the result not unfrequently strikes the European reader as somewhat incongruous. Works of this kind, however, throw a good deal of light on certain peculiarities of thought and feeling which are deeply rooted in the Hindu mind. And often strikingly re-assert themselves against the influence of foreign literature and education.

We may express a hope that the example set by H. H. the Maharaja of Ajodhya, in not only patronizing the polite literature of his country in the ordinary languid way but devoting to it actual labour and thought, may be followed by other persons of influence and means. The illustrations which embellish the book moreover suggest the idea of good editions of the most important works of Hindi and Sanskrit poetic literature—such as the Sakuntalá, Vikramorvasi etc.—being brought out in a similar style; an undertaking that would no doubt be warmly welcomed by all lovers of indigenous literature.

(Sd) G. THIBAUT, PH. D.

Officiating Principal, Muir Central College,

Allahabad.

सम्मतिमाला।

पारलियामेण्ट महती सभा के माननीय सभासद श्री फ्रेडरिक पिनकाट की सम्मति का भाषानुवाद ॥

आनरेबिल श्री महाराज प्रताप नारायण सिंह अयोध्यानरेश विरचित "रस-कुसुमाकर" ग्रन्थ के प्रूफ़ देखने का अवसर मिलने, और ऐसी सावधानी से लिखे गये सुविस्तृत ग्रन्थ के पढ़ने से परम संतोषप्राप्ति को सहर्ष प्रकाश करता हूँ. इसमे ऐसे विषय का वर्णन है जो भारतीयों को परम रोचक है; और सुविन्यस्त क्रम होने के कारण युरपवासियों को भी यथार्थ विषय बोध होना सुलभ होगा ॥

एक शास्त्र का शास्त्र साहित्य विषय पर बन गया है; जिन्मे से अनेक ग्रंथ तो अत्यन्त प्राचीन हैं, और नाना रीति से भिन्न २ काव्यों के गुण वा प्रकर्षता एवं भाव वा रस का निरूपण करते हैं. इन निरूपक रचनाओं की प्रलम्ब परम्परा और बहुल भेद से यह प्रत्यक्ष झलकता है कि उन्के रचयिताओं ने समझा कि साहित्य विषय को पूर्ण वा स्पष्ट रीति से उनके पूर्व्व साहित्यकारों ने नहीं कह पाया है; अतएव यह कुछ भी आश्चर्यजनक नहीं है कि हिन्दी भाषा के यथाक्रम नवीन प्रचार के साथ ही साहित्य के ऐसे ग्रन्थों का भी पूर्व्वापेक्ष बृहद्-विस्तार हुआ ॥

जहाँ तक मैने देख पाया है, इस प्रकार के ग्रन्थ स्पष्टता और क्रमविन्यास से वंचित हैं, और कतिपय तो ऐसे कि जिन्मे कवियों ने स्वकल्पितपद्यद्वारा साहित्य

की प्रत्येक संज्ञाओं के उदाहरण संघटन मात्र की चातुरी दिखलाई है. ऐसे प्रयत्नों का परिणाम अवश्य फलशून्य, तथा मूल विषय का और भी दुर्व्वोध हो जाना, एवम् प्रचुर प्राकृतिक पद्यों का प्रादुर्भूत होना सहज सुलभ हुआ. अतएव हर्ष का विषय है कि विबुध महाराज ने एक ऐसी नूतन शैली का अवलम्बन किया, जिस्से दोनो दोष दूर हो गये ॥

पहिले तो यह कि महाराज ने वैज्ञानिक रीत्यनुसार पूर्वोक्त विषय को यथाक्रम स्थान देकर ग्रन्थारम्भ ही मे अनुक्रमणिकाद्वारा दिखलाया है, जिस्से प्रायः अनेक मनोविकार और काव्यशास्त्रवर्णित रसों के धर्म्म और परस्परावलम्बन विस्पष्ट प्रगट होते हैं ॥

इस विवरण मे न्यूनाधिक २४७ संज्ञा भेद संकलित हैं, जो प्रत्येक विशेष रस वा स्वाद से पूरित हैं, और जिन्के लक्षण तथा उदाहरण इस पंचदशाध्यायात्मक ग्रन्थ मे कहे गये हैं. नाना मनोविकारद्योतक पद्य जो कि इसमे उदाहृत हैं उन कवियों की कविता से संकलित हुए हैं जिन्की ख्याति प्रायः इस ढङ्ग की कविता मे विदित है. उदाहरणों का नूतन निर्माण न कर अन्य कविताओं से उद्धृत करने की शैली से यह फल हुआ कि महाराज का ग्रन्थ उत्तमोत्तम उदाहरणों का कोष सा हो गया, जिन्का पता आदि सन्निवेशित "पद्य सूची" द्वारा सुगमता से लोग पा सकते हैं. ५३५ पद्य से न्यून इस पुस्तक मे नहीं हैं, जिन्मे अनेक तो अनुपम छटा के हैं, जो कि न केवल लक्षणों के उदाहरण दिखाते वरन ग्रन्थकर्त्ता के बहुश्रुत होने का प्रमाण बतलाते हैं. इसमे लगभग शत प्रशस्त कवियों की कविता संगृहीत है ॥

दूसरी विशेषता इस पुस्तक मे यह है कि इसमे लक्षण गद्य मे हैं. अद्याावधि साहित्य की परिभाषाएँ पद्य ही मे निर्मित की जातीं थीं जिस्से कि कतिपय स्थानो पर सन्दिग्ध होना और प्रायशः अर्थ का लगना भी कठिन हो जाता था. अतएव यह स्पष्ट है कि महाराज प्रताप नारायण सिंह का ग्रन्थ विशेष गुणो से भूषित और विचित्र कविकल्पनाशक्ति सूचित कराता है; और यह

भी कहना कदाचित् अन्यथा न होगा कि भारतवर्ष मे प्रथम ही यह प्रयत्न वैज्ञानिक रीत्यनुसार विषय वर्णन का किया गया. भारतीय ग्रन्थकारों ने मनोविकारानुरूप ९ मूल रस माना है, जिस्से कि कविता मे रस वा स्वाद का उद्गार होता है; उन के नाम शृङ्गार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शान्त हैं. इन मूल रसों से ३४ सहकारी (संचारी) वा क्षणिक मनोविकारों का उदय होता है, यथा हर्ष, विषाद और गर्वादिक और ये मनोविकार अपनी आवृत्ति मे आगामि प्रभाव (अनुभाव) उत्पन्न करते जो कि अभिवाञ्छित मन की दशा के उत्थापन मे सहायता देते हैं. इन रसों के उत्पादनार्थ सुशिक्षित ग्रन्थकार ने नाना प्रकार के उद्दीपन गिनाये हैं, यथा नाट्यपात्र (विदूषकादि), प्रकृति की भिन्न शक्तियां (ऋतु पवनादि), तथा प्रकृतिकला और समाज से उपलब्ध दृष्टांत. एवं तीस प्रकार से कुछ अधिक प्रोत्तेजक वस्तु (विभाव) प्रथम श्रेणी मे तथा द्वितीय श्रेणी मे नायक और नायिकाओं के भिन्न रूप, जैसा कि कविता मे दिखाया जासकता है, दिखाये गये हैं. नायक १२ प्रकार के दिखाये गये हैं, किन्तु भिन्न २ भावनासमुत्पादनानुसार नायिकाओं के ६० से कुछ अधिक प्रकार दिखाये हैं. इन विविध मनोविकार के सहचारियों से कविता मे रस वा स्वाद उत्पन्न होता है. इन सबों के लक्षण और उदाहरण महाराज ने ग्रन्थ के प्रथम १२ अध्यायों मे और पिछले ३ अध्यायों मे मूलरस वा स्वाद तथा उनके अवान्तरभेद, उन समस्त पूर्व कथित सहचारियों की सहायता से निर्मित होता है, वर्णन किये गए हैं॥

पूर्वोक्त संक्षिप्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि महाराज की वर्णनक्रमशैली वैज्ञानिक रीति मे ढली है; और जो लोग इस गूढ़ और मनोहर विषय के जिज्ञासु होवें सहर्ष इस पुस्तक के पृष्ठावलोकन करैं. महाराज ने बड़ी सावधानी से इस पुस्तक की रचना की है, और यह प्रथम ही वार है जब कि यह विषय स्पष्ट और क्रमानुबद्ध होकर पाठकों को उपहार मिला. इस्से पाठकों को इस विषय पर व्यक्त मनन करना किंचित दुष्कर न होगा, वरन अन्य विषयों मे भी निश्चितार्थता को प्राप्त कराकर भारत को न केवल एक किन्तु अनेक

प्रकार से कल्याणप्रद होगा. जैसे कि यह पुस्तकी पाठकों के मन को निश्चितार्थता को प्राप्त करती, वैसे ही यह कदाचित् व्यवहारज्ञान के यथार्थ गुणग्रहण की भी सोपान सरीखी हो, जिस पर की देश की स्थिति और उन्नति निर्भर है. (आधुनिक) असम्बद्ध काव्यकल्पना से भारत का सर्वनाश हुआ, और अब सोत्कण्ठ आशा की जाती है कि काव्यकल्पना के लुभावने आकर्षण के स्थान पर जीविनी के नैमित्तिक वृत्तों का परिशीलन होगा ॥

इस्से परम आश्वासन होता है कि भारतवर्ष के अग्रगण्य विचार कर्त्ताओं मे से एक ने स्वदेशवासियों के प्रवृत्तिप्रवाह को सुधारने की चेष्टा कर रहे हैं. इसमे कुछ भी संदेह नहीं कि महाराज प्रताप नारायण सिंह विरचित रसकुसुमाकर नामक ग्रन्थ प्रशस्त गुणों से पूरित है. मैने इसे सहर्ष देखा है और समस्त हिन्दी भाषा के प्रेमियों के पठनार्थ हृदय से प्रबोधन करता हूँ ॥

२८ सितम्बर १८९४ } (ह.) फ्रेडिरिक पिनकाट०

म्योर सेन्ट्रेल कालिज के आफिसियेटिंग प्रिन्सिपल डाक्टर जी. थीबो की सम्मति का भाषानुवाद ॥

अयोध्या के महाराज प्रताप नारायण सिंह वीरेश विरचित " रसकुसुमाकर " हिन्दी भाषा का एक स्वतन्त्र निबन्ध साहित्य विषय पर है. यद्यपि इस विषय पर निबन्धों का न्यूनता नहीं है, जिस से सूचित होता है कि यह ग्रन्थ हिन्दुओं को परम रोचक है ; तथापि यह ग्रन्थ अपने अनूठे ढंग का है. पहिले तो इस पुस्तक का अंगभूत लक्षण, पद्य मे नहीं, वरन गद्य मे है, जिस्से अनेक स्थलों पर स्पष्टता और संक्षिप्तता प्राप्ति हुई. दूसरे लक्षणों के उदाहरण मे जो पद्यों का संग्रह हुआ वह अत्यन्त प्रशस्त है. इसमे शत से अधिक कवियों की कविता संगृहीत है और संग्रह भी बहुत ही रसज्ञता और बुद्धिमानी के साथ

किया गया है· तथाच ग्रन्थकर्त्ता ने अनेक आवश्यक भेद प्रभेद मे प्रचलित मत से विशेष उत्कर्षता दिखलाई है· जिस्से कि ग्रन्थकार का साहित्यशास्त्र मे तत्वविद् होंना, एवम् उस्के लक्षण और भेदों की भरपूर जाँच करना प्रत्यक्ष प्रगट है· साथ ही इस्के इस पुस्तक की तैयारी मे भी असाधारण सावधानी दिखाई गई है· काग़ज़ और अक्षर विस्पष्ट और उत्तम हैं, तथा पूर्ण प्लेट मय चित्रों के सन्निवेश होने से ग्रन्थ और भी रोचकता को प्राप्त हो रहा है, जिस्मे देशी शिल्पकारों के उतारे चित्र अपूर्व और अमूल्य हैं, और उन्में भी जो छायाचित्र द्वारा लिये गये हैं—जिन्का प्रयोजन भाव वा रस प्रदर्शन मात्र है—स्वारस्य से वंचित नहीं हैं॥

जिस शास्त्र का व्याख्यान "रसकुसुमाकर" मे किया गया है, उस्से हिन्दुओं के सूक्ष्म भेद और वर्ग क्रमविन्यास की अपूर्व अनुरक्ति लक्षित होती है· जैसे कि न्यायशास्त्र के अनुगामी न्यायरीत्यनुसार बुद्धि के व्यापार का सूक्ष्म विभाग किया है, वैसा ही यहाँ मन के मृदुल विकारों को भी विभक्त किया है, विशेषतः प्रेम (शृङ्गार) सम्बन्धी, जोकि प्रायशः यूरप निवासियों को असंगत सा जान पड़ता है· तथापि इस प्रकार के निबन्धों से हिन्दुओं के दृढ़ीभूत भावना और मनोविकार के गुण प्रदर्शित होते, एवम् विदेशीय विद्या और शिक्षाप्रभाव के प्रतिकूल गुण प्रायः प्रतिपादित होते हैं॥

हम लोग आशा करते हैं कि जैसे तत्रभवान् श्री महाराज अयोध्या नरेश ने स्वदेशीय सभ्य भाषा को न केवल सामान्य सन्द रीति से पोषण किया किन्तु उस्मे वास्तविक व्यसाय और विचार विनियोग किया, वैसे ही और भी महानुभाव और शक्तिमान् लोग इस प्रशस्त पथ का अनुकरण करैंगे· अपरञ्च इस पुस्तक की शोभाहेतु चित्रों को देख यह भी लक्षित होता कि कदाचित् हिन्दी और संस्कृत के उत्तमोत्तम विख्यात ग्रंथ—जैसे शकुन्तला, विक्रमोर्वशी आदि—के भी एसी ही सुन्दर आवृत्ति होंगे, जिस व्यापार को निस्सन्देह समस्त स्वदेशीय विद्यारसिक सादर स्वागत देंगे॥

(ह०) जी, थीबो, पी· एच, डी०

महामहोपाध्याय श्री पण्डित सुधाकर द्विवेदी ज्योतिषाचार्य्य संस्कृत कालेज बनारस॥

---o---

जयति सदा रघुराज इह राजति यच्चरितानि।
राजीवायतलोचनो नाशयन्ति दुरितानि॥
श्रीमदयोध्याधिपतिकृत रसकुसुमाकर नाम।
समवाप्याद्य सुधाकरः स्वमतं लिखति ललाम॥

मेरी सम्मति मे श्रीमदयोध्यानगराधीश विरचित रसकुसुमाकर को हिन्दी भाषा मे सब से प्रधान साहित्य का ग्रन्थ कहना चाहिये; क्योंकि इस से पूर्व्व ऐसा कोई ग्रन्थ नहीं देखने मे आया जिसमे इस प्रकार से स्पष्ट सब साहित्य के भेद लिखे हों॥

वास्तव मे सहृदय विद्वान् लोग यदि इस ग्रन्थ को ध्यान पूर्वक देखैंगे तो इस मेरी उक्ति को अत्युक्ति न समझैंगे कि "इस विलक्षण रीति से साहित्य संवन्धिगहन विषयों के लक्षणों को हिन्दी गद्य मे प्रकाश करना, स्थान स्थान पर सदुदाहरणों को दिखाना और विशेष विशेष स्थलों मे सच्चित्रों के द्वारा रसिकों के अन्तःकरण मे निर्द्दिष्ट भावों को खचित कर देना, ... इत्यादि॥

इस ग्रन्थ मे ऐसे ऐसे उत्तम गुण हैं, जिन्के कारण ग्रन्थकर्ता को जितना धन्यवाद दिया जाय सब थोड़ा है. सत्य तो यह है कि बिना ऐसे अपूर्व ग्रन्थ के पढ़े हिन्दीमे साहित्याचार्य पदवी पाना अत्यन्त दुर्घट है॥

दोहा।

सुधा सरिस रस बरसि जग हर्षित करत सचित्र।
रसकुसुमाकर लसत यह सब रस पूरित मित्र॥

बनारस
१४ नवेम्बर १८९४ ई०

(ह.) सुधाकर द्विवेदी.

विचित्र वनक वनाये इस वर्ष वर्षा के विशेष विलम्ब तक विद्यमान रहने का वर्णन व्यर्थ है, कि समस्त शरद समाप्त होने तक सावनहीं का सा सुहावना समा सूझता रहा, और कैसा, कि जैसा,—

"पावस वन अँधियार मैं रह्यो भेद नहिँ आन ।
रैन दिवस जाने परैं लखि चकई चकवान ॥"

में सन्ध्या की सन्ध्या कर जिस सन्ध्या को सघन श्याम घनाच्छादित आकाश की शोभा देखता कह रहा था, कि—देखो "घुमड़ि घुमड़ि घन घोर की घनेरी घटा गरजि गई तौं, फेरि गरजन लागीं री।" चंचला ने अचांचक चमक कर लोचनों को वह चकाचौंध दी, कि चट नीचा सर कर सोचने लगा, कि भला यह चकम उन सुकुमारी बिचारी वियोगिनी विधुवदनियों पर क्या वितायेगी जो योंहीं दामिनी की दमक देख दुहाई देतीं, कि—

"अरी घुमरि घहरात घन चपला चमकन जान ।
कुपित काम कामिनिन पर धरत सान किरपान ॥"

वा जिन्की सखियों की यह सीख है,—न कर निरादर पिया सों मिलि सादर सुआये वीर वादर बहादुर मदन के।" इतने में धम से आगे, डाक आ उपस्थित हुई, जिस्में अनेक पत्र पत्रियों के संग एक विशाल पुस्तक भी लखाई पड़ी. कर ने विलम्ब न कर उसी का स्वागत स्वीकार कर नेत्र के आगे से आवरण पत्र का पर्दा उठाई तो दिया. बस अद्भुत परिवर्तन होगया ! देखा तो वर्षों का अभिलषित "रसकुसुमाकर" आया है !!! फिर क्या चंचल चंचरीक चित को चैन कहां ? प्रत्येक कुसुम का चुम्बन कर चला, और उन्के मञ्जुल आमोद से मोहित एवम् महामधुर मकरन्द पान से मत्त और तृप्त होगया !

निस्सन्देह 'रसकुसुमाकर' यथार्थ रसकुसुमाकर है. इस ग्रन्थ के निर्माण कर्त्ता आनरेबिल श्रीमन्महाराज प्रताप नारायण सिंह देव वीरेश अपने श्रम मे पूर्णतः कृतकार्य्य हुए हैं, और उसके द्वारा उन्होंने मातृभाषा भक्तों को विशेष उपकृत और अनुगृहीत किया है; यह सबी सहृदय मुक्तकण्ठ से स्वीकार करेंगे. और इस में सन्देह नहीं कि—हमारी भाषा साहित्य के इस अंश मे समयानुसार जिस प्रकार के ग्रन्थ की आवश्यकता थी, यह ठीक वैसा ही बना. और प्राचीन

विषय को नवीन रीति भांति और शैली से युक्त कर ग्रन्थकार महाशय वर्तमान रुचि को भी यहां भली भांति आश्रय दे सके हैं॥

सम्प्रति गद्य और पद्य की भाषा में विभिन्नता होने से यह ग्रन्थ मानो उभय अंश का उत्तम आदर्श होगया है. क्योंकि उदाहरण के अतिरिक्त मुख्य ग्रन्थांश उमत्त गद्य में होने से अत्यन्त अपूर्वता आई है. इस चाल के प्राचीन ग्रन्थों में जहां देखिये तहां "तासों अमुका नायिका बरनत हैं कविराय।" पढ़ते २ चित्त ऊब जाता था, क्योंकि लक्षण के छन्दों में कदापि कुछ कविता का स्वाद नहीं आता. योंही अनेक सत्कवियों के उदाहरण के संग्रह के कारण ग्रन्थ विशेष रोचक और मनोहर हुआ है, जो एक कवि के रचना में सचमुच सर्वथा असम्भव है, फिर विशेषता यह है कि एक उत्तम उदाहरण के स्थान पर यहां अनेक मिलते, और भिन्न २ कवियों के भाव तथा उनकी शक्ति का परिचय देते, और उनमें विशेष श्रद्धा भी उत्पन्न कराते हैं॥

सुतराम् रस वा नायिकाभेद के एक पुष्ट और प्रमाणित ग्रन्थ बन जानेके अतिरिक्त रसकुसुमाकर अपने चाल के समस्त ग्रन्थों का सत्त सा बनकर, वह एकही ग्रन्थ मानों अनेकों का कार्य्य देता है; क्योंकि प्रायः सब का उत्तमांश इसमे संगृहीत होगया है. एवम् अनेक अन्य प्रकार के ग्रन्थों से भी छन्दों के संगृहीत होने से हमारी भाषा के प्रायः प्रसिद्ध २ कवियों के अधिकांश उत्तम काव्यों के सामान्य संग्रह का भी कार्य्य देता है॥

प्रबन्ध इसका उत्तम है, छपाई आदि का कहना हीं क्या है, और चित्रों का सन्निवेश तो 'सोने में सुगन्ध' हो गया है. ग्रन्थ के सरल होने और पाठकों के सुगमता के लिये कोई उद्योग छोड़ा नहीं गया है, और वह पूर्णतः सुसम्पन्न हुआ है. यथा—अनुक्रमणिका, विषयानुक्रम, संक्षिप्त पद्यसूची, वर्णक्रम विषय-सूची, शब्दकोष आदि के योग से. अनुक्रमणिका बहुतही उपयोगी और उत्तम हुई है, और टिप्पनी रहते भी कोष का सन्निवेश विशेष उपकारक है, क्योंकि हमारी भाषा के काव्यों मे अनेक अन्य प्रादेशिक भाषाओं के मिले रहने से बहुतेरे शब्दों का यथातथ्य अर्थज्ञान प्रायः योग्य जनों को भी नहीं होता॥

हम अपने माननीय महाराज के उस परिश्रम की कहां तक प्रशंसा करें, जो इसके निर्माण में उन्हें उठानी पड़ी होगी; क्योंकि वस्तुतः वह बहुतही अधिक है, विशेषतः इतने अल्प अवसर मे, औरऐसे श्रीमन्तों के लिये !

इस अमूल्य उपहार को पाकर हम जितने कृतज्ञ, वा उसे पढ़ प्रसन्न हो ग्रन्थकर्त्ता महाशय को अनेक धन्यवाद देते हैं, उस्से अधिक उनके उस सत्संकल्प के लिये, कि जो श्रीमान् ने एक अन्य नवीन ग्रन्थ व्यंग्यालंकारके निर्माण करने का किया है. निश्चय यदि कुछ दिन महाराज ने अपनी मातृभाषा की योंहीं सेवा की, तो अवश्य उसकी दशा सराहनीय हो जायगी; क्योंकि योग्य शक्तिमानों के द्वाराही सब कार्य्य उत्तमता से सिद्ध होते हैं. ईश्वर उक्त श्रीमान् की अभिलाषा पूर्ण करे, और सदैव उनके हृदय को ऐसेही सत्संकल्पों से सम्पन्न रक्खे॥

उपाध्याय

श्री बदरीनारायण शर्म्मा, चौधरी,

मिरजापुर.